हिन्दी-ग्रन्थरत्नाकर-सीरीजका ७ वाँ ग्रन्थ ।

मितव्ययता

अर्थात्

गृहप्रबन्ध-शास्त्र ।
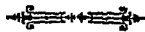
इंग्लैण्डके प्रसिद्ध विद्वान् डा० सेमुएल स्माइल्सके
' थिरिफ्ट ' नामक अँगरेजी ग्रन्थके
आधार पर लिखित ।

लेखक-
बाबू दयाचन्द्रजी गोयलीय, बी. ए.

प्रकाशक-
हिन्दीग्रन्थरत्नाकर कार्यालय-बम्बई ।

वैशाख १९७५ वि० ।

तृतीयावृत्ति ।] मई, सन् १९१८ ई० [मूल्य पन्द्रह आने ।

संपादक और प्रकाशक—

नाथूराम प्रेमी,

मालिक,

हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,

हीराबाग, गिरगाँव, बम्बई।

मुद्रक—

मंगेशराव नारायण कुळकर्णी,

कर्नाटक प्रेस,

नं० ४३४, ठाकुरद्वार, बम्बई.

आदर्श कहानी।

एक मच्छर जाड़ेके दिनोंमें सरदी और भूखसे तंग आकर शहदकी मक्खियोंके पास गया और बोला,—"कृपा करके मुझे थोड़ासा मधु (शहद) दे दो; मैं भूखके मारे मरा जाता हूँ।" यह सुनकर एक मक्खीने पूछा,—"तुमने सारी गर्मी कैसे बिता दी? उन दिनोंमें तुमने जाड़ेके लिए एकट्ठा करके क्यों न रक्खा?" मच्छरने उत्तर दिया,—"मैंने सारी गर्मी इधर उधर घूमने और गाने बजानेमें बिता दी, उस समय जाड़ेका कुछ खयाल ही न किया।" इस पर मक्खीने कहा, "आप अपना रास्ता लीजिए। हमारा नियम दूसरा है। हम गर्मीमें कड़ी मेहनत करते हैं और जाड़ेके लिए जमा करके रखते है। जो गर्मीमें, कुछ नहीं करते, केवल इधर उधर निठल्ले फिरा करते हैं, उनको जाड़ेमें भूखों मरना ही चाहिए।"

अर्थ-समुद्देश ।

यतःसर्वप्रयोजनसिद्धिः सोऽर्थः । सोऽर्थस्य भाजनं योऽर्थानुबन्धेनार्थमनुभवति । अलब्धलाभो लब्धपरीक्षणं रक्षितविवर्धनं चेत्यार्थानुबन्धाः । तीर्थमर्थेनासम्भावयन्मधुछत्रमिव सर्वात्मना विनश्यति । धर्मसमवायिनः कार्यसमवायिनश्च पुरुषाः तीर्थम् । तादात्विक-मूलहर-कदर्येषु नासुलभः प्रत्यवाय । यः किमप्यसश्चित्योत्पन्नमर्थमपव्ययति स तादात्विकः । यः पितृपैतामहमन्यायेनानुभवति स मूलहरः । यो भृत्यात्मपीडाभ्यामर्थं सञ्चिनोति स कदर्य. । तादात्विकमूलहरयोरायत्यां नास्ति कल्याणम् । कदर्यस्यार्थसंग्रहो राजदायादतस्कराणामन्यतमस्य निधिः ।—श्रीसोमदेवसूरिकृतनीतिवाक्यामृतस्य ।

जिससे मनुष्यके समस्त प्रयोजनोंकी सिद्धि हो सकती है-सारी जरूरतें मिट जाती हैं, उसे अर्थ या धन कहते हैं । धनका पात्र अथवा अधिकारी वही हो सकता है, जो धनको अर्थानुबन्धपूर्वक भोगता है । (धनका कमाना, कमाये हुए धनकी भली भाँति रक्षा करना और रक्षित धनको बढाते रहना, इन तीन बातोंको अर्थानुबन्ध कहते हैं ।) धनको धर्मसम्बन्धी और समाजसम्बन्धी परोपकारादि कार्य करनेवाले पुरुषोंकी सेवा तथा भरणपोषणमें खर्च करना चाहिए । ये लोग एक प्रकारके तीर्थ हैं । क्योंकि इनसे दूसरोंका कल्याण होता है-दूसरोंको ये कष्टसे बचाते हैं । जो धन तीर्थोंकी सेवामें नहीं लगता, वह शहदके छत्तेकी तरह आप ही नष्ट हो जाता है-किसीके काम नहीं आता । तादात्विक, मूलहर और कदर्य पुरुषों पर कष्टोंका आ पड़ना बहुत सहज है । (जो कमाता तो है परन्तु उसमेंसे कुछ भी जमा न करके सबका सब खर्च कर डालता है, उसे तादात्विक कहते हैं । जो अपने बाप दादाओंके धनको अन्यायके साथ उड़ाता है, उसे मूलहर कहते हैं और जो अपने नौकरों चाकरोंको तथा स्वयं अपने शरीरको भी कष्ट देकर कजूसीसे धन जमा करता है—न आप खाता है और न दूसरोंको खाने देता है, उसे कदर्य कहते हैं ।) इनमेंसे पहले दो प्रकारके मनुष्योंको तो आगे दुःख भोगने पडते हैं और अन्तके कदर्यका एकत्र किया हुआ धन राजा, हिस्सेदार और चोर इनमेंसे किसी एकके काम आता है ।

—नीतिवाक्यामृतसे ।

प्रस्तावना ।

(प्रथमावृत्तिसे)

डाक्टर सेमुएल स्माइल्सका जन्म हैडिंगटनमें २३ दिसम्बर सन् १८१२ ई० को हुआ । ये ११ भाई बहिन थे । इनकी प्रारंभिक शिक्षा स्थानीय ग्रामर स्कूलमे हुई । १४ वर्षकी उमरमे इन्होंने एक डाक्टरी दूकानमें नौकरी कर ली । मि० लेविंस इस दूकानके एक हिस्सेदार थे। सन् १८२९ में वे लीथ चले गये और सेमुएल स्माइल्सको भी अपने साथ लेते गये । सेमुएलने वहाँ थोड़े ही दिन रहकर मेट्रिकुलेशनकी परीक्षा पास कर ली और डाक्टरी कालेजमें नाम लिखा लिया । परिश्रमके बलसे आपने सन् १८३२ में डाक्टरीकी परीक्षामें सफलता प्राप्त की और चिकित्सा करनेका सरटीफिकट पाकर एडिनबर्गमें डाक्टरी करना शुरू कर दिया । परन्तु इस व्यवसायमें यथेष्ट आमदनी नहीं हुई, इस लिए इसे छोड़कर आपने रसायनविद्या और स्वास्थ्यरक्षा आदि विषयों पर सार्वजनिक व्याख्यान देना और पत्रोंमें लेख लिखना प्रारम्भ किया । इसमें आपको अच्छी सफलता हुई—खासी आमदनी होने लगी । सन् १८३७ में आपने 'फिजिकल एजुकेशन' नामकी एक पुस्तक लिखी । इसकी आपने ७५० कापियाँ छपाइं । ये बहुत विलम्बसे बिकीं । इसे बहुत ही कम लोगोंने पसन्द किया, बहुतोंने तो निन्दा तक कर डाली । सन् १८३८ में आप लन्दन गये और वहाँ लीडस नामक पत्रके सम्पादक हो गये । यह काम आपने लगभग चार वर्षतक किया । इसके बाद सन् १८६६ तक आप दो रेलवे कम्पनियोंके क्रमसे उपमंत्री और मंत्री रहे। १८६७ में आप नेशनल प्राविडेंट सोसाइटीके सभापति हो गये और १८७१ तक रहे । इस बीचमें आपने राजनीतिक और सामाजिक सुधारोंकी ओर जी लगाया और जितना समय मिला उसमें परिश्रमी पुरुषों और निर्धन साहसी विद्यार्थियोंके जीवनचरित लिखे । ये जीवनचरित कई जिल्दोंमें प्रकाशित हुए हैं।

आपकी सबसे प्रसिद्ध पुस्तक 'सेल्फ हेल्प' या 'स्वावलम्बन' सन् १८५९ में प्रकाशित हुई । इसमें बड़ी भारी सफलता हुई । इसकी २० हजार प्रतियाँ पहले ही सालमें बिक गईं । आगे भी इसकी बहुत खप हुई है । सन्

पुरुषको यह अवश्य जानना चाहिए कि किस तरह धन पैदा किया जाता है, किस तरह खर्च किया जाता है और किस तरह बचाया जाता है। जो मनुष्य सेंट पालकी तरह बचाना और जमा करना जानता है, वह वास्तवमें बड़ा विद्वान् है।

" प्रत्येक मनुष्यको अपनी स्थितिको सुधारने और स्वाधीनता प्राप्त करनेके लिए यथाशक्ति उद्योग करना चाहिए। इसके लिए उसका कर्तव्य होना चाहिए कि वह अपनी आमदनीमेंसे कुछ बचाकर रखता जाय। मनुष्य अपनी आजीविका श्रमसे करता है। श्रमसे ही उसे यह जानना चाहिए कि मैं किस तरह जीवननिर्वाह करूँ। मितव्ययता, दूरदर्शिता और निःस्वार्थताके अभ्याससे ही स्वाधीनता मिल सकती है। न्यायशील और उदारचित्त होनेके लिए अपनी इच्छाओंके रोकने और इन्द्रियोंको दमन करनेकी आवश्यकता है। (उदारताका मूल तत्त्व स्वार्थत्याग और आत्मनिर्भरता है।)

" इस पुस्तकका सार यह है कि मनुष्य अपनी शक्ति, अपने श्रम, अपने उद्योग और अपने धनको स्वार्थपरता और वासनाओंकी तुष्टिमें न लगाकर अच्छे कामोंमें लगावे। इसके लिए आलस, अविचार, अहकार, अविवेक, असंयम आदि अनेक अरियों या शत्रुओंका सामना करना पडता है। इनमेंसे असंयम सबसे बुरा और बडा शत्रु है। इस पुस्तकमें इन सब शत्रुओंपर विजय पानेके सैकड़ों उपाय बतलाये गये हैं। हम आशा करते हैं कि पाठकगण उन उपायोंको अवश्य ही काममें लायँगे।"

" जिस समय मैंने पहले पहल इस ग्रन्थका लिखना प्रारभ किया था, उस समय मेरा अनुमान था कि मैं प्रतिदिन पाँच छह घंटे लिखकर थोड़े ही दिनोंमें इसे पूर्ण कर दूँगा, परन्तु मनुष्य सोचता कुछ है और होता कुछ और ही है। मेरा अनुमान ठीक न उतरा, अनेक असुविधाओंमे आ पड़नेसे बीच बीचमें कितने ही दिनोंतक ठहर जाना पडा। इन दिनोंमें मुझ पर सासारिक सुख दुःखोंका बहुत कुछ प्रभाव पडा और जलवायुका परिवर्तन भी मुझे करना पड़ा। इन घटनाओंके कारण मेरी भाषामें थोडा बहुत परिवर्तन हो गया है। यदि कहीं ऐसा परिवर्तन दृग्गोचर हो तो उसके लिए मैं पाठकोंसे क्षमा माँगता हूँ।"

शुरूमें मैंने मूल ग्रन्थके प्रत्येक वाक्यका अनुवाद करनेका प्रयत्न किया था, परन्तु आगे मुझे यह अच्छा न लगा और तब मैंने आशयानुवाद करना ही

उचित समझा। ऐसा करनेमें मुझे जहाँ तहाँ बहुत कुछ परिवर्तन करना पड़ा है; तो भी मूल ग्रन्थकर्ताके अभिप्रायोंमें कुछ अन्तर न पड़ जाय, इसकी ओर पूरा पूरा ध्यान रक्खा गया है।

इस ग्रन्थके पहले चार अध्यायोंका उर्दू अनुवाद भोपालके सिटी मजिस्ट्रेट श्रीयुक्त सैयद मोहम्मद मुरतजा साहबका किया हुआ है। प्रारंभमें इस अनुवादसे मुझे बहुत सहायता मिली है और इसके लिए मैं सैयद साहबका अत्यन्त आभारी हूँ। मैं अपने परम प्रिय मित्र नाथूरामजी प्रेमीका भी कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने इस ग्रन्थके संशोधन करनेमें मुझे अमूल्य सहायता दी है।

यदि मेरा यह छोटासा और नया प्रयत्न हिन्दीभाषाभाषियोंको रुचिकर हुआ, तो मैं आपने परिश्रमको सफल समझूँगा और ऐसी ही कोई दूसरी भेंट लेकर उपस्थित होऊँगा।

लखनऊ,
७–३–१४।

दयाचन्द जैन।

पहली आवृत्ति मार्च सन् १९१४ मे,

दूसरी आवृत्ति जुलाई सन् १९१६ में,

तीसरी आवृत्ति जून सन् १९१८ में।

विषय-सूची ।

मितव्ययता

पहला अध्याय

परिश्रम।

(विद्वानोंके वाक्य।)

जो कुछ मेरे पास है उस पर नहीं, किंतु जो कुछ मैं करता हूँ उस ही पर मेरा अधिकार है।

उपयोगी श्रम ही ऐसा धन है जो समाजको धनवान् वना सकता है और उसको उन्नत अवस्था पर पहुँचा सकता है। सुलेमानका कथन है कि ऐसा कोई श्रम नहीं जिसमें लाभ न हो। सम्पत्तिशास्त्र क्या है, केवल इसी सूत्रकी एक विशद और वृहत् व्याख्या है।

प्रकृतिकी आवश्यकताओंको पूरा करनेके लिए परमात्मा किसानोंके श्रमसे, शिल्पकारोंके कलाकौशलसे और व्यापारियोंके मालसे संसारमें उत्तम वस्तुओंको उत्पन्न करता है। आलसी पुरुप मृतकके समान है जिसको ससारकी आवश्यकताओं और परिवर्तनोंसे कोई सम्बन्ध नहीं। वह केवल समय नष्ट करनेके लिए पशुवत् जीवन व्यतीत करता है; जब आयु पूर्ण हो जाती है कूच कर जाता है। ससारको उसके जीवनसे कोई लाभ नहीं पहुँचता।

* * * * *

मितव्ययता सभ्यताके साथ प्रारम्भ हुई। उसकी नीव उस समय स्थिर हुई जब आजकी जरूरतके साथ कलकी जरूरतका भी खयाल पैदा हुआ। रुपयेके आविष्कारसे बहुत पहले इसका आरम्भ हुआ।

मितव्ययताका अर्थ गृहप्रवन्ध है। गृहप्रवन्धका यह अभिप्राय है कि व्यक्तिगत उन्नति और वृद्धि हो और सामाजिक तथा देशप्रवन्धसे यह तात्पर्य है कि सामाजिक धनदौलतकी वृद्धि हो।

प्राइवेट (निजी) और पब्लिक (सार्वजनिक) दोनों सम्पत्तियोंका एक ही स्रोत है। (धन श्रमसे उत्पन्न होता है, मितव्ययतासे सुरक्षित रहता है और उद्योग तथा दृढ़तासे बढता जाता है। व्यक्तिगत बचतका नाम ही सम्पत्ति है) दूसरे शब्दोंमें यों कह सकते हैं कि यह ही प्रत्येक समाजकी भलाईका कारण है। परन्तु इसके विपरीत व्यक्तिगत अपव्यय (फिजूल खर्च) ही बड़े बड़े समाजोंकी निर्धनताका कारण है। अतएव प्रत्येक मितव्ययी व्यक्तिको जनसाधारणका हितैषी और उपकारी समझना चाहिए और अपव्ययी तथा कृपणको शत्रु।

गृहप्रबन्धकी आवश्यकता पर तो किसीको कोई विवाद नहीं है। सब ही इसे मानते हैं। हाँ, सामाजिक प्रबंधके विषयमें बहुत कुछ विवाद है; किंतु हमको उस पर विचार करनेकी कोई जरूरत नहीं है। केवल गृहप्रबंधका ही विषय इस पुस्तकके लिए बहुत है।

प्रबन्ध कोई स्वाभाविक शक्ति नहीं है किंतु वह अनुभव, उदाहरण और दूरदर्शिताकी वृद्धिसे ही प्राप्त होता है। वह शिक्षा और बुद्धिका फल है। जब मनुष्यमें बुद्धि और विवेक उत्पन्न हो जाता है तब ही उसमें मितव्ययता आती है। अतएव स्त्रीपुरुषोंको दूरदर्शी बनानेका सबसे अच्छा उपाय यह है कि उन्हें विवेकी और बुद्धिमान् बनाया जाय।

स्वभावतः मनुष्यमें मितव्ययताकी अपेक्षा अपव्यय अधिक है। गँवार आदमी बड़े अपव्ययी होते हैं; क्योंकि न तो वे दूरदर्शी होते हैं और न उन्हें आगेका खयाल होता है। जंगली गँवार आदमी पहले कुछ भी संग्रह नहीं किया करते थे। वे गड्ढों और खोहोंमें रहते थे और कपड़ोंकी जगह वृक्षोंके पत्तों और छालोंसे अपना बदन ढँक लिया करते थे। समुद्रके किनारेसे कीड़े-मकोड़े पकड़कर और पशुपक्षियोंको पत्थ-

रोंसे मार कर अपना निर्वाह करते थे। धीरे धीरे उन्होंने पत्थरके हथियार बनाना सीखा जिससे उन्हे शिकार करना बहुत आसान हो गया।

पहले लोग खेतीका काम बिलकुल नहीं जानते थे। पीछे उन्होंने अपने खानेके वास्ते अनेक प्रकारके बीज जमा करना और उनमेंसे कुछ भाग दूसरी मौसमके लिए उठाकर रखना शुरू किया। जब धातुओंका पता लगा तब उनसे कई प्रकारकी चीजे बनाई। तरह तरहके औजार और मकान बनाये और इस लगातार परिश्रमसे सभ्यता और सदाचारके सैकड़ों मार्ग खुल गये। जो लोग नदियों या समुद्रोंके किनारे रहते थे, वे वृक्षोंको काटकर उन्हींमें अपने रहनेकी जगह बना लेते थे और उन्हीं पर सवार होकर अपने खानेके लिए सामग्री जमा कर लाते थे। धीरे धीरे इन्हीं कटे हुए वृक्षोंने डोंगियोंका और फिर नौकाओंका रूप धारण किया। तत्पश्चात् परिवर्तन होते होते जहाज और स्टीमर (अगनबोट) भी इन्हींसे बन गये।

हम पहले ही जैसे मूर्ख असभ्य रहते, परंतु हमारे पूर्वजोंके असीम परिश्रमने हमे मूर्ख और असभ्य रहनेसे बचा दिया। उन्होंने ही भूमिको साफ करके उपजके योग्य बनाया, तरह तरहके यंत्रोंका आविष्कार किया और अनेक विद्याओं और शास्त्रोंकी रचना की। उनके इस अपरिमित श्रमके कारण ही आज हम लाभ उठा रहे हैं।

प्रकृति हमको बतलाती है कि जो कोई अच्छा काम हो जाता है, वह सर्वथा कभी नष्ट नहीं होता। इसी लिए आज हम उनको याद करते हैं जो पूर्वमें अपने परिश्रमसे सफलता प्राप्त करके श्मशान भूमिमे शयन कर रहे हैं। बड़े बड़े कारीगर, शिल्पकार जो ताजमहल सरीखी इमारतें बना गये हैं और अपूर्व शिल्पकौशल और नक्शकारीका काम कर गये हैं यद्यपि वे आज इस संसारमें जीवित नहीं है, किंतु उनकी अजर अमर

कीर्ति सर्वत्र विद्यमान है। प्रकृतिके शासनमें मनुष्यके श्रमका सर्वथा नष्ट होजाना नितात असम्भव है। यदि पृथक् पृथक् व्यक्तिके लिए नहीं तो जातिके लिए तो अवश्य ही उसका कोई न कोई लाभदायक फल शेष रह जाता है।

रुपया पैसा वगैरह तो जो हमारे बाप दादा हमारे लिए छोड़ जाते हैं तुच्छ चीज है--शीघ्र नाश हो जानेवाला है। किन्तु हमारे अधिकारमें एक ऐसी अद्भुत चीज है जो कभी नाश नहीं होती। वह हमारे पूर्वजोंकी बुद्धि और श्रमका फल है। यह फल सीखनेसे नहीं किन्तु सिखाने और दिखानेसे प्राप्त होता है। यह क्रम सतान प्रतिसतान चलता रहा। पिताने पुत्रको सिखाया, पुत्रने पिताके श्रमसे लाभ उठाया और इसतरह कालकौशल तथा शिल्पविद्या अब तक सुरक्षित रही। यह संतान प्रतिसतानका शिक्षाक्रम मनुष्य जातिमे अब तक प्रचलित है और सभ्यताका यह एक मुख्य अग है।

अतएव हमारा पैतृक धन (मौरूसी जायदाद) हमारे पूर्वजोंके श्रमका लाभदायक फल है। किंतु हम उससे उस समय तक लाभ नहीं उठा सकते जब तक कि हम भी उस श्रममें योग न दें। ससारमें प्रत्येक व्यक्तिको श्रम करना योग्य है, चाहे वह श्रम शारीरिक हो अथवा मानसिक। श्रमके बिना जीवन व्यर्थ है। सुस्तीके साथ जीवन बिताना बेहोशीकी नींद सोना है। हमारा अभिप्राय केवल शारीरिक श्रमसे नहीं है, किंतु दुनियामें अनेक प्रकारके उत्तम कार्य है जैसे कष्टों और आपत्तियोंको सहन करना, दूसरोंको लाभ पहुँचाना, सभ्यता और सत्यताकी शिक्षा देना, अनाथों, अबलाओं और अपाहजोसे सहानुभूति रखना और उनकी सहायता करना, साहस और धैर्य रखना, निर्बलों पर प्रबलोंका अत्या-

चार न होने देना, उन पर दयाभाव रखना और उनको अपने समान स्वावलम्बी बनाना।

गणितज्ञ और धर्मज्ञ वक्ता बैरोका कथन है कि कोई सभ्य पुरुष यह बात पसंद न करेगा कि वह दूसरोंकी कमाई पर अपना जीवन व्यतीत करे, या उस कीड़ेके समान रहना स्वीकार करे जो अनाजके कोठेमेंसे दाना चुराता रहता है। वह यही चाहेगा कि मै दूसरोंके सहारेसे अपनेको अलग करके जनताकी सेवा और परोपकारमें अधिकतर योग दूँ; क्योंकि राज्यप्रबन्धसे लेकर कुलीके कामतक ऐसा कोई भी काम नहीं है जो बिना किसी प्रकारके शारीरिक अथवा मानसिक श्रमके अच्छी तरह हो सके।

श्रम केवल एक आवश्यकता ही नहीं है किंतु इसमें हर्ष और आनद भी है। एक दृष्टिसे देखा जाय तो हमारा जीवन प्रकृतिके विरुद्ध है; किंतु दूसरी दृष्टिसे देखा जाय तो वह प्रकृतिका सहकारी है। वायु, पृथिवी, सूर्य आदि सदैव हमारे अंदरसे जीवनशक्तिको निकालते रहते हैं उसको पूरा करनेके लिए ही हम नित्य खाते पीते और पहनते हैं।

प्रकृति हमारे साथ काम करती है। खेतीके लिए भूमि साफ करती है। जो बीज हम उसमें बोते हैं उसे उगाती और पकाती है। मानवी श्रमसे हमारे लिए रुई और अनाज पैदा करती है। हमें यह बात भी न भूलना चाहिए कि राजासे लेकर रंक तकके लिए जितनी चीजें खाने पीने तथा पहननेके काममें आती हैं अथवा रहनेके लिए बड़े बड़े महलोंसे लेकर छोटे छोटे झोपड़ों तक जो स्थान बनाये जाते हैं, वे सब परिश्रमके ही फल हैं।

मनुष्य एक दूसरेकी आवश्यकताओंको पूरी करनेके लिए आपसमे मिलते हैं। किसान जमीन जोतकर अनाज पैदा करता है, जुलाहा

सूत बुनकर कपड़ा तैयार करता है और दर्जी उसे काट छाँट करके उमदा तरीकेसे सीं देता है। राजमजूर मकान बनाते है जिनमें हम सुख चैनसे रहते है। इस तरह हर एक आदमी एक दूसरेकी जरूरतोको पूरा करता है। एकके विना दूसरेका काम नहीं चलता।

कैसी ही भद्दी और भूंडी चीज क्यों न हो, यदि उसमें श्रम और योग्यता सर्फ की जाय तो वही सुंदर रूपमे बदलकर बहुमूल्य वस्तु हो सकती है। मनुष्यमें श्रमका होना ऐसा ही जरूरी है जैसे शरीरमें आत्माका होना; क्योंकि यदि यह गुण निकाल लिया जाय तो मनुष्य-जाति तत्काल यमलोकको पहुँच जाय। सेंट पालका कथन है–'जो काम (श्रम) नहीं करेगा वह भूखों मरेगा।' यही कारण था कि वह स्वयं अपने हाथसे काम किया करता था।

उदाहरणके लिए एक बूढे किसानकी कहानी लिखी जाती है। उसने मरते समय अपने तीन आलसी बेटोंको बुलाकर कहा कि अमुक खेतमें जो मैं तुम्हारे लिए छोड़े जाता हूँ बहुतसा धन गडा हुआ है। यह सुनते ही लडके उछल पडे और पूछने लगे कि पिताजी, वह धन कहाँ गड़ा हुआ है? बापने उत्तर दिया, सुनो, बताता हूँ; किंतु तुम्हें उसे खोद कर निकालना पड़ेगा। अभी उसने ठीक ठीक स्थान नहीं बतलाया था कि उसका दम निकल गया। उसके मरने पर रुपयोंके लोभसे बेटोंने तमाम खेत खोद डाला, परंतु कहीं कुछ न निकला। लाचार होकर उन्होंने उसमें बीज बो दिया। फसलके वक्त उस खेतमें बेहद अनाज पैदा हुआ। इसका कारण केवल यह था कि उन्होंने रुपयोंके लोभसे जमीन खोद खोदकर बहुत अच्छी बना दी थी। जब जमीनकी पैदावारसे उन्हें बहुत कुछ लाभ हुआ, तब

उन्होने समझा कि यह वही धन है जिसको हमारे बापने मरते समय हमें बतलाया था।

यद्यपि शुरूमें परिश्रम कठिन और दूभर मालूम होता है किंतु आदर-सत्कार और हर्ष-आनंद इसीसे प्राप्त होता है। निर्धनतासे इसकी समानता हो सकती है, किंतु यश कीर्ति भी इसीमें है। परिश्रमके बिना क्या मनुष्यत्व, क्या जीवन और क्या सभ्यता सब निरर्थक है। मनुष्यका गौरव परिश्रमसे ही है। सारा साहित्य विज्ञान इसीकी कृपासे है। वह विद्या जिसके द्वारा हमको ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त होता है परिश्रमका ही फल है। यद्यपि परिश्रम एक प्रकारका बोझा है, किंतु वास्तवमे प्रतिष्ठा और गौरवका साधक है। जो लोग पवित्र उद्देश्य और उच्च अभिप्रायोंसे परिश्रम करते हैं उनके लिए यह पूजा, प्रशंसा, कर्तव्य, नित्यता और अक्षयता है।

ऐसे बहुतसे मनुष्य हैं जो श्रमके नियम (व्यवस्था) पर दूषण लगाते हैं। किंतु वे यह नहीं समझते कि यह केवल ईश्वरकी इच्छाके अनुकूल ही नहीं, किंतु बुद्धिकी वृद्धि और अपने स्वभावसे पूर्ण लाभ उठानेके लिए अत्यंत आवश्यक है। दुनियामें आलसी मनुष्यसे बढ़कर कोई दूसरा निंद्य नहीं। उसका जीवन बिलकुल पोच और लचर हैं। उसके लिए इन्द्रियपोषणको छोड़कर और कोई काम नहीं। क्या ऐसे मनुष्य सबसे जियादह अभागे और असंतोषी नहीं है? वे सदा शिथिलता और भ्रांतिकी दशामें पड़े रहते है। न तो वे स्वयं अपने लिए कुछ करते हैं और न दूसरोंको कुछ लाभ पहुँचा सकते हैं। वे एक ऐसे स्तंभके समान है जिसने जमीनको व्यर्थ घेर रक्खा है। उनके जीनेसे न किसीको खुशी और न उनके मरनेसे किसीको

रंज। सच है, दुनियामें आलसी मनुष्योसे बढकर कोई निंदित और घृणित नहीं है।

बड़े बड़े कामोंसे लेकर छोटे छोटे कामोंतक सबमें परिश्रमकी जरूरत है। सभ्यता, शिष्टता, परोपकार आदि सबकी उन्नति श्रम पर निर्भर है। जितने उपयोगी और बहुमूल्य विचार हैं वे सब श्रम और अनुभवके परिणाम हैं। कोई भी काम चाहे छोटा हो चाहे बड़ा, चाहे शरीरका हो, चाहे मस्तकका, विना परिश्रमके नहीं होता।

कोई बड़ा काम एकदम नहीं हो जाता किन्तु लगातार उद्योग और श्रमके बाद अवश्य हो जाता है। यदि बापसे न हुआ तो बेटेसे हो जायगा। यदि आज सफलता नहीं हुई तो कल हो जायगी। परिश्रमसे छोटे दर्जेके मनुष्य भी बड़े दर्जे पर पहुँच जाते हैं और गौरव तथा प्रतिष्ठाके पात्र हो जाते है। विद्या तथा कलाकौशलके इतिहासमें प्रायः उन्हीं लोगोंके नाम हैं जो अपने जीवनकालमें परिश्रमी थे। जैसे एक लुहारने स्टीम एंजिन बनाया, एक नाईने रुई कातनेकी कल जारी की और बहुतसे कारीगरोंने—लगातार एकके बाद दूसरेने—यंत्रविद्यामें सफलता प्राप्त की।

परिश्रमी मनुष्यसे हमारा अभिप्राय केवल उस मनुष्यसे नहीं है जो शारीरिक श्रम करता है, क्योंकि यह तो पशु भी करते हैं, किंतु वह मनुष्य परिश्रमी कहा जा सकता है, जो मस्तकसे भी काम लेता है और जिसकी शारीरिक शक्ति मस्तककी शक्तिके अधीन है। चित्रकार, ग्रंथकार, कवि और व्यवस्थापक इनकी गणना उच्चजातिके परिश्रमियोंमें है। यद्यपि जातिके शरीरपोषणके लिए यह श्रम इतना जरूरी नहीं है जितना कि किसान या गवालेका है परतु समाज या संघको सभ्य और शिक्षित बनानेके लिए बडा जरूरी है।

परिश्रमकी आवश्यकता पर इतना ही कहकर अब हम यह दिखलाना चाहते हैं कि इससे जो लाभ होते हैं उनका किस प्रकार उपयोग किया जाता है। यह कहनेकी जरूरत नही कि यदि हमारे बाप दादा हमारे लिए काफी सामान न छोड़ जाते, तो हम पहलेकी तरह असभ्य और गँवार रहते। सामानसे मतलब रुपये पैसेसे नहीं किंतु मन, बुद्धि, मानसिक योग्यता, चातुर्य और आविष्कारसे है। संसारके महापुरुषोंने इन्हीं गुणोंको संचय करके सभ्यताको प्राप्त किया है। (गुणोंकी प्राप्ति श्रमका फल है।) जब परिश्रमी मनुष्य सग्रह करने लगते हैं तभी सभ्यताके परिणामोंकी वृद्धि होने लगती है। हम पूर्वमे कह आये है कि मितव्ययता सभ्यताके साथ प्रारम्भ हुई और अब हम वलपूर्वक कहते है कि मितव्ययतासे ही सभ्यता प्राप्त हुई। इसीसे धन पैदा होता है और धन परिश्रमसे मिलता है। अतएव धनवान् केवल वही पुरुष है जो अपनी सारी आमदनी खर्च नहीं कर देता।

किंतु मितव्ययता स्वाभाविक गुण नहीं है। इसको उद्योग करके प्राप्त करना होता है। इसके लिए इच्छाओंका निरोध करना पड़ता है और दूरदर्शिता और विचारशीलताको दृष्टिगोचर रखते हुए विषयवासनाओंका दमन करना पड़ता है। मितव्ययता आजकी जरूरतको पूरा करती है और कलके लिए सामग्री इकट्ठा करती है।

एडवर्ड डेनिसन साहबका कथन है कि मनुष्यको सदैव भावी आवश्यकताओंका खयाल रखना जरूरी है। उसे सदा परिणामदर्शी होना चाहिए। जो परिणामदर्शी है वह मानो अस्त्रशस्त्र धारण किये हुए तैयार खड़ा है। (भविष्यको जानना इसमे कोई महत्त्व नहीं है किंतु भविष्यके लिए तैयार रहना इसमे बड़ा भारी गुण है।)

परंतु दुनियामें उन लोगोंकी संख्या अधिक है जो भविष्यका कुछ भी खयाल नहीं करते--वे अपनी भूतअवस्थाको भी बिलकुल भुला देते हैं। उनको केवल वर्तमानकी चिंता है। वे न तो अपने लिए कुछ जमा करते हैं और न अपने कुटुम्बके लिए। जितना कमाते हैं सब खर्च कर डालते है। उनकी आमदनी जियादह भी है, किंतु सब उड़ा देते है। ऐसे पुरुष सदा निर्धन और दरिद्र रहते है।

ठीक यही हाल प्रत्येक देश और समाजका है। जो देश अपनी आमदनीका सारा भाग खर्च कर डालता है और भविष्यके लिए कुछ जमा नहीं करता, उसके पास कोई पूँजी नहीं होती। इसकी दशा उन अपव्ययी मनुष्योंके समान है जो जितना कमाते हैं सब चटोरपनमें उड़ा देते हैं और गाँठमे कौड़ी भी नहीं रखते। जिस देशमें धन नहीं होता वह किसी प्रकारका व्यापार या व्यवसाय नहीं कर सकता। न उसमें जहाज होते हैं, न रेलें होती हैं, न सड़कें होती हैं और न नहरे। अतएव मितव्ययताके साथ परिश्रम ही सभ्यताकी जड़ है।

स्पेन देशको देखो। वहांके निवासी जिस भूमिकी उपजको बहुत जियादह समझते हैं वह हमारे यहाँ बहुत कम दर्जेकी गिनी जाती है। पहले वहाँ एक नदीके किनारे पर १२,००० ग्राम आबाद थे, किंतु अब उनकी सख्या सिर्फ ८०० रह गई है और वे भी कंगालों और भीखमंगोंसे भरे हुए हैं। स्पेनके लोग कहा करते हैं कि जमीन अच्छी है, आकाश अच्छा है, सिर्फ वे ही चीजें खराब हैं जो जमीन और आकाशके बीचमें हैं। स्पेनवालोंके लिए लगातार मेहनत करना एक असम्भव बात है। कुछ तो आलस और कुछ अभिमानके कारण उनसे परिश्रम नहीं होता। उन्हें काम करनेमें तो शर्म मालूम होती है परंतु भीख माँगनेमे कुछ भी शर्म नहीं।

समाजमे दो प्रकारके मनुष्य होते है,—जोड़नेवाले और खर्च करने-वाले, दूरदर्शी और अदूरदर्शी, मितव्ययी और अपव्ययी, निर्धन और धनवान्।

जो मनुष्य परिश्रम करके मितव्ययतासे कुछ रुपया जमा कर लेते हैं वे अपने काममें दिन दूनी और रात चौगुनी उन्नति करते हैं और धीरे धीरे वाणिज्य व्यापार प्रारम्भ करके थोड़े ही दिनोंमें धनवान् वन जाते है।

जो लोग मितव्ययी है वे मकान बनवाते हैं, कल कारखाने खोलते हैं, कोठियाँ कायम करते हैं, रेल जहाज बनवाते हैं, खाने खुदवाते है, एंजिन लगवाते हैं, अर्थात् भांतिभाँतिके नये नये काम जारी करते हैं।

यह सब मितव्ययताका फल है और धनको उत्तम कार्योंमें लगा-नेकी महिमा है। जगत्की उन्नतिमें अपव्ययी मनुष्यका कोई भाग नहीं। जितनी उसकी आमदनी है वह सब खर्च कर डालता है। उससे किसीको कुछ लाभ नहीं पहुँचता। चाहे वह कितना ही धन पैदा कर ले, किंतु उसकी दशामे किसी तरहकी कोई उन्नति नहीं होती। वह सदा दूसरोंका सहारा ताकता रहता है और मितव्ययी मनुष्यका दास बना रहता है।

दूसरा अध्याय।

मितव्ययताका अभ्यास।

(विद्वानोंके वाक्य।)

सबसे बड़ा काम अपने आपको वशमें करना है।

बहुतसे आदमी वर्तमानके लिए परिश्रम करते हैं और थोड़ेसे भविष्यके लिए, किन्तु बुद्धिमान् मनुष्य वर्तमान और भविष्य दोनोंके लिए करते हैं, अर्थात् आज कलके लिए और कल आजके लिए।

सारी सफलताका गुप्तरहस्य अपनी इच्छाओंका निरोध करना है। ....यदि तुम एकबार अपने पर काबू पा जाओ तो यह (काबू) तुम्हारा सर्वोत्तम शिक्षक है। जब तुम मुझे यह सिद्ध करके दिखलाओगे कि तुम अपनेको वशमें कर सकते हो तब मैं कह सकूँगा कि तुम शिक्षित हो, नहीं तो इसके बिना तुम्हारी सारी शिक्षा किसी भी कामकी नहीं।

सारी दुनिया चिल्ला रही है कि ऐसा कौन व्यक्ति है जो हमको बचावे। हमको ऐसे व्यक्तिकी जरूरत है, परन्तु उसके लिए दूर मत जाओ। वह तुम्हारे पास है। वह तुम हो, मैं हूँ और हममेंसे हर एक है। ...... हम अपनेको मनुष्य कैसे बनावें? इसकी बराबर कोई कठिन काम नहीं, यदि हम यह नहीं जानते कि किस तरह इसके लिए दृढ संकल्प करना चाहिए। परन्तु इसकी बराबर कोई काम आसान नहीं यदि हम इसके लिए दृढ संकल्प करनेको तैयार हैं।

× × × × ×

हम सुख और शान्तिको प्राप्त कर सकते है, परंतु तभी जब उनके प्राप्त करने और उनसे लाभ उठानेके लिए हम उचित उपायोंको काममें लावें। जिन लोगोंकी अच्छी आमदनी है वे तो धनवान् बन

सकते हैं और संसारकी भलाई और उन्नतिमे भी पूरापूरा योग दे सकते हैं; किंतु यह बात कि वे अपनी या अपनी जातिकी दशामें किसी प्रकारकी संतोषजनक उन्नति कर लें केवल उनके श्रम, साहस, सत्य और मितव्यय पर निर्भर है।

किसी समाजको धनके अभावसे उतनी हानि नहीं पहुँचती जितनी धनके व्यर्थ नष्ट करनेसे पहुँचती है। धन पैदा करना आसान है, किंतु उसका खर्च करना कठिन है। किसी आदमीकी आमदनीसे उसके धनका अंदाजा लगाना ठीक नहीं, किंतु उसके खर्च और गृहप्रबन्धकी योग्यतासे लगाना चाहिए। यदि कोई मनुष्य परिश्रम करके अपनी तथा अपनी कुटुम्बकी आवश्यकताओंसे अधिक पैदा कर लेता है और खर्च करके कुछ बचा भी लेता है तो समझ लेना चाहिए कि निःसंदेह समाजहित और जात्युपकारके अंश उसमें विद्यमान है। चाहे बचतकी रकम थोड़ी ही क्यों न हो, तो भी वह उसको स्वतंत्र रखनेके लिए बहुत है।

जिस कारीगरको आज अच्छी मजूरी मिलती है, कोई कारण नहीं कि वह एक दिन धनवान् न बन जावे। इसके लिए केवल अपनी इंद्रियोंको अपने वशमें करने और घरका योग्य प्रबंध करनेकी जरूरत है। आज जितने बड़े बडे शिल्पनेता देखनेमें आते हैं वे प्रायः मामूली हैसियतके लोगोंके घर पैदा हुए है। काम करनेवाले और न करनेवालेमें केवल अनुभव और चातुर्यका अतर है और यह काम करनेवाले ही पर निर्भर है कि वह अपने रुपयेको बचावे अथवा खोवे। यदि वह बचावेगा तो उसके सदुपयोगमें लानेके उसे अनेक अवसर मिलते रहेंगे।

एक महाशय कहते हैं कि एक दिन मैंने अपने कुछ मित्रोंसहित एक कारखानेका अवलोकन किया, जिसमें कोई ८०० मशीनें और तीन चार हजार आदमी काम कर रहे थे। जब हम लौटने लगे, तब मेरे एक मित्रने कारखानेके मालिकके कंधे पर हाथ रखकर हँसते हुए कहा कि, २५ वर्ष पहले ये महाशय भी एक कारीगर थे और यह तमाम कारखाना इनके ही श्रम और मितव्ययताका फल है। यह सुनते ही मालिकने मुसकराते हुए उत्तर दिया, नहीं, यह तमाम मेरी वजहसे नहीं है बल्कि मेरी स्त्री भी—जब मैंने उससे शादी की—कपड़ा बुन कर एक रुपया रोज कमा लिया करती थी।

समयको सावधानीसे काममें लाना मानो धनको सावधानीसे खर्च करना है। फ्रैंकलिन महोदयका कथन है कि समय एक अमूल्य रत्न है। यदि किसीको धनप्राप्तिकी अभिलाषा है, तो उसे उचित है कि समयको योग्य रीतिसे खर्च करे। ज्ञान, विज्ञान, शिल्प साहित्यादि अनेक उत्तम कार्योंमें समयका सदुपयोग हो सकता है। नियमपूर्वक चलनेसे बहुत कुछ समय बच सकता है और उद्देश्योंकी पूर्ति भी हो सकती है। प्रत्येक कार्य व्यवस्थित और नियमपूर्वक होना चाहिए। गृहिणीके लिए भी इस गुणकी अत्यंत आवश्यकता है। प्रत्येक वस्तुके लिए नियत स्थान होना चाहिए और हरएक चीज अपनी जगह पर होनी चाहिए। (हरएक कामके लिए वक्त होना चाहिए और हरएक काम वक्त पर होना चाहिए।)

इस बातके दिखलानेकी जरूरत नहीं कि मितव्ययता कैसी और कितनी उपयोगी है। कोई नहीं कह सकता कि इसका पालन नहीं करना चाहिए। इसके अगणित उदाहरण हमारे सामने मौजूद हैं। पहले सम-

यके लोग जो काम कर गये हैं उन्हे हम भी कर सकते है। मितव्य-यता कोई हानिकारक या दुःखप्रद भी नहीं है; बल्कि इसके विपरीत यह हमको अपमान, अवज्ञा और घृणासे बचाती है। यद्यपि इसके अनुसार प्रवर्तनेसे हमको अपनी वासनाओंको दमन करना पड़ता है, किंतु यह हमें योग्य सुखों और उचित भोगोंसे वंचित नहीं रखती। यह हमको अनेक पवित्र सुख और आनंदकी सामग्री प्रदान करती है जिनसे अमितव्ययी और अपव्ययी सर्वथा वंचित रहते हैं।

किसी व्यक्तिको यह कदापि न कहना चाहिए कि मैं मितव्यय नहीं कर सकता। ऐसे बहुत कम पुरुष हैं जो अठवाड़ेमें रुपया–दो रुपये भी नहीं बचा सकते। यदि एक रुपया भी सप्ताहमें बचाया जावे तो २० सालमें १००० रु० हो जावेंगे और अगले २० वर्षमे सूद वगैरह लगाकर कई हज़ार हो जावेंगे। यदि तुम एक रुपया साप्ताहिक भी नहीं बचा सकते तो न सही, आठ आने, चार आने, दो आने ही बचाना शुरू करो, किन्तु करो जरूर। सेविंगबेंक (डाकखानेके) हर जगह मौजूद हैं, उनमें जमा करना अभी से शुरू कर दो—चाहे कितनी ही थोड़ी रकम क्यों न हो। इससे मितव्ययताका अभ्यास होने लगेगा जिसकी बहुत बड़ी आवश्यकता है।

मितव्ययताके लिए किसी असाधारण शक्ति, साहस अथवा योग्यताकी आवश्यकता नहीं है और न यह कोई ऐसा काम है जिसके अनुसार चलना मनुष्यकी शक्तिसे बाहर हो। इसके लिए साधारण बुद्धि दरकार है। हाँ, इस बातकी बड़ी जरूरत है कि मनुष्य स्वार्थयुक्त भोगविलासोंसे मुँह मोड़ ले। वास्तवमें मितव्ययता प्रतिदिनके कार्य्यमें एक साधारण बात है। इसके लिए किसी बड़े भारी

इरादेकी जरूरत नहीं है; केवल संतोप और इन्द्रियदमनकी जरूरत है। इसका प्रारंभ करना ही इसका उपाय है। ज्यों ज्यों इसका अभ्यास किया जायगा त्यों त्यों सरलता होती जायगी और शीघ्र उन बातोंका बदला मिल जायगा जिनके त्याग करनेमें शुरूमें कठिनाई पड़ी थी।

यहाँ प्रश्न किया जा सकता है कि क्या यह संभव है कि वह मनुष्य भी जिसकी आमदनी बहुत ही थोडी है और जो सबकी सब कुटुब-पालनमें लग जाती है, कुछ बचा सकता है और सेविंगबेंकमें जमा कर सकता है ? इसका उत्तर यही है कि हाँ, यह संभव है। बहुतसे बुद्धिमान् और परिश्रमी पुरुप ऐसा करते हैं; वे कुछ न कुछ बचाकर सेविंगबेंक वगैरहमे अवश्य जमा करते रहते है। अतएव जब कुछ मनुष्य ऐसा कर सकते है, तब सबको बिना किसी उचित सुखका त्याग किये, अवश्य ऐसा करना चाहिए।

यह बात कितनी स्वार्थयुक्त है कि कोई आदमी अच्छी माकूल तनख्वाह मिलने पर भी अपनी सारी आमदनी अपने लिए भोगविला-सकी सामग्री सचय करनेमे ही खर्च कर दे, अथवा यदि उसके घरमे बाल बच्चे हैं तो उनके लिए ही सब खर्च कर दे, और कुछ भी बचा-कर जमा न करे। हमने देखा है कि अनेक मनुष्योंकी आमदनी उन-के जीवनकालमें अच्छी रही परंतु उन्होंने कुछ भी संचय नहीं किया-- सबका सब खर्च कर दिया। उनके मरनेपर उनकी स्त्री और बालबच्चे पैसे पैसेके लिए घर घरकी भीख माँगने लगे। न उनका कोई रक्षक रहा और कोई न पूँछनेवाला। कहिए, उनसे जियादह स्वार्थी और अप-व्ययी कौन होगा ?

यदि कुछ भी विवेकसे काम लिया जाय तो ऐसा परिणाम कभी न हो। जलपानादिमें यदि थोड़ी भी कमी कर दी जाय तो सबका सब

रुपया अपने ही लिए खर्च करनेके बदले थोड़े दिनोमे कुछ न कुछ दूसरोंके लिए भी जमा हो जायगा। हाँ, निर्धनसे निर्धन मनुष्यका यह मुख्य कर्त्तव्य है कि चाहे कितनी ही थोड़ी रकम क्यों न हो किंतु वह अवश्य कुछ न कुछ बचावे जो आपत्तिकालमें–जिसमें मनुष्य कभी न कभी अचानक फँस ही जाता है,–उसके तथा उसके कुटुंबियोंके काम आवे।

मिलान करनेसे जान पड़ता है कि बहुत कम आदमी धनवान् हो सकते हैं, किन्तु यह शक्ति हरएक आदमीमें है कि श्रम और मितव्ययतासे अपनी जरूरतोंको पूरा कर सके और इतना रुपया भी जमा कर सके कि जो उसे बुढ़ापेमें निर्धनताके कष्टसे बचा सके। मितव्ययतामें अवसरका न मिलना बाधक नहीं होता किन्तु दृढ़ संकल्पका न होना बाधक होता है। मनुष्य लगातार शारीरिक और मानसिक परिश्रम कर सकते है, किन्तु अपव्यय और अमितव्ययसे जीवन व्यतीत करना नहीं छोड़ते।

इच्छाको वशीभूत करनेकी अपेक्षा भोगविलासमें रहना लोग अधिक पसन्द करते है। १०० पीछे ९० आदमी इच्छाओंके दास बने रहते है। वे जो कुछ कमाते है सब खर्च कर डालते है। केवल मजूर और कारीगर लोग ही अपव्ययी नहीं होते किंतु नित्य सुननेमें आता है कि अमुक अमुक मनुष्योने वर्षोंतक सैकड़ों रुपये कमाये और खर्च किये, परंतु जब वे अकालमृत्युके ग्रास हो गये, तब उन्होंने अपनी संतानके लिए एक कौड़ी भी बाकी न छोड़ी। उनकी मृत्यु पर वही घर जिसमें वे रहते थे और वही सामान जिससे वह मकान सजा रहता था, दूसरोके हाथ बिक जाता है। उनकी बिक्रीसे जो रुपया

आता है उससे ही उनकी क्रियाकर्म वगैरहका खर्च किया जाता है और वह कर्ज चुकाया जाता है जो उन्होंने अपने जीवन कालमें लिया था।

धन सैकड़ों व्यर्थ और निर्मूल पदार्थोंका प्रतिनिधिस्वरूप है। किन्तु साथ ही यह एक बहुमूल्य वस्तुको भी प्रकट करता है, जिसे स्वतंत्रता कहते हैं। अतएव इस अपेक्षासे यह एक बहुत ही जरूरी चीज है। और जब धन स्वतंत्रताका कारण है और उसका जमा होना मितव्ययता पर निर्भर है तब मितव्ययता छोटे दर्जेसे निकलकर उच्च माननीय पद पर आरूढ़ हो जाती है। बुल्वरका कथन है कि "रुपयेके मामलेमें कभी छिछोरापन न करना चाहिए। रुपया गुण, यश, गौरव और चरित्र है। सत्य, शील, उदारता, दयालुता, न्यायपरायणता, दूरदर्शिता, आदि उत्तम गुण धनके योग्य व्यय पर ही निर्भर " और लोभ, कृपणता, अपव्यय, अदूरदर्शिता आदि अनेक अवगुण भी रुपयेके दुरुपयोगसे पैदा हो जाते हैं।"

उस जातिने कभी उन्नति नहीं की जिसने जो कमाया सो खा लिया। जो लोग अपनी आमदनीका सारा रुपया खर्च कर ड. " वे सदा निर्धनताके किनारे पर आकाशमे लटके खड़े रहते हैं। वे विवश और निर्बल हैं, समय और अवसरके गुलाम हैं, अपनेको दरिद्र रखते है और न केवल अपना गौरव खोते हैं किंतु दूसरोंका भी खो डालते है। यह असम्भव है कि वे स्वाधीन या स्वतंत्र रह सकें। मनुष्यको सारे उत्तम गुणोंसे वञ्चित कर देनेके लिए फिजूलखर्च या अपव्ययी होना ही काफी है।

परंतु उस मनुष्यकी दशा उससे सर्वथा भिन्न है जो कुछ बचाकर जमा करता जाता है, चाहे वह थोड़ा ही क्यों न हो। वही थोड़ासा

धन जो उसने संचय किया है सदा उसको बल और शान्ति प्रदान करता रहता है। वह कभी समय और भाग्यका शिकार नहीं बनता, किंतु संसारकी घटनाओका साहसपूर्वक वीरतासे सामना करता है। वह आपना स्वामी आप है, किसीके अधीन नहीं। न उसको कोई खरीद सकता है और न कोई बेच सकता है। वह स्वाधीन और स्वतंत्र है और वृद्धावस्थाके सुख और शातिमय आनंदका स्वागत करनेकी राह देखता है।

ज्यों ज्यों मनुष्य विचारशील और बुद्धिमान् होता जाता है त्यों त्यों परिणामदर्शिता और मितव्ययता आती जाती है, किंतु अविचारी मनुष्य पशुओंकी तरह अपनी सारी आमदनी खर्च कर डालता है, आगेकी कुछ चिंता नहीं करता और निर्धनता तथा अपने आश्रित बालबचोंके अधिकारोकी भी परवा नहीं करता। इसके विपरीत विचारशील मनुष्यको सदा भविष्यका खयाल रहता है; वह अच्छे समयसे बुरे समयके लिए तैयार हो रहता है और अपने कुटम्बकी आवश्यकताओको भी पूरी करता रहता है।

जो पुरुष विवाह करता है वह बहुत बडी भारी जिम्मेदारीको अपने सिर पर उठाता है; पर बहुत कम लोग इस पर विचार करते हैं। शायद इसमें भी कुछ बुद्धिमानी है। क्योंकि सम्भव है कि यदि इस पर दीर्घदृष्टिसे विचार किया जाय तो शादी—विवाह—होने ही बंद हो जावें, फिर कोई जिम्मेदारी बाकी ही न रहे। परंतु जो पुरुष विवाह करे उसे इस बातका तो तत्काल ही दृढसंकल्प कर लेना चाहिए कि निर्धनता यथाशक्ति और यथासम्भव मेरे घरमें कभी न घुसेगी और मेरे मरनेके बाद मेरे बालबच्चे समाज पर किसी प्रकारके भारस्वरूप न होंगे।

इस अभिप्रायसे मितव्ययताका अभ्यास करना मनुष्यका मुख्य कर्तव्य है। इसके विना कोई सत्यवक्ता या धर्मात्मा नहीं हो सकता। अदूरदर्शिता अर्थात् भविष्यके लिए कोई सामान जमा न करना स्त्री और बच्चोंके लिए अन्याय है। इस अन्यायका कारण अज्ञानता है। जो पिता अपनी सारी आमदनी तरह तरहके व्यसनों और भोगविला-सोंमें खर्च कर डालता है और कुछ भी नहीं बचाता, वह अपनी नि-राश्रित संतानको जन्मपर्यंत दुःख सहनेके लिए छोड़कर चला जाता है। क्या इससे भी अधिक और कोई अन्याय हो सकता है? यह असावधानी प्रायः प्रत्येक जातिमें अधिकतासे पाई जाती है। जघन्य श्रेणीके लोगोंके साथ साथ मध्यम और उत्तम श्रेणीके लोग भी इस अपराधके अपराधी हैं। वे अपनी हैसियतसे बढ़कर फिजूलखर्च कर डालते हैं, बाहरी सजधज और ठाटवाटके इच्छुक रहते हैं और अपनेको धनवान् सिद्ध करनेका उद्योग करते हैं जिससे उन्हें शराब उडाने, दावतें खिलाने, नाच तमाशे कराने वगैरहमें खर्च करनेका मौका मिले।

एक वार जव मिस्टर ह्यूमने हाउस आफ कामन्समें यह कहा था कि हमारे खर्च बहुत बढ रहे हैं, तब सब लोग हँस पडे थे, परंतु उनका कथन अक्षर अक्षर सत्य था। बल्कि उस वक्तकी अपेक्षा अब और भी सत्य है। आजकल हमारे खर्च बहुत बढे हुए हैं। हम अपनी हैसियतसे बढ़कर खर्च करते हैं, आमदनीको व्यर्थ खो देते है और बहु-धा अपने जीवनको उसके पीछे नष्ट कर देते है।

बहुतसे आदमी रुपया पैदा करनेकी तो योग्यता रखते हैं, परतु उसे किफायतसे खर्च करना नहीं जानते। पैदा करनेमें तो चतुर हैं किंतु खर्च करनेमे मूर्ख हैं। लोग इन्द्रियजन्य क्षणिक सुखोंमे विना सोचे

समझे फँस जाते हैं। प्रायः असावधानीके कारण ऐसा होता है। परंतु दृढ़चित्त कथा दृढ़संकल्पद्वारा इस इच्छाको आसानीसे काबूमें किया जा सकता है और यह अवश्य करना चाहिए कि जिससे उन्हें आगामीमें आकस्मिक खर्चोंके कारण कष्ट न उठाना पड़े।

वचानेका अभ्यास अधिकतर उस समय होता है जब अपनी जातिकी उन्नति अथवा अपने अधीनो तथा कुटुम्बियोंकी दशा सुधारनेका विचार दिलमें हो। इस विचारसे सारी फिजूलखर्ची जाती रहती है। यदि जरूरत नहीं है तो सस्तेसे सस्ते दामोंमें खरीदी हुई चीज भी महँगी ही है। छोटे छोटे खर्चोंसे वड़े वड़े खर्च होने लगते हैं। विना जरूरी चीजोंके खरीदनेसे वहुत जल्द फिजूलखर्चीकी आदत पड जाती है। रोमके प्रसिद्ध सिद्धान्तवेत्ता सिसरोका कथन है कि "चीजें खरीदनेका जनून न होना ही मानों धनका जमा होना है।" बहुतसे लोगोंको चीजें खरीदनेका मर्ज होता है। जहाँ उन्होंने कोई चीज सस्ती देखी तुरन्त ही उसके खरीदनेके लिए उत्सुक हो गये। यदि उनसे पूछा जाय कि इसकी क्या जरूरत है? तो जवाव देंगे कि इस समय तो कोई नहीं, पर हाँ, कभी न कभी काम आ ही जायगी। ऐसे ही लोग वहुतसी पुरानी चीजें खरीद लिया करते हैं और अपना तमाम रुपया खो देते हैं। होरेस वैलपोलने एक वार कहा था कि "अब फिर कभी खरीद न होगी, क्योंकि मेरे घरमें एक इंच भी जगह खाली नहीं रही और एक पाई भी नहीं वची।"

प्रत्येक व्यक्तिको अपनी युवावस्थामें इतना सामान अवश्य जमा कर लेना चाहिए कि जिससे वृद्धावस्थामें आनंदपूर्वक जीवन व्यतीत हो सके। उस मनुष्यकी दशा कैसी शोचनीय है जिसने अपने जीवनका

अधिकतर भाग अच्छी दशामें विताया, किंतु अतमे अन्न तकका साँसा पड गया और सिवाय भीख मोगने और दूसरोंको आगे हाथ पसारनेके और कोई साधन उसके निर्वाहका न रहा। अतएव यह विचार प्रत्येक व्यक्तिके मनमें आरम्भसे ही दृढरूपसे जम जाना चाहिए कि परिश्रम करके किफायतसे खर्च करना चाहिए कि जिससे भविष्यमें अपनेको तथा अपने कुटुम्वको लाभ हो।

वास्तवमें युवावस्थामे ही वचानेका अभ्यास करना चाहिए और वृद्धावस्थामें उसे उदारतासे खर्च करना चाहिए; किंतु आमदनीसे अधिक उस समय भी नहीं। एक नौजवानको जिंदगीके मैदानमें वड़ा लम्बा चौड़ा सफर तै करना है। इस अवस्थामें ही वह किफायतशारीके उसूलोंका भलीभाँति अभ्यास कर सकता है। किंतु एक बूढा आदमी अपनी जीवनलीला पूरी करनेवाला है। और वह यहाँसे अपने साथ कुछ नहीं ले जा सकता।

परतु ऐसा देखनेमें नहीं आता। प्रत्येक नवयुवककी यह इच्छा होती है कि मै वैसी ही उदारता और स्वतंत्रतासे खर्च करूँ जिस तरह मेरे माता पिताने किया। कभी कभी उनसे भी बढकर खर्च करनेको जी चाहता है और वह कर भी डालता है। परिणाम यह होता है कि वह शीघ्र ही ऋणके भारसे दव जाता है, अपनी लगातार जरूरतोंको पूरा करनेके लिए अनुचित और पापमय उपायोका काममें लाता है, रुपया शीघ्र पैदा करनेकी कोशिश करता है और इसके निमित्त शक्तिसे बाहर व्यापार करता है, किंतु अतमें घाटा उठाता है। इस प्रकार उसे अनुभव तो हो जाता है, किंतु यह अनुभव अच्छे कामका नहीं होता—बुरे कामका होता है।

विश्वविख्यात महात्मा सुकरातका कथन है कि " प्रत्येक कुटुम्बके पिता अर्थात् नेताको अपने मितव्ययी पड़ोसीका अनुकरण करना चाहिए और उन पुरुषोंके जीवनसे लाभ उठाना चाहिए जो अपनी आयको उत्तम रीतिसे व्यय करते है।" मितव्ययताका पालन करना अत्यन्त आवश्यक है। दृष्टान्तों द्वारा यह बात भलीभाँति समझमे आ सकती है। मान लो कि दो पुरुष हैं। हरएककी आमदनी प्रतिदिन पॉच रु० है। दोनोंके रहने-सहनेके ढग और घरके खर्च भी एकसे है। एक तो कुछ जमा नहीं करता और कहता है कि मै कुछ जमा नहीं कर सकता, किंतु दूसरा कहता है कि मै जमा कर सकता हूँ और नित्य थोड़ा थोड़ा रुपया सेविंगबेंकमें जमा करता जाता है। फल यह होता है कि एक दिन यह धनवान् कहलाने लगता है।

सेमुएल जानसन दरिद्रताके कष्टोसे भलीभाँति परिचित था। शुरूमे वह ऐसा दरिद्र था कि एक बार उसने अपने नामके स्थानमें जानसन न लिखकर डिनरलेस (अर्थात् जिसको खाना न मिले) लिख दिया था। वह जंगलियोंकी तरह गलियोंमें फिरा करता था और उसे इतनी जगह भी नहीं मिलती थी कि रातके वक्त कहीं पड़ रहे। जानसनकी प्रारम्भिक अवस्था ऐसी दरिद्रतामें बीती कि वह उसे तमाम उमर नहीं भूला। वह सदा अपने मित्रों और पाठकोको समझाया करता था कि निर्धनतासे बचना चाहिए। सिसरोके समान उसका भी मत था कि (ऋद्धि और वृद्धिका सर्वोत्तम मार्ग मितव्ययता है। वह मितव्ययताको **दूरदर्शिताकी पुत्री, संयमकी भगिनी और स्वतंत्रताकी माता कहा करता था।)** उसका कथन है कि " निर्धनतासे परोपकारके समस्त द्वार बंद हो जाते है और पापसे बचनेकी शक्ति सर्वथा नष्ट

हो जाती है।" अतएव प्रत्येक शुभ उपायसे इसके दूर करनेका प्रयत्न करना चाहिए। दृढसंकल्प कर लो कि दरिद्र नहीं होंगे। जो कुछ तुम्हारे पास है, उससे कम खर्च करो। मितव्ययता केवल सुख शांतिका ही आधार नहीं है, किंतु परोपकारका भी मूल है। वह मनुष्य कभी दूसरेकी सहायता नहीं कर सकता जिसे स्वय सहायताकी आवश्यकता है। दूसरेको देनेसे पहले अपने पास काफी पूँजी जमा कर लेनी उचित है।

जानसनने और भी कहा है कि "दरिद्रता मानवीय सुखकी कट्टर शत्रु है। यह स्वतंत्रताका घात कर देती है। कुछ सद्गुणोंको असम्भव और कुछको कठिन बना देती है।" जो लोग दरिद्रतासे भयभीत रहते हैं उनको चाहिए कि अपने मितव्ययी पूर्वजोंके नीतियुक्त वाक्योंका स्मरण करें और अपव्ययसे बननेके उपयोगी उपायोंको ग्रहण करें। मितव्ययताके विना कोई धनवान् नहीं हो सकता और मितव्ययता होते हुए कोई निर्धन नहीं हो सकता।

यदि मितव्ययता पर इस भावसे दृष्टि डाली जाय कि इसका पालन करना आवश्यक ही है तो फिर इसके पालन करनेमें कोई कठिनाई न होगी। जिन लोगोंने पहलेसे इस पर ध्यान नहीं दिया है उन्हें यह देखकर आश्चर्य होगा कि सिर्फ दो चार पैसे रोज बचानेसे भी कितनी चरित्रोन्नति, मानसिक वृद्धि और जातीय स्वतत्रता प्राप्त होती।

मितव्ययताके लिए जितना उद्योग किया जाय उतना ही प्रशसनीय है। इसके अनुसार काम करना ही इसकी उन्नति है। इससे स्वार्थत्यागका प्रादुर्भाव होता है और सयम वृद्धिको प्राप्त होता है। दूरदर्शिता पर इसकी नींव स्थिर है और दूरदर्शिता ही इसका मूल मंत्र है। यह वि-

षय-वासनाओंको दमन करती है, सुखशांति प्रदान करती है और भय, आकुलताको जिनमे हम लोग नित्य फँसे रहते है, दूर करती है।

कुछ लोग कहते हैं कि यह नहीं हो सकता। पर यह ठीक नहीं। प्रत्येक व्यक्ति कुछ न कुछ अवश्य कर सकता है। यह खयाल कि 'नहीं हो सकता' पृथक् पृथक् व्यक्तिके और जातिके सर्वनाशका कारण है। इस 'नहीं हो सकता' से जियादह बुरा और कुछ नही हो सकता। यदि एक पैसा रोज पान-तम्बाकूमें खर्च हो तो साल भरमे छः रुपये होंगे और अगर जिन्दगी भरका हिसाब लगाया जावे तो मरनेके समय कई सौ रुपये हो जावेंगे। यदि यह रुपया पान-तम्बाकूके खर्चेसे बचाकर किसी बेंकमें जमा किया जाय तो २० वर्षमें १२० रु० हो जावेंगे। बहुतसे आदमी तो एक पैसेकी जगह छः छः पैसेके पान चाब जाते हैं। यदि ये पैसे जमा किये जावें तो २० वर्षमें ७००–८०० रु० हो जावेंगे। जो मनुष्य केवल दो आने रोजकी शराब पीता है, वह २० वर्षमें १००० रु० बरबाद कर देता है।

एक बार एक मालिकने अपने नौकरको सलाह दी कि कुछ रुपया बुरे दिनोंके लिए बचाकर रखना चाहिए। कुछ कालके बाद जब मालिकने नौकरसे पूछा कि "तुमने अपनी पूँजी कितनी बढ़ा ली?" तब उसने जवाब दिया कि "हुजूर, कुछ भी नहीं। मैंने निस्संदेह आपकी आज्ञानुसार जमा करना शुरू किया था, किन्तु कल इतने जोरसे वर्षा हुई कि तमाम रुपयोंकी शराब पी डाली।"

जो मनुष्य अपनी तथा अपने कुटुम्बका बिना किसी दूसरेकी सहायताके पालना करता है वह आत्मगौरवके असली अर्थको जानता है। प्रत्येक स्वावलम्बी मनुष्यको अपने गौरवकी रक्षा करना उचित है।

न्यायपूर्वक मनुष्यको केवल अपनी ही भलाईका खयाल नहीं रखना चाहिए, किंतु दूसरोंके प्रति जो उसके कर्तव्य हैं उनका भी पूरापूरा ध्यान रखना चाहिए। इसके अतिरिक्त अपने आपको कभी नीचेकी ओर नहीं गिराना चाहिए, सदा उच्च बनाना चाहिए और देवताओंसे कुछ ही न्यून समझना चाहिए। अपने उच्च अधिकारका, अपनी उच्च बुद्धिका, अपनी अद्भुत शक्तिका तथा पृथिवी पर अपने उच्चासनका सदैव स्मरण रखना चाहिए। जो मनुष्य इन सब बातोपर विचार करेगा वह अपनेको तुच्छ समझना तत्काल ही छोड देगा। अतएव हर एक मनुष्यको अपने गौरवकी रक्षा करना चाहिए। अपने शरीरका, अपने मनका, अपने चरित्रका सम्मान करना चाहिए। आत्मगौरव जो आत्मप्रियता पर निर्भर है, मनुष्यको उन्नतिकी पहली सीढी पर चढाता है। यह मनुष्यको उठाने, आगे चलाने, उसकी बुद्धिके बढ़ाने और उसकी दुशाके सुधारनेके लिए उत्साहित करता है। आत्मगौरव, स्वच्छता, पवित्रता, सत्यता, गंभीरता आदि अनेक उत्तम गुणोंकी खानि है। अपनेको नीचा समझना मानों अपनेको डुबो देना है और उस भयंकर चट्टानके नीचे गिरा देना है जिसकी तलीमें कलक और अपयश है।

किसी हद तक प्रत्येक व्यक्ति अपनी सहायता कर सकता है। हम उस घासके समान नहीं है जो नदीकी लहरमें फेंक दिया जाय और बहता चला जाय और जिसका सिवाय निशानके और कुछ नजर न आवे। हम अपने कार्योंमें स्वतन्त्र हैं और ऐसी शक्ति रखते हैं कि नदीकी लहरों पर अपनेको स्थिर रख सकते है। हममेंसे हरएक आदमी आचरणसम्बन्धी उन्नति कर सकता है, अपने विचारोको बढा सकता है और अच्छे काम कर सकता है। हम गम्भीरता और मितव्ययतासे जीवन व्यतीत कर सकते हैं, विपत्तिकालके लिए सामग्री

संचय कर सकते है, उत्तम पुस्तके पढ़ सकते हैं, बुद्धिमान् शिक्षकोंके उपदेश सुन सकते हैं, अपनेको ईश्वरीय शक्तिकी छत्रछायामे रख सकते हैं और उच्चउद्देश्योंको दृष्टिगत रखते हुए अपनेको उच्च कार्योंमें नियोजित कर सकते है।

एक कविका कथन है कि " अपनेको प्यार करना और समाजको प्यार करना एक ही बात है। " जो व्यक्ति अपनी उन्नति कर सकत है वह जगतकी उन्नति कर सकता है। वह अपनी व्यक्तितासे समाजकी संख्यामें एक सत्यवक्ता पुरुषकी वृद्धि करता है। समाज वहुतसे व्यक्तियोंके मिलनेसे वना है, इस लिए यदि किसी समाजका प्रत्येक व्यक्ति अपनी अपनी उन्नति कर ले तो सारे समाजकी उन्नति हो जायगी।(समाजोन्नति व्यक्तिगत उन्नतिका ही परिणाम है।)सर्वांग कभी पवित्र नहीं हो सकता जव तक कि उसके जुदा जुदा अग पवित्र न हों।(समाज व्यक्तिगत व्यवस्थाका प्रतिविम्व है।) ये सव स्वयंसिद्ध सिद्धांतोंकी पुनरुक्तियाँ है, किंतु पूर्ण प्रभाव डालनेके लिए स्वतःसिद्ध वाक्योंकी पुनरुक्तियाँ की ही जाती हैं।

जिस मनुष्यने अपनी उन्नति कर ली है, वह अपने निकटवासियोंकी उन्नतिमें वहुत कुछ सहायता दे सकता है। उसमे इस वातकी पूर्ण शक्ति है। उसकी दृष्टिकी सीमा वढी हुई है। वह दूसरोंकी उन त्रुटियोंको वहुत अच्छी तरह देख सकता है जो दूर करनेके योग्य है। उनको उन्नत अवस्थामें लानेके वास्ते वह हर समय सहायताके लिए तैयार है। वह स्वयं अपना कर्तव्य पालन कर चुका है और वलपूर्वक दूसरोको अपने समान कर्तव्यपालनके लिए वाधित कर सकता है। वह व्यक्ति किसी समाजकी उन्नति नही कर सकता जो स्वय

विषयवासनाओंकी कीचड़में फँसा हुआ पड़ा है। जो व्यक्ति स्वयं मदोन्मत्त और अपवित्र है वह दूसरोंको संयम या शुद्धता कैसे सिखला सकता है? वैद्योंके पड़ोसी प्रायः कहा करते हैं कि "वैद्यराज, पहले अपना तो इलाज कीजिए।"

इस कथनका यह तात्पर्य है कि जिस सुधार और उन्नतिकी हमको इच्छा है, हमें चाहिए कि पहले हम उसे स्वयं आरम्भ कर दें। हमको अपने मत और अपने विचारोंको अपने जीवनमें ही प्रकाशित करना चाहिए। हमें अपनेको आदर्श बनाकर दिखलाना चाहिए। यदि हम चाहते हैं कि दूसरोंकी उन्नति हो तो पहले हमें अपनी उन्नति करनी चाहिए। यदि हम चाहते हैं कि दूसरे लोग सच बोलें, चोरी न करें, किफायतसे खर्च करें तो हमें चाहिए कि हम पहले इन बातोंको करने लगें। दूसरे लोग हमें देखकर ही हमारे जैसा करने लगेंगे। हमको अपने मुँहसे एक शब्द भी निकालनेकी ज़रूरत न पड़ेगी। शराबी आदमी अगर किसीको शराब छोड़नेके लिए कहे तो क्या उसके कहनेका कुछ असर पड़ेगा? कदापि नहीं। परंतु यदि कोई साधु महात्मा इसका उपदेश करे तो सैकड़ों आदमियों पर असर पड़ सकता है। गरज यह कि प्रत्येक मनुष्यको स्वयं करके दिखलाना चाहिए। सबसे पहले उसे आत्मगौरव सीखना चाहिए।

जीवनकी असारता इस बातके लिए बड़ी प्रेरणा करती है कि बुरे समयके लिए कुछ संग्रह कर लेना चाहिए। ऐसा करना मनुष्यका धार्मिक आत्मिक और सामाजिक कर्तव्य है। जो मनुष्य अपने और विशेषकर अपने कुटुम्बके लिए संग्रह नहीं करता वह धर्मसे पराङ्मुख है और नास्तिकसे भी बुरा है।

जीवकी क्षणभंगुरता प्रत्यक्ष है। बड़ेसे बड़ा बलवान् और स्वस्थ मनुष्य भी क्षणभरमे किसी दुर्घटना अथवा रोगके कारण मृत्युका ग्रास बन जाता है। अतएव जीवनकी अस्थिरता पर हमे वैसा ही विश्वास चाहिए जैसा हमें मृत्युका निश्चय है। एक कहावत भी है कि "संसारमें किसी बातका भी निश्चय नहीं है जैसा मृत्युका, परंतु किसी बातका ऐसा अनिश्चय नही है जैसा मृत्युके समयका।"

मनुष्यके जीवनका कोई निश्चय नही। कितने ही तो पैदा होते ही मर जाते हैं, कितने दस पॉच दिनके होकर मर जाते है, बहुतसे २० वर्षके होनेसे पहले और बहुतसे ५० वर्षसे पहले मर जाते है। गिने चुने ही ६०, ७० वर्षके देखनेमें आते है, । ८०, ९० वर्षके तो कहा ढूँढे भी नहीं मिलते। यदि औसत लगाकर देखा जाय तो भारत-वासियोंकी आयु २०, २५ वर्षसे अधिक न होगी। इसका कुछ न कुछ कारण अवश्य है। विना कारणके कोई कार्य नहीं होता; परंतु दैव इसका कारण नहीं है। दैव या भाग्य ससारमे कोई वस्तु नहीं है। मनुष्य नियमानुसार पैदा होता है और नियमानुसार ही मरता है। नित्य यद्यपि देखनेमें आता है कि जीवनमें बहुतसी ऐसी घटनायें होती हैं जिनको लोग दैवी घटनायें कहा करते हैं, परन्तु यदि उन पर दीर्घ-दृष्टि डाली जाय तो वे जरूर किसी न किसी नियम पर स्थिर मिलेंगी। दैवकी घटना कोई नही होती। मनुष्य मरता है, यद्यपि इसकी बराबर कोई निश्चित बात नहीं है परन्तु मृत्युका भी कोई न कोई न कारण अवश्य होता है—विना कारणके मृत्यु नहीं आती।

यह मनुष्यका कर्तव्य है कि स्वास्थ्यसम्बन्धी नियमोंको भलीभाँति जाने और रोग, शोक, अकालमृत्यु आदि दुर्घटनाओंके लिए पहलेसे तैयार

हो रहे। प्रकृतिकी आज्ञा हमें सदा माननी चाहिए। प्रकृतिकी आज्ञाकी अवज्ञा करनेसे जो हानिकारक परिणाम होता है उससे हम कदापि नहीं बच सकते—प्रकृति अवश्य दण्ड देगी। चाहे हम लाख प्रार्थना करें किंतु प्रकृतिके दरबारमें हमें कदापि क्षमा न मिलेगी। ससारमें हमारा स्वामी हमारे अपराधको यदि हम भूलसे अथवा अज्ञानतासे कर बैठते है क्षमा भी कर देता है;परंतु प्रकृति न भूलको क्षमा करती है और न अज्ञानता को। प्रकृतिने हमको बुद्धि दी है हमारा कर्तव्य है कि हम उसे काममें लायें।

प्रकृतिके नियमोंको केवल जान लेनेसे ही काम नहीं चलता, हमको उनके अनुसार वर्ताव करना भी जरूरी है। सर्वशक्तिमान् परमात्मा हमारी अज्ञानताके कारण अपने नियमोंमें परिवर्तन नहीं करता। उसने हमको विवेकबुद्धि दी है जिससे हम उसके नियमोको समझें और उसका पालन करें, अन्यथा शोक दुःखादि परिणामोंको हमें सहन करना चाहिए।

हम प्रायः लोगोंको यह कहते सुना करते है कि "क्या कोई हमारी सहायता नहीं करेगा ?" ये निराशा और निरुत्साहके मृतक शब्द हैं। नहीं नहीं, त्रासजनक निकृष्टताके शब्द हैं, विशेषकर उस समय जब कि ये उन लोगोंके मुखसे निकलतें हैं जो किंचित् स्वार्थत्याग, संयम और मितव्ययतासे बड़ी आसानीके साथ आप ही अपनी सहायता कर सकते हैं।

वहुतसे आदमियोंको अभी यह बात सीखना है कि धर्म, ज्ञान, स्वाधीनता आदि उत्तम गुण उन्हींमेसे उत्पन्न हो सकते हैं। नियम कानून वगैरह उनको कोई लाभ नहीं पहुँचा सकते। उनसे वे संयमी या बुद्धिमान् नहीं बना सकते।

फिजूलखर्च लोग नियम कानून वगैरहका हास्य करते हैं और शराबी उनका अनादर करते हैं। दूरदर्शिता और इन्द्रियपराजयको वे निंदा और घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं और अंतमें अपनी विपत्ति और दुर्दशाका दोष दूसरोंके सिर मँढते है। वे वक्ता कितने उलटे मार्गपर जा रहे हैं जो अपने श्रोताओंको मितव्यय, संयम और आत्मगौरवका अभ्यास करानेके बदले, "क्या कोई हमारी सहायता न करेगा?" इन्हीं शब्दोंके लिए उत्तेजित करते रहते है। इन शब्दोंसे मन गिर जाता है और आत्मीय कल्याणके प्राथमिक सूत्रसे सर्वथा अनभिज्ञता प्रगट होती है।

सहायताका भाव मनुष्यमे स्वतः विद्यमान है। वह इसी लिए पैदा किया गया है कि अपनी उन्नति और वृद्धि करे और अपने लिए मोक्षमार्ग तलाश करे। जब निर्धनसे निर्धन व्यक्ति भी इन कामोंको कर चुके है तब कोई कारण नहीं कि क्यों प्रत्येक व्यक्ति इनको न कर सके। (वीरता और दृढ़ताकी सदा जय होती है।)

आजकल भारतमें भी अच्छा वेतन पानेवाले दस्तकारों और शिल्पकारोंकी संख्या बढ़ती जाती है। यदि ये लोग मितव्ययताका पालन करें तो इनकी प्रतिष्ठा, स्वाधीनता और सच्चरित्रतामें बहुत कुछ उन्नति हो सकती है और ये लोग उच्चावस्था पर पहुँच सकते है। परंतु ये लोग ऐसे अदूरदर्शी और अपव्ययी होते हैं कि न केवल अपनेको हानि पहुँचाते हैं किंतु जातिके लिए भी जिसके ये मुख्य अंग हैं, हानिकारक सिद्ध होते हैं। चढतीके समयमें तो ये लोग अपनी आमदनीको आँख मींचकर खर्च कर डालते हैं किंतु जब घटतीका समय आता है तो एकदमसे आपत्तिमें फँस जाते है। इस तरह धनका उपयोग नहीं होता किंतु दुरुपयोग होता है। यदि कभी बुढ़ापे अथवा बाल बच्चोंकी शादी वगैरहका खयाल करके ये लोग कुछ

थोड़ा बहुत जमा भी कर लेते हैं, तो बहुत करके देखनेमे आता है कि शादी विवाहसे पहले ही किसी न किसी व्यसनमें पड़कर सबका सब बरबाद कर देते हैं। मदिरापान और वेश्यासेवनकी तो मामूली आदत हो जाती हैं, इस कथनमें कोई अत्युक्ति नहीं है। इसकी सत्यताके लिए जरा दृष्टि पसारकर अपने पड़ोसमें देखिए कि कितना रुपया फिजूलखर्च होता है और कितना बचाया जाता है, कितना शराबकी भट्टीमें जाता है और कितना बेंक वगैरहमे जमा किया जाता है।

बढ़तीके दिन प्रायः बहुत ही घटतीके दिन होते है। इसमे संदेह नहीं कि बढ़तीके दिनोंमें प्रत्येक मनुष्यका कार्यव्यवहार उत्तम रीतिसे चलता है, आमदनी भी खूब होती है। लाखों मन माल रोज आता जाता है। सैकड़ों मालगाड़ियाँ रातदिन खचाखच भरी खड़ी रहती है। जगह जगह जहाजोंके बंदर कायम होते जाते है। हरएक आदमी खुशहाल और धनवान् मालूम होता है। परतु हम नहीं खयाल करते कि इन तमाम बातोंसे स्त्रीपुरुषोमें कुछ बुद्धिकी भी वृद्धि होती है अथवा, वे स्वार्थ और विषयवासनाओंसे चित्तको हटाकर सभ्यता और शिष्टाचारकी ओर भी झुकते हैं। हमारी समझमे तो सिवाय इसके कि पशुवत् इन्द्रियपोषण करते रहें और किसी धार्मिक अथवा सामाजिक कार्यमें उनका समय नहीं लगता।

यदि इस बाहरी सफलता पर ही दीर्घदृष्टिसे विचार किया जाय तो ज्ञात होगा कि जिधर देखो खर्च बढने जाते हैं। मजूरी बढ़ानेकी आवाज भी चारों ओरसे सुनाई पड़ती है; परंतु जितनी मजूरी बढती है, उतनी ही जल्द खर्च हो जाती है। असयमकी लत पड़ जाती है और वह दिन दिन बढ़ती जाती है। चाहे जितनी जियादह मजूरी

बढ़ा दो, लाभ कुछ नहीं होता। यदि कोई आज एक आनेकी शराब पीता है तो कल मजदूरी बढने पर वही दो आनेकी पीवेगा। अतएव जिस देश और जातिके लोग असावधान और अदूरदर्शी हैं उनको किसी प्रकारकी बढती अथवा वृद्धि लाभ नहीं पहुँचा सकती। जबतक वे मितव्ययता और दूरदर्शिताका पालन न करेंगे निर्धनता और दरिद्रताके अंधकूपमें पड़े रहेंगे।

यदि मनुष्यके जीवनका उद्देश्य केवल ' येन केन प्रकारेण ' रुपया पैदा करना ही होता, तो हम अपनी ऋद्धिवृद्धि पर अवश्य मोहित होते; किंतु मनुष्यके जीवनका उद्देश्य यह कभी नहीं है। उसमें शारीरिक अंगोंके अतिरिक्त प्रेम, उपकार, मित्रता आदिकी अनेक शक्तियाँ विद्यमान् हैं। उसके हृदय और मस्तकको वे ही स्वत्व प्राप्त हैं जो उसके मुख और पीठको हैं। उदरसे भिन्न उसमे एक आत्मा हैं। अतः ऋद्धिवृद्धिके साथ उसकी बुद्धि और आचरणकी उन्नति होना भी उतना ही आवश्यक है जितना कि नसों और हाड़ोंकी उन्नतिका होना अर्थात् (मानसिक, शारीरिक और आत्मिक तीनों प्रकारकी उन्नति करना मनुष्यके जीवनका उद्देश्य है।)

केवल धन ही बढतीका चिह्न नहीं है। मनुष्यके स्वभावका भी एकसा रहना जरूरी है; क्योंकि जब मनुष्य अपने खर्चको बढ़ाता है अथवा अपनी सम्पत्तिमें सैकड़ो रुपये सालकी वृद्धि करता है, तब उसका स्वभाव नीचता और निर्बलताकी ओर अधिक झुक जाता है। जनसाधारणका यही हाल है। जबतक शारीरिक उन्नतिके साथ साथ मानसिक और आत्मिक उन्नति न हो तबतक धनवृद्धि भोगविलासकी सामग्री संचय करदेनेके सिवाय और कुछ कार्यकारी नहीं है। यदि किसी अशिक्षित पुरुषकी आमदनी दुगुनी कर दी जाय, तो इसके सिवा और कोई

परिणाम न निकलेगा कि उसके भोगादिकके साधन बढ जावेंगे। इस प्रकारकी वढतीसे जिसको अर्थशास्त्रके ज्ञाता देशकी वढती कहा करते है कुछ भी लाभ नहीं होता। जब तक सच्चरित्रताके सिद्धान्तसे अन-भिज्ञता रहेगी, हमारी रायमे, इस प्रकारकी बढतीसे लाभके स्थानमें उलटी हानि ही होगी। केवल विद्या और सच्चरित्रता ऐसे गुण हैं जो मनुष्यके जीवनको प्रतिष्ठित वना करते हैं और केवल इन्ही सद्गुणोंकी वृद्धि किसी समाजकी वास्तविक उन्नति और वृद्धिका सच्चा चिह्न है।

एक बार मेंचेस्टरके लाट पादरीने अपनी वक्ततामें दक्षिण इग्लैंडके एक पादरी साहबके पत्रका हवाला दिया था। उन्होंने लिखा था कि "मुझे इस वातकी तो बड़ी खुशी है कि खेतोंमें काम करनेवालोंकी मज-दूरी बढ़ गई है; परतु इस बातका शोक है कि मजूरीकी इस वढ़तीका यह परिणाम हुआ कि लोग पहलेसे अधिक शराब पीने लगे। यदि इस बढ़तीका यही उपयोग है तो हम इसको ईश्वरीय कृपा कदापि नहीं कह सकते।" किसी देश या समाजकी सच्ची वढती इस बातमे नहीं है कि वह धनदौलतमें बढ़ रहा है। यद्यपि धनदौलतकी वढती भी एक जरूरी चीज है किंतु वास्तविक वढती इस बातमें है कि वह धर्म और सच्चरित्रतामें भी बढ़ रहा है और सुखसतोपादिसे पूरित है।

उपर्युक्त विचारोंसे हमारा यह कदापि तात्पर्य नहीं है कि कृपणताका या कंजूसीका अभ्यास किया जाय। हम कृपण मनुष्योंको घृणाकी दृष्टिसे देखते है। हम केवल इस कारण विवाद करते हैं कि मनुष्यको भवि-ष्यके लिए कुछ जमा कर लेना चाहिए। अच्छे समयमें बुरे समयके लिए कुछ वचाकर रख लेना चाहिए। जरूरतके लिए पहलेहीसे तैयार रहना चाहिए। इतनी पूँजी पास रखनी चाहिए कि जो बुढ़ापेमें काम

आवे, जिससे आत्मगौरव बना रहे, सुख-शांति प्राप्त हो और समाज उन्नति करे। मितव्ययताका लोभ, लालच अथवा स्वार्थसाधनसे कुछ सम्बन्ध नहीं। यह असलमें इन दुर्गुणोंसे सर्वथा प्रतिकूल है। इसका यही अभिप्राय है कि स्वतंत्रताकी रक्षा हो और धनका सदुपयोग हो; न्यायपूर्वक धन उपार्जन किया जाय और किफायतसे काममें लाया जाय।

तीसरा अध्याय।

अदूरदर्शिता।

(विद्वानोंके वाक्य।)

प्रत्येक दशामें सुख उन लोगोंको प्राप्त है जिन्होंने अपनेको वशमें कर रक्खा है।

जिन लोगोंके बालबच्चे हैं उन्होंने मानों रुपयेकी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले रक्खी है।

* * * * *

यह तो कोई नहीं कह सकता कि आजकलके लोग परिश्रमी नहीं हैं। परिश्रमी अवश्य है और रुपया भी जी तोड़कर पैदा करते हैं, यहाँ तक कि रुपया पैदा करनेमें तन-बदनकी सुध भी भूल जाते हैं, परंतु बात यह है कि दूरदर्शी नहीं है—दूरदर्शिताका उनमें अभाव है। इसी कारण उनकी दशा शोचनीय है। आज जो कमाते है उसे आज ही खर्च कर डालते हैं; कलके लिए कुछ बचाकर नहीं रखते। यदि दैवसे आज नौकरी छूट जाय, तबीयत खराब हो जाय, तो बस कल सफाया है; घरमें खानेको अनाज तक न निकलेगा। यह दशा केवल मजूरों अथवा छोटे लोगोंकी ही नहीं है; बड़े बड़े लोगोंकी भी यही दशा है। सौ सौ रुपये मासिक पानेवालों तकका यह हाल है कि महीनेके पहले २० रोज तो कुशलतासे बीत जाते हैं, शेष १० दिन रो-झींककर कठिनाईसे निकल पाते हैं। आमदनीका कम होना दुःखका कारण नहीं है और न आमदनीका बढ़ना सुखका कारण है।

चाहे जितनी आमदनी बढ़ जाय उनकी दशा एकसी रहती है। वे अपनी आदतको नहीं छोड़ते। आमदनी बढ़नेमें देर लगती है किंतु खर्च बढ़ते देर नहीं लगती।

व्यापारमें सदा ही परिवर्तन हुआ करता है; किंतु अदूरदर्शी और अपव्ययी मनुष्य उससे कुछ शिक्षा ग्रहण नहीं करते और भविष्यके लिए कोई सामान जमा नहीं करते। अदूरदर्शिता क्या है मानों एक दुःसाध्य रोग है।

एक महाशय अपनी रिपोर्टमें एक ऐसे देशका हाल लिखते है कि यदि वहाँ दो सप्ताहके लिए भी काम बंद कर दिया जाय तो कारीगर लोग भूखों मरने लगें। यदि कभी हड़ताल डाली जाती है, तो माल असबाव बाजारमें विकने लगता है, सहायताके लिए अपील पर अपील होने लगती है और धनवानोंके दरवाजे खटखटाये जाते है। यह अदूर-दर्शिता ही शिल्पकारोंके पतनका मुख्य कारण है। इसीसे जातिकी दुर्दशा है। हमारी यह दुर्दशा हमारी ही मूर्खता और हमारे ही स्वेच्छाचारसे है। यद्यपि परमात्माने दरिद्रताको उत्पन्न किया है; किंतु यह कोई आवश्यक बात नहीं है कि निर्धन व्यक्ति बुरी दशामें रहे। दुश्चरित्रता और विशेषकर अदूरदर्शितासे विपत्ति और अभाग्यके कारण पैदा हो जाते हैं। निर्धनसे निर्धन मनुष्य भी यदि दूरदर्शी और सदा-चारी रहे तो सुखपूर्वक जीवन व्यतीत कर सकता है।

इंग्लैंड आदि देशोंमें शिल्पकारोंकी दशा सुधारनेके लिए बहुत कुछ प्रयत्न किया गया। उन लोगों पर जो कर लगे हुए थे, वे भी तोड़ दिये गये; किंतु उनकी दशा ज्योंकी त्यों रही। उन्होंने कोई किसी प्रकारकी उन्नति नहीं की। न उन्होंने सुधारके नियमोंको अपने लिए

नियोजित किया और न उनका स्वयं अभ्यास किया। सुधारका मूल अभिप्राय व्यक्तिगत उन्नति है। यदि किसी समाजके उद्देश बुरे हैं तो समझना चाहिए कि उसका प्रत्येक सदस्य बुरा है और यदि सदस्य बुरे हैं तो कुल समाज बुरा है।

फ्रैंकलिन महोदयका कथन है कि " राज्यकी ओरसे हम पर जो कर लगे हुए हैं वे निस्संदेह कडे हैं; परन्तु यदि केवल ये ही राजकीय कर हों तो हम वड़ी आसानीसे इनको अदा कर सकते हैं। हम पर तो और भी बहुतसे टैक्स लगे हुए हैं जो उनसे कहीं जियादह भारी हैं। हमको इतना ही टैक्स तो आलस्यसे, इससे दुगुना घमंडसे और चौगुना मूर्खतासे देना पडता है। अर्थात् इन दुर्गुणोंके कारण हमारा कितना ही रुपया और कितना ही समय नष्ट हो जाता है। यदि इस समयका सदुपयोग किया जाय तो टैक्ससे दुगुना तिगुना रुपया जमा हो जाय। " ऐसी दशामें पाठक स्वयं विचार सकते हैं कि हमारा सरकारी टैक्सोंकी शिकायत करना कहाँतक ठीक है। क्या कोई राजा हमको इनसे मुक्त कर सकता है? कदापि नहीं।

एक बार वहुतसे आदमी जमा होकर लार्ड जान रसलके पास गये और उनसे प्रार्थना करने लगे कि "हमारे टैक्स माफ कर दिये जायें।" लार्ड महोदयने उत्तर दिया कि "तुम लोग सरकारी टैक्सकी शिकायत करते हो, जरा सोचो तो कि तुमने स्वयं अपने ऊपर कितने टैक्स लगा रक्खे हैं। तुम लाखों रुपया प्रतिवर्ष केवल शराबमें खर्च कर देते हो। क्या कोई सरकार इतना कर तुम पर लगा सकती है? यह सर्वथा तुम्हारे अधिकारमें है कि विना किसी अपील या कमीशनके इन टैक्सोंको कम कर दो। "

सिर्फ इस बातकी हाय हाय करनेसे कि कर भारी हैं, कानून खराब हैं, कोई काम नहीं चल सकता। किसी राज्यके अन्यायसे इतनी हानि नहीं पहुँच सकती जितनी बुरी इच्छाओंसे पहुँचती है। लोग प्रायः आलस्य, अपव्यय, असंयम और कुचरित्र आदि बुरी वासनाओंसे ही अपने लिए हानिकारक हो जाते हैं। यह बात प्रत्यक्ष है कि जो लोग बिना उद्देश्य या नियमके जीवन व्यतीत करते हैं और अपनी कुल आमदनी बिना किसी बचतके खर्च कर डालते हैं, वे मानों पहलेसे ही किसी आपत्तिमें फँसनेकी तैयारी कर रहे हैं। केवल वर्तमानकी चिंता करना क्या है मानों भविष्यमें भूखो मरना है। उन बेचारोंसे क्या आशा की जा सकती है जिनके जीवनका यही उद्देश्य है कि आज तो खा-पी लेवें, कौन जाने कल जिये या मरे; या जो कहते हैं कि आज तो चैनसे गुजरती है कलकी परमात्मा जाने।

यद्यपि प्रत्यक्षमें इन बातोंसे निराशा प्रतीत होती है तथापि बिल्कुल निराश न होना चाहिए। जितनी शिक्षाकी उन्नति होती जायगी उतनी ही हमारी आर्थिक दशा सुधरती जायगी। हम अपने धनका सदुपयोग करने लगेंगे और नेकी और ईमानदारीसे जीवन व्यतीत करने लगेंगे। इसमें संदेह नहीं कि इस कार्यमें बहुत समय लगेगा, अच्छे कामोंमें समय लगा ही करता है; परंतु हमको साहस और धैर्य नहीं छोड़ना चाहिए।

चौथा अध्याय।

बचतके उपाय।

(विद्वानोंके वाक्य।)

आत्मनिर्भरता और स्वार्थत्यागसे यह शिक्षा मिलती है कि मनुष्यको उचित है कि आजीविकाके अर्थ शक्तिभर परिश्रम करे, सावधानीसे व्यय करे और भविष्यके लिए क्रम क्रमसे बचाकर जमा करे।

श्रमसे प्रेम करो। यदि पेटके लिए इसकी जरूरत नहीं है तो न सही, सम्भव है कि कभी वैद्योपचार अथवा औषधोपचारके लिए इसकी जरूरत पड़ जाय। यह शरीर तथा मन दोनोंको लाभदायक है। इससे आलस्य दूरसे ही भाग जाताहै।

जो माता पिता अपने बालकोंको कार्यव्यवहार नहीं सिखलाते वे उनको चोर और डाकू बनना सिखलाते हैं।

* * * * *

आजकल देखनेमें आता है कि बहुतसे कारीगर दूकानदारों और नौकरी पेशावाले बाबू लोगोंसे कहीं जियादह कमाते हैं। मैट्रिक-पास बाबुओंको २०) रु० की क्लर्की मुश्किलसे मिल पाती है। बी. ए. पास ५०) रु० की जगह पर रख लीजिए; पर अनपढ मिस्त्री, दर्जी वगैरह शिल्पकार दो दो रुपये रोज तक कमा लेते हैं। परतु इतने पर भी ये लोग सदा बुरे हाल रहते है। बनियेके ऋणसे इनका पीछा नहीं छूटता। भारतकी ब्राह्मण, वैश्य आदि उच्चजातियोंका भी यही हाल है। आमदनी इनकी कम नहीं, खाने पीने वगैरहके दैनिक खर्च भी अधिक नहीं; पर बात यह है कि ५, ७ वर्ष भूखों रह कर तन-मन

मसोस कर जो कुछ पैदा करते हैं वह, तथा और कर्ज लेकर लड़के लड़कियोंके विवाह-शादियोंमें खर्च कर डालते है और जातिके भाइयोंको दावतें देकर क्षणमात्रके लिए नाम पैदा कर लेते है । बहुतसे महात्मा ऐसे भी हैं कि किसके शादी विवाह, जो कुछ बाप दादा छोड़ गये हैं उसे, जो स्वयं कमाते है उसे, तथा और भी कर्ज लेकर खर्च करते जाते हैं--गाँठमें फूटी कौड़ी भी नहीं रखते । उनका रुपया शराबकी भट्टी, हलवाईकी दूकान और वेश्याके सत्कार-पुरस्कारके लिए नियुक्त है।

हम लोगोंका यह स्वार्थ और अपव्यय किसी प्रकार प्रशंसनीय नहीं। जबतक हम इस स्वार्थ और अदूरदर्शिताका त्याग न करेंगे, नीच अवस्थामे ही पड़े रहेंगे। अदूरदर्शिता निरा पाप ही नहीं है, किंतु अत्यंत क्रूरता भी है। यह बात कितनी स्वार्थयुक्त है कि किसी कुटुम्बका नेता अपनी सारी आमदनी अपने लिए ही भोगविलासमें व्यय कर दे। उस पर बहुत से भार हैं। उसका कर्तव्य है कि अपने बच्चोंका पालन पोषण करे, उनकी शिक्षाका यथोचित प्रबध करे और अपने तथा अपने कुटुम्बके लिए सामग्री संचय करे। क्या आश्चर्य है कि वह कल बीमार हो जाय अथवा मर जाय ! यदि उसके पास पूँजी नहीं है तो कल ही उसके बालबच्चे भूखों मरने लगेंगे।

उन लोगोंको शिक्षा देना व्यर्थ जान पड़ता है जिन्हें अपने हानि-लाभकी चिन्ता नहीं और अपनी उन्नति अवनतिकी परवा नहीं। उनके मित्रोंका कर्तव्य है कि उन्हे अच्छी तरह समझा दें कि यदि तुम गौरव और प्रतिष्ठा प्राप्त करना और स्वार्थके अंधकूपसे निकलना चाहते हो, तो तुमको दूरदर्शिता, मितव्ययता और सयमका अभ्यास करना योग्य है और आत्मनिर्भरताका आश्रय लेना अवश्य है ।

आक्सफोर्डके एक जूता बनानेवालेका कथन है कि जगतमे शिल्प-कार सबसे जियादह स्वतंत्र है। वह किसीके अधीन नहीं होता। वह जहाँ बैठ जाता है वहीं अपनी रोजी कमा लेता है। उसको किसीके सहारेकी जरूरत नहीं। यदि वह साधारण परिश्रमी और संयमी है तो भी सदा हृष्टपुष्ट और प्रसन्नचित्त रहेगा। उसके खानपान रहन-सहनमें कोई कमी न जायगी। वह सदा अपनी गृहस्थीको उत्तम रीतिसे चला सकेगा, अपने बालकोंको शिक्षा दे सकेगा और समय-समय पर दूसरोंकी भी सहायता कर सकेगा।

कितने शोककी बात है कि लोग अच्छी आमदनी होते हुए भी अपना कुल रुपया बुरीवासनाओंकी तृप्तिके लिए व्यय कर दें। कोई-कोई तो आमदनीका आधा भाग केवल मदिरापानमें ही उड़ा देते हैं और दूसरे व्यसनोंका तो पूछना ही क्या है।

इग्लैंडके एक शिल्पकार मिष्टर रोबेकने एक आमसभामें अपने व्याख्यानमें कहा था कि "जिस शिल्पकार अथवा दूकानदारकी आम-दनी अच्छी खासी है क्या कारण है कि वह पशुवत् असभ्यतासे रहता है ? क्यों वह ऐसी दशामें रहता है इसका कोई कारण नहीं माल्रूम होता। उसको एक सभ्य शिक्षित पुरुषकी तरह रहना चाहिए। उसका घर मेरे घरके समान होना चाहिए। जब मैं दिनभर श्रम करके शामको घर जाता हूँ तो अपनी प्यारी प्रफुल्लचित्ता विदुषी स्त्रीको देखकर सारा श्रम भूल जाता हूँ। मेरे एक पुत्री है। वह भी अपनी माताके अनुरूप है। मैं यह भी पूछना चाहता हूँ कि जब कोई व्यक्ति श्रम करके घर जाता है तब उसके खानेकी मेज मेरी मेजकी तरह सजी हुई क्यों नहीं रहती ? उसकी स्त्री और बालबच्चे साफ सुथरे क्यों नहीं रहते ? हम

सब जानते हैं कि ये लोग इतनी आमदनी रखते हुए भी अपनी स्त्री और संतानको अच्छा कपड़ा नहीं पहना सकते और अच्छा खाना नहीं खिला सकते। इनका सारा रुपया शराबकी दूकान पर चला जाता है। इन लोगोंको अपनी कमाई उसी तरह अपनी बुद्धिके बढ़ाने और मस्तिक शक्तिकी उन्नतिमें व्यय करनी चाहिए जिस तरह मैं अपनी कमाईको व्यय करता हूँ। इन लोगोंको यह बात अच्छी तरह समझा देनी चाहिए। जो इन बातोंको न बतलाकर उनकी झूठी प्रशंसा करता है, वह उनका मित्र नहीं, शत्रु है।"

पूर्वकालमें दासत्वका सर्वत्र प्रचार था। शिल्पकारी तथा मजदूरीका काम दासोंसे ही लिया जाता था; परंतु उन्हें कोई वेतन या मजूरी नहीं दी जाती थी। मालिक अपनी इच्छानुसार उन्हे खाना कपड़ा दे दिया करता था। गाय, बैल, भैंसोंकी तरह मालिकका उन पर अधिकार था। मालिक जिसे चाहे जिस दाममें बेच देता था। इस कारण उन बेंचारोंको कभी जोड़ने या रखनेका अभ्यास नहीं हुआ। बचानेसे क्या लाभ है, इसकी आवश्यकताको उन्होंने कभी नहीं समझा। इसी तरह उन्हें अदूरदर्शिताका अभ्यास हो गया। यह अवगुण उनमें पूर्वसंस्कारवश अबतक विद्यमान है। परंतु अब वह समय नहीं रहा। अब दासत्वका मुँह काला हो गया है। सब स्वतंत्र और स्वाधीन है। इस अवस्थामें हमे अपने अवगुणको दूर कर देना उचित है। आत्मगौरव और संयमका पालन करना हमारा मुख्य धर्म है। भावी सुखके लिए वर्तमान सुखको कुछ विचारपूर्वक भोगना योग्य है। यही बातें हैं जिनसे हमारी दशा सुधर सकती है और हम अपनेको उन्नत अवस्था पर पहुँचा सकते हैं।

कुछ काल पहले शिल्पकारोंकी भले ही छोटे दर्जेके मनुष्योंमें गणना हो, परतु अब वह बात नहीं है। अब उनका यथेष्ट आदर है। कलाकौशल्यका चारों ओर आन्दोलन हो रहा है; नित्य नवीन नवीन आविष्कार हुआ करते हैं, तरह तरहके कल कारखाने खुलते जाते हैं। प्रत्येक जाति और समाजमें विद्याका प्रचार बढता जाता है। भारतमें जितनी जातीय सभायें होती हैं, उन सबमें शिल्पविद्याके लिए जोर दिया जाता है, छात्रवृत्तियाँ देकर विद्यार्थी जापान, अमेरिकादि देशोंमें शिल्पविद्याओंके सीखनेके लिए भेजे जाते हैं। शिल्पकारोंकी आमदनी भी नित्य बढ़ती जाती है, परन्तु शोक है कि भारतीय शिल्पकारोंका धन बुरी तरह खर्च होता है। यही कारण है कि वे नीच अवस्थामें पड़े हुए है। उन्होंने स्वय अपनेको ऐसा बना रक्खा है। आत्मगौरव क्या वस्तु है इसका उन्हें दिग्दर्शन भी नहीं हुआ है। वे काम अवश्य करते हैं, पर मनमें सकोच करते है। उनका विचार है कि यह काम जो हम कर रहे हैं बुरा है; परन्तु यह उनकी भूल है। कोई काम बुरा नहीं। सर्व प्रकारका परिश्रम प्रशसनीय है। यह केवल आलस है जिसकी कृपासे मनुष्य नीच और घृणित रहता है। भारतके नवयुवकोंको इस पर विशेष लक्ष्य देना चाहिए। यदि ब्राह्मण कपड़ा बुननेका काम करे, वैश्य दर्जी अथवा बढई लुहारका काम करें तो इसमें कोई लज्जाकी बात नहीं है। काम करनेमें लज्जा नहीं, लज्जा खाली बैठनेमें है। इस बातमें हमें जापान, अमेरिका आदि देशोंसे शिक्षा लेनी चाहिए। वहाँ प्रथम तो भारतके समान जातिपाँतिकी प्रथा नहीं है, दूसरे एक जाति या समूहका कोई एक नियत कार्य नही है। जिस तरह भारतमें बढईका बाप भी बढईका काम करता है; वह स्वय बढईका काम करता है और उसके बेटे पोते भी बढईका काम करेंगे। इस

तरह उन देशोंमें प्रथा नहीं है। वहाँ जिस मनुष्यमें जैसी बुद्धि और योग्यता होती है वैसा ही काम वह करता है। वहाँ सम्भव है कि बाप जूते गाँठनेका काम करता हो और बेटा कालेजमें प्रोफेसर हो। इससे बुद्धिमानोंको उन्नति करनेका मौका मिलता है और मूर्ख उन्नतिमें बाधक नहीं होते।

मिस्टर स्टर्लिंगका कथन है कि "यदि कोई शिल्पकार अपने नित्यके कार्यको चाहे वह कितना ही नीचे दर्जेका क्यों न हो, उच्च विचारोंसे करता है, तो समझना चाहिए कि वह सच्चे दिलसे अपने कर्तव्यका पालन कर रहा है और अपने जीवनको लाभ और भलाईके लिए उन्नत कर रहा है।" परन्तु शिल्पकारोंने ऐसा नहीं किया और न दूसरोंने उनकी यथेष्ट सहायता की। इसी कारण श्रम नीच और घृणित समझा जाता है।

आमदनीके खयालसे जैसा हम पूर्वमें कह आये हैं शिल्पकार औरोंसे कदापि गिरे हुए नहीं है। इंजीनियर फौजी अफसरोंसे जियादह कमाता है। अच्छे कारखानेका मिस्त्री मैट्रिकपास क्लर्कोंसे जियादह पैदा करता है। मास्टर टेलर, स्कूलके मास्टरोंसे अच्छा रहता है।

चतुर शिल्पकार यदि चाहें तो सभ्य शिक्षित पुरुषोंके समान गौरव और प्रतिष्ठा प्राप्त कर सकते हैं; किंतु कई कारण उनकी उन्नतिमें बाधक होते हैं। वे अवकाश मिलने पर अपनी उन्नति नहीं करते। यद्यपि उनके पास धन काफी होता है, किंतु वे शिक्षित नहीं होते। उनको अच्छी तरह यह बात समझ लेना चाहिए कि समाजमें मनुष्यकी प्रतिष्ठा उसकी आमदनीसे नहीं, किंतु बहुधा उसकी बुद्धिमानी और सच्चरित्रतासे की जाती है। चूँकि वे लोग इन बातोंको भूले हुए है,

अपव्ययी हैं, अपनी सारी आमदनीको विषयवासनाओंकी पूर्तिमे ही व्यय कर देते हैं और आत्मोन्नतिकी स्वप्नमें भी रंच मात्र परवा नहीं करते हैं। इसी कारण वे समस्त सामाजिक सुखोंसे वंचित कर दिये गये हैं, बल्कि यह कहना चाहिए कि उन्होंने स्वयं अपनेको उन जातीय अधिकारोंसे वंचित कर लिया है जिनसे लाभ उठानेका स्वत्व उन्हें प्रकृतिके नियमानुसार प्राप्त है।

यद्यपि उनकी आमदनी जियादह है, किंतु वे लोग प्रायः रहन-सहंन और आचरणमें गिरे ही रहते हैं। चाहे कोई शिल्पकार कितना ही चतुर क्यो न हो, परन्तु वह अपना हाल वैसा ही बुरा बनाये रखता है जैसा कि उसके दूसरे साथी रखते है। जब देखो उसके बदन पर मैले कुचैले कपड़े ही दिखाई देते हैं। नहाने धोने, बाल बनवाने, कंघा करनेका तो वह नाम भी नहीं जानता। हाथ पैर मैलसे काले और बाल धूलसे सफेद हुए रहते हैं। बुद्धिमानीके कारण वह जो जियादह रुपया कमाता है, वह भी उसके लिए हानिकर हो जाता है। वह चाहे तो बड़े आरामसे रह सकता है, अच्छे कपड़े पहिन सकता है, जरूरी चीजें खरीद सकता है, परंतु वह ऐसा नहीं करता। हर हफ्तेमें उसकी सारी आमदनी नष्ट हो जाती है। वह एक कौड़ी भी जमा नहीं करता। जब कभी काममें कमी हो जाती है अथवा उसको कोई रोग हो जाता है तो सब सफाया हो जाता है।

अब प्रश्न यह है कि इन बुराईयोंके दूर करनेका क्या उपाय है? कुछ लोग कहते हैं कि उत्तम शिक्षा होना चाहिए, कुछ कहते है कि वह शिक्षा दी जाय जिसमें धर्म और सच्चरित्रताके सिद्धांत उनके हृदयमे अंकित हो जावें, कुछ कहते हैं कि नहीं, जब तक अच्छे

घर, अच्छी स्त्रियाँ और अच्छी मातायें न होंगी तब तक उन्नति न होगी। निस्सन्देह ये सब उन्नति और सुधारके कारण है। यह एक प्रत्यक्ष बात है कि आजकल चारों ओर अज्ञानता फैली हुई है। जब तक यह अज्ञानता दूर न की जायगी, छोटे दर्जेके मनुष्योंकी उन्नति कदापि नहीं हो सकती। उनकी दशामें एकदम परिवर्तन कर देना चाहिए और उनको प्रारम्भसे ही दूरदर्शिता और इन्द्रियदमनका अभ्यास कराना चाहिए।

हम प्रायः सुना करते हैं कि ज्ञान बल है, परन्तु यह कभी नही सुना कि अज्ञानतामें भी बल है। तथापि जगतमें अज्ञानताका साम्राज्य है। जिधर देखो उधर अज्ञानता ही फैली हुई है। अज्ञानताके कारण ही जेल और पुलिसके दर्शन होते हैं। अतएव हमें इसके कहनेमे तनिक भी सकोच नहीं होता कि आजकल अज्ञानतामें भी बल है। इसका मुख्य कारण यह है कि अभी तक भारतवर्षमें विद्याका प्रकाश बहुत कम लोगों तक पहुँचा है। जब इसका सर्वत्र प्रकाश हो जायगा, सब कोई पढ-लिखकर दूरदर्शी और विचारशील हो जावेंगे, तब विद्याका मूर्खता पर अधिकार हो जायगा। किंतु अभी वह समय दूर है।

जेलखानोंके रजिस्टरोंको देखिए १०० कैदियोंमेंसे ९९ मूर्ख और अज्ञानी निकलेंगे। शराबकी भट्टी पर जाकर देखिए वहाँ भी ९९ अशिक्षित ही मिलेंगे। हमारे पतनका मूल कारण हमारी सामाजिक त्रुटियाँ हैं जो अज्ञानताके कारण पाई जाती है। इन त्रुटियोंके दूर करनेके लिए हम शक्तिभर उद्योग करते है, सभायें स्थापित करते है, धन और श्रम भी व्यय करते है किंतु अज्ञानता इस हद तक बढ़ी हुई है कि कभी कभी हमें निराशा हो जाती है, हमारा उद्योग निष्फल जाता है।

इस अज्ञानताका ही प्रताप है कि हजारों आदमी स्वास्थ्यसंबंधी नियमोंका पालन नहीं करते और अपनी असावधानीसे अकालमृत्युके ग्रास हो जाते हैं। यद्यपि स्वास्थ्यसम्बन्धी अनेक ट्रेक्ट लिखे जाते हैं और सर्वसाधारणमें वितरण भी किये जाते हैं, पर जिनके लिए वे लिखे जाते हैं वे पढ भी नहीं सकते। उनको पढ़कर उन पर विचार करना और उनके अनुकूल चलना तो कहाँ? यह सब अज्ञानताका परिणाम है। अज्ञानताकी इस बलिष्ठ शक्तिको मंद करनेके लिए ज्ञानकी आवश्यकता है। जैसे सूर्योदयसे अंधकार नाश हो जाता है, उल्लू चमगीदड़ वगैरह अनेक दुष्ट जीव अदृश्य हो जाते हैं, उसी तरह ज्ञानका प्रकाश होते ही अज्ञानरूपी अंधकार नष्ट हो जायगा। जनसाधारणमें शिक्षाका प्रचार करो, विद्याका प्रकाश करो, दूषण स्वतः दूर हो जावेंगे। शराबकी भट्टियाँ और जेलखाने कहीं ढूँढे भी न मिलेंगे।

यह बात भी स्मरण रखना चाहिए कि केवल शिक्षा ही काफी नहीं है। चतुर मनुष्य दुराचारी भी हो सकता है। जितना चतुर होगा उतना ही दुराचारी भी होगा। अतएव शिक्षाकी नीव धर्म और सच्चरित्रता पर स्थित होनी चाहिए, कोरी शिक्षा किसी भी कामकी नहीं, उससे बुरी वासनायें दूर नहीं हो सकतीं। बुद्धिकी वृद्धिका सच्चरित्रता पर बहुत कम प्रभाव पड़ता है। बहुतेरे पढ़े लिखे मनुष्य अदूरदर्शी, अपव्ययी और व्यभिचारी देखनेमें आते हैं। अतएव यह अत्यंत आवश्यक है कि शिक्षा धार्मिक और नैतिक सिद्धातों पर स्थिर हो।

बहुतसे आदमी कहा करते हैं कि मजूर लोग निर्धन होते हैं, इसी कारण समाजमें उनकी कोई कदर नहीं होती। परतु यह सत्य नहीं है। आप उनकी आमदनी दूनी कर दीजिए पर उनकी दशा ज्योंकी त्यों

रहेगी। उनके सुखमें कुछ भी बढती न होगी । कारण कि सुख रुपयेसे नहीं है। रुपया बढनेसे उलटी उनकी बुरी आदतें बढ जायँगी।

सच्चा सुख ज्ञानसे ही प्राप्त हो सकता है। अतएव जिस तरह हो ज्ञानप्राप्तिके लिए उद्योग करना चाहिए। उच्चजातिके पुरुषोंका कर्त-व्य है कि वे नीच जातियोंको शिक्षा और उपदेशसे ऊपर उठावें। ये जातियाँ स्वयं अपनेको उठानेमें असमर्थ हैं, पहले आप उन्हें सहायता दें फिर वे स्वतः अपनेको संभाल लेंगी ।

जीवनमें विचारनेकी दो बातें हैं--रुपया पैदा करना और उसको व्यय करना। इसके लिए विचार और दूरदर्शिताकी आवश्यकता है। और ये गुण उत्तम शिक्षाके द्वारा ही प्राप्त हो सकते हैं। एक विद्वानका कथन है कि सुशिक्षाका मूल्य धनसे अधिक है। सुशिक्षासे मानसिक, शारीरिक और सर्व प्रकारकी उन्नति हो सकती है। परंतु स्मरण रहे शि-क्षाका सदुपयोग करना चाहिए। जब शिक्षाका प्रचार हो जायगा, तब सब समझ जायँगे कि ईमानदारीसे शक्तिभर परिश्रम करके कमाना चा-हिए और सदा आमदसे कम खर्च करके कुछ न कुछ भविष्यके लिए बचाकर रखना चाहिए।

पाँचवाँ अध्याय।

उदाहरण।

(विद्वानोंके वाक्य।)

उदाहरणों द्वारा ही सफलताकी सम्भावना की जाती है।

स्वावलम्बनसे ही मार्ग प्रगट होता है।

जिस प्रकार किसी राज्यके धनधान्यकी वृद्धिके लिए उत्तम प्रबंधकी आवश्यकता है उसी प्रकार एक कुटुम्बकी बढतीके लिए भी समीचीन प्रबंधकी आवश्यकता है।

सम्यक् आचरण सम्यक् श्रद्धानपूर्वक होता है, किंतु सम्यक् आचरणके विना सम्यक् श्रद्धान कदापि श्रीवृद्धिको प्राप्त नहीं कर सकता।

* * * *

मितव्ययताका वास्तविक अर्थ गृहप्रबन्ध है। इसका यह अभिप्राय है कि हम अपनी अमदनीका ठीक ठीक हिसाब रक्खें, उसको उचित रीतिसे खर्च करें, फिजूलखर्चीको दूर करें, विवेक और दूरदर्शितासे काम लें, किसी भी चीजको फिजूल न समझें, हर एक चीजसे जहाँ तक हो सके लाभ उठावें और रुपयेको केवल बचानेके अभिप्रायसे ही न बचावें, किंतु इस लिए बचावे कि वह जरूरतके वक्त अपने और दूसरोंके काम आजाय।

जिन लोगोंने इस उद्देश्यसे थोड़ा थोड़ा भी बचानेका अभ्यास किया है उन्होंने थोड़े ही दिनोंमें बहुत कुछ जमा कर लिया है और उस रुपयेसे अपने कुटुम्बियों, सम्बन्धियों तथा देशवासियोंका बहुत कुछ उपकार किया है और आपत्तिमें उनको सहारा दिया है। दूसरों पर दया करनेसे, उनको आर्थिक सहायता पहुँचानेसे, दान करनेसे आजतक कोई निर्धन नहीं हुआ और न किसीका नाश हुआ, हां स्वार्थ और विषयवासनाओंमें फँसकर सैकड़ों नष्ट हो गये हैं।

जरूरत इस बातकी है कि हम हरएक कामको नियमानुसार करें। चाहे कोई काम हो, घरका हो या बाहरका, राज्यका हो या व्यापारका, नियमानुसार हो। हरएक चीजके लिए नियत स्थान हो और अपने अपने स्थान पर हरएक चीज हो।

नियम और प्रबन्धको ही दौलत कहना चाहिए। क्योंकि जो कोई अपनी आमदनीको उत्तम रीतिसे खर्च करता है उसकी आमदनी दूनी हो जाती है। जो पुरुष नियमोका उल्लंघन करते हैं और अपने घरका ठीक ठीक प्रबन्ध नहीं करते, वे कदापि धनवान् नहीं हो सकते। इसके विपरीत जो नियमानुसार चलते हैं, वे कदापि निर्धन नहीं हो सकते। किसी चीजको भी व्यर्थ व्यय मत करो। छोटीसे छोटी चीजको भी सावधानीसे रक्खो। सर वाल्टरस्काटके रसोई घरमें मोटे मोटे अक्षरोंमें पत्थर पर खुदा हुआ था कि 'किसी चीजको नष्ट न करो और न किसी चीजकी जरूरत रक्खो।'

अनियमित काम करनेसे व्यर्थमें समय नष्ट होता है और जो समय एक बार नष्ट हो जाता है वह कभी लौट नहीं सकता। कहावत भी है कि गया हुआ समय फिर वापिस नहीं आता। अतएव नियमोंका पालन करना सदैव आवश्यक है। यदि विचारपूर्वक देखा जाय तो ससार नियमों पर ही स्थिर है। यदि नियम न होते तो उचित अनुचित, न्याय अन्याय, धर्म अधर्मका कोई विचार न होता; जो जिसके मनमें आता वही करता।

हमारे जीवनमें गृहप्रबन्धके लिए नियमोंकी बड़ी जरूरत है। इनका पालन करनेसे ही हमारा घर शोभाको पाता है और हमको सच्चा सुख प्राप्त हो सकता है। चूँकि घरका प्रबन्ध गृहिणीके हाथमें होता

है, इस कारण समाजकी उन्नति एक प्रकारसे गृहिणी पर ही निर्भर है और इस दशामें उसके लिए यह बहुत जरूरी है कि उसको गृहप्रबंध और नियमानुसार प्रवर्तनेकी शिक्षा प्रारम्भसे दी ही जाय और उसके हृदयमें इसकी जरूरतको कूट कूट कर भर दिया जाय। आजकल जिन कन्याओंका विवाह किया जाता है, अर्थात् जिन कन्याओंको दूसरे घरोंमें जाकर गृहप्रबन्धकी जिम्मेवारी अपने ऊपर लेनी होती है वे गृहप्रबंधके नियमोंसे प्रायः सर्वथा अनभिज्ञ होती है। उन्हें मातापिता द्वारा कोई शिक्षा इस प्रकारकी नहीं मिलती। यही कारण है कि वे दूसरे घरोंमें जाकर सुखके स्थानमें दुःखका कारण होती हैं। उनके जितने काम होते हैं सब अनियमपूर्वक होते हैं।

हमारे लिए प्रश्न यह नही है कि हम धनवान् हों या निर्धन, जरूरत यह है कि हम अपनी आमदनीको चाहे वह कितनी ही थोडी क्यों न हो इस रीतिसे खर्च करें कि हम संसारमें दिन दिन उन्नति करते जावें और हमारी स्थिति और हमारी सम्पत्ति नित्यशः वढती जाय। हमको उन पुरुषोंका अनुकरण करना चाहिए जिन्होंने थोडी आमदनी होते हुए भी उत्तम प्रबन्धसे अपनेको तथा अपनी संतानको संसारमें यशस्वी और भाग्यशाली बनाया है।

भारतवर्ष तथा अन्य देशोंमें ऐसे सैकड़ों उदाहरण मौजूद हैं। आज जितने बडे बड़े पुरुपरत्न देखनेमें आते हैं वे प्रायः उन्हींकी संतान है जिन्होंने परिमित आमदनी होते हुए भी अपने बाहुवलसे अपनी संतानको शिक्षा दिलाकर इस योग्य बनाया। ईश्वरचन्द्र विद्यासागरका नाम कौन नहीं जानता। उनके पिता कितने निर्धन थे, तिस पर भी उन्होंने अपने पुत्रको अपनी छोटी सी आमदनीसे पढाकर विद्यासागर बनाया। विद्या-

सागरने स्वयं ५०) रु० की नौकरीमें अपने भारी कुटुम्बका अच्छी तरह पालन किया तथा अनेक निर्धन असहाय विद्यार्थियोंको छात्रवृत्तियाँ देकर पढाया।

जेम्स गारफील्डने लुहार और बढईके यहाँ मजूरी कर करके अपने कुटुम्बका ही पालन नहीं किया, किंतु स्वयं धीरे धीरे पढ़कर एक दिन अमेरिकाके सर्वोच्च पद अर्थात् प्रेसीडेंटके पदको भी प्राप्त कर लिया।

इसी तरह अब्राहम लिंकनने एक दरिद्रसे दरिद्र घरमें जन्म लेकर लकड़ियाँ चीरके तथा दूकानों, कारखानों और जहाजो पर काम करके स्वयमेव स्वाध्याय द्वारा अपने ज्ञानको बढ़ाया, और अपने बाहुबलसे उन्नति करते करते अमेरिकाके प्रेसीडेंट पदको प्राप्त किया।

जिन लिप्टन साहबकी चाय संसारमें सर्वत्र व्याप्त हो रही है, जिन्होंने अनेकानेक कल कारखाने स्थापित किये हैं, और जिन्होंने लोगोंके उपकारार्थ न जाने कितने काम किये हैं, वे एक दरिद्रके संतान थे, वे शुरूमें एक दूकानदारके यहाँ काम करके अपने मातापिताका भरण-पोषण करते थे। १५ वर्षकी उमरमें ये एक कारखानेमे काम करने लगे। काम करते करते ये व्यवसायकी सभी बातोंमें निपुण हो गये।

इँग्लिस्तानके डाक्टर एटनने केवल १००) रु० मासिककी आयसे १२ बच्चोंका पालन पोषण किया और उनमेंसे ४ को उच्च शिक्षा दिलाकर अच्छे अच्छे कामोंमें लगाया।

हम जिन ग्रंथकर्ता महाशयके ग्रन्थके आधार पर यह पुस्तक लिख रहे है स्वयं उन्हींका हाल सुनिए। उनके ११ भाई थे। सबसे छोटा भाई केवल तीन सप्ताहका था जब उनके पिताका देहांत हो गया। उनकी माताने बहुत थोड़ी आमदनी होते हुए भी बहुतसा कर्ज चुकाया और अपने बच्चोंको धार्मिक तथा लौकिक शिक्षा दिलाई।

इतिहासकार ह्यूमकी भी यही दशा थी। पादरी राबर्ट वाकर साहबकी आमदनी सिर्फ ५ पौंड अर्थात् ७५) रु० सालाना थी। ४० पौंड उनकी पत्नी लाई थी। इतनी जरा सी आमदनी पर भी उन्होंने आनदपूर्वक जीवन व्यतीत किया और अपने कुटुम्बके लिए भी कुछ रुपया जमा किया। यह सब उन्होने श्रम, मितव्यय और सयमसे ही कर पाया। धार्मिक कर्तव्योका पालन करके, लड़कोंको पढा करके, ऊन बुन करके, जानवरोंको चरा करके, हल जोत करके, इत्यादि अनेक काम करके उन्होंने ईमानदारीसे रुपया पैदा किया और उससे अपना तथा अपने ८ बच्चोंका पालन किया। एकको कालेजमें पढाया। पादरी साहब बड़े मितव्ययी थे, किंतु उनके किसी भी कामसे लालच या कमीनापन प्रगट न होता था। वे व्यर्थकी नुमायशी चीजोंसे घृणा करते थे, किंतु जरूरी चीजोंके लिए कभी कृपणता न करते थे। वे सदा दयालु और उदारचित्त रहते थे। चाय, दूध और शुद्ध जल पर ही उनको संतोष था। उनकी सारी जरूरतें उनके घरसे ही पूरी हो जाती थीं। उनको भेड बकरियोंसे ऊन, दूध और खेतोंसे अनाज मिल जाता था।

इसी प्रकार अनेक पुरुषोंने अपने साहस और बलसे रुपयेका सदुपयोग करके अपनेको बढाया और क्रमशः अपने देश और समाजको उन्नतिके शिखर पर चढाया। वास्तवमें व्यक्तिगत उन्नतिसे ही समाजकी उन्नति है। समाज बहुतसे व्यक्तियोंका समूह है। यदि प्रत्येक व्यक्ति उन्नति कर ले तो कुल समाज उन्नति कर लेगा। किन्तु व्यक्तिगत उन्नतिके लिए दृढ़संकल्प और स्थिर विचारोंकी जरूरत है।

उदाहरणोंसे ही छोटेसे छोटा आदमी बड़ेसे बड़े दर्जे पर पहुँच सकता है, ज्ञान विज्ञानकी वृद्धि होती है, सभ्यता और शिष्टाचारका

प्रचार होता है और दूसरे लोगोको अनुकरण करनेका साहस होता है। इनके जीवनसे अनेकोंके जीवन सुधरते हैं। इनका हाल सुनकर मुरदेसे मुरदेके दिलमे भी जोश पैदा हो जाता है, निराशा और आलसका मुँह काला हो जाता है और 'हमसे यह न हो सकेगा' 'यह हमारी शक्तिसे बाहर है' ऐसे वाक्योंका मानों देशनिकाला हो जाता है। इनके जीवनचरित प्रत्यक्ष इस बातको सिखला रहे हैं कि उठकर आलस्यको त्यागो, कुछ काम करो, चाहे तुम कितने ही नीचे क्यो न हो एक दिन ऊँचेसे ऊँचे दर्जेपर पहुँच जाओगे।

एक नहीं, दो नहीं, दश नहीं, पचास नहीं, सैकड़ों उदाहरण उनके मौजूद हैं जो शुरूमें कारखानों या खानियोंमे कुलियों और मजदूरोंका काम करते थे और ऐसी अवस्थामे भी जिन्होंने मितव्ययतासे काम करके थोड़ा थोड़ा बचाया, अवकाश मिलने पर पढ़ना लिखना भी जारी रक्खा और अंतमें जो बड़े बड़े दर्जों पर जा पहुँचे। कोई पादरी हुआ, कोई इंजीनियर हुआ, कोई डॉक्टर हुआ और कोई पार्लियामेंटका मेम्बर हुआ।

जार्ज स्टेफेंसन जिसने रेलगाड़ीका आविष्कार किया शुरूमें कुलीका काम करता था। उसने श्रमसे कुछ रुपया पैदाकरके पढ़ना लिखना प्रारंभ किया। आगे उसकी मजूरी १२ शिलिंग सप्ताह हो गई। इंग्लैण्ड जैसे महँगे देशमे भी उसने इस थोड़ीसी मजूरीसे अपना तथा अपने मातापिताका निर्वाह किया और अपनी शिक्षाका खर्च चलाया। धीरे धीरे उसका वेतन १५) रु० सप्ताह हो गया। अब तो वह अपनेको एक धनवान् समझने लगा। वास्तवमें उसका यह खयाल ठीक भी था। जो पुरुष खर्च करके कुछ बचा सकता है उसे धनवान् ही

समझना चाहिए। जार्ज बराबर उन्नति करता गया। जब उसको अपने एंजिन बनानेके लिए रुपयेकी जरूरत हुई तब उसकी सच्चरित्रता और कार्यकुशलताके कारण एक महाशयने तत्काल ही उसकी जरूरतको पूरा कर दिया।

जेम्स वाट जिसने स्टीम एंजिनका आविष्कार किया, शुरूमें एक साधारण पुरुष था, छोटे छोटे औजार बेचा करता था और उन्हींकी बिक्रीसे अपना खर्च चलाया करता था। साथमें पढता भी जाता था। कई वर्ष तक लगातार उद्योग करनेपर उसने स्टीम-एंजिनमें सफलता प्राप्त कर ली।

इन बड़े बडे लोगोंको अपने हाथसे काम करते शर्म नहीं मालूम होती थी। उनका विचार था कि पेटके लिए काम करनेमें कोई मान-हानि नहीं है। वे साथमें दिमागका काम भी करते जाते थे। इसीसे उन्होंने बडे बडे काम किये जिनसे समस्त संसारको लाभ पहुँचा और पहुँच रहा है।

यह काम हम क्यों करें, यह हमारे लायक नहीं है, ऐसा कहना अथवा सोचना बड़ा हानिकर है। बहुतसे लोग ऐसे ही खयालोंके कारण अपने जीवनको नष्ट कर डालते हैं और टुकड़े तकको तरसते हैं। तीन आदमी एक लुहारकी दूकानमें काम किया करते थे। उनके दिलमें किसी तरह यह विचार उत्पन्न हो गया कि हम कोई और बढिया काम करें। उनमेंसे दोने कुछ रुपया जमा किया और जाड़ेके दिनोंमें कालेजमें पढना शुरू किया। कालेजका समय पूरा होनेपर वे गर्मीमें घर आकर अपनी दूकान पर फिर वही काम किया करते थे। तीसरा वैज्ञानिक संस्थामें काम करने लगा और वहाँ पुस्तकावलोकन

करते करते उसको सायंसका अच्छा ज्ञान हो गया। वह सुबह शाम अवकाश न मिलने पर भी जी तोड़कर पढ़ा करता था। थोड़े ही दिनोंमें वह एक इंजीनियर और बड़ी भारी कंपनीका मैनेजर हो गया। पहले दोनोंमेंसे एक प्रोफेसर हुआ और दूसरा प्रसिद्ध राजमंत्री हुआ।

एक महाशय गानविद्यासे अपनी आजीविका करते हुए खगोल और ज्योतिषसंबन्धी आविष्कार सोचा करते थे। एक दिन उनको अपने उद्योगमें सफलता हुई और वे संसार भरमें नामी हो गये।

फ्रैंकलिन अपना निर्वाह छापेका काम करके किया करता था। वह बड़ा परिश्रमी, मितव्ययी और दूरदर्शी था। समयको कभी फिजूल न खोता था। उसने अपनी ईमानदारीसे सबके दिलोंमें स्थान पा लिया था। हर प्रकारसे उन्नति करना वह अपना मुख्य कर्त्तव्य समझता था। इसीका यह परिणाम हुआ कि वह एक बड़ा भारी विज्ञानी समझा जाने लगा और बड़े बड़े आदमी उसका आदर करने लगे। प्रसिद्ध ज्योतिषी फर्ग्युसन बहुत दिनोंतक तसवीरें ही बनाता रहा।

जगद्विख्यात लेखक विंकलमेन एक चमारका लड़का था। उसका पिता जबतक उससे हो सका उसे शिक्षा दिलाता रहा। परन्तु जब वह बीमार पड़ गया, तब स्वयं लड़केने रातको गलियोंमें गा गा कर अपने रोगी बूढ़े बापकी सेवा की और बादमें ट्यूशन करके अपनी कालेजकी शिक्षा जारी रक्खी। इसके कहनेकी जरूरत नहीं कि अंतमें वह कितना बड़ा आदमी हुआ। सेमुएल रिचर्डसन जो एक प्रसिद्ध लेखक हुए हैं पुस्तकें बेंचकर निर्वाह करते थे। दूकानके बाहरी हिस्सेमें वे पुस्तके बेंचा करते थे और अंदरके कमरेमें पुस्तकें लिखा करते थे। उन्होंने कभी किसी धनिकका आश्रय नहीं लिया।

स्वर्गीय डाक्टर श्रेगरीने अपने एक व्याख्यान में कहा था कि "मैं ऐसे कितने ही आदमियोंको जानता हूँ जो श्रम, साहस और संतोषके बल- से मजूरोंकी श्रेणीसे निकल कर बड़े बड़े विद्वानोंकी गणनामें आ गये। एक सड़क पर मजूरी करनेवाला आदमी बड़ा लेखक होगया। एक सि- पाही स्कूलमास्टर हो गया। दूसरा तात्त्विक उपदेशक हुआ। एकने बीजगणितमें कई नई नई बातें निकालीं। एक कोयलेकी खानिमें काम करनेवाला बड़ा भारी गणितज्ञ हुआ। एक दर्जीने वे वे बातें निकालीं जो न्यूटन भी न निकाल सका। एक किसानने बिना किसीकी सहा- यताके जमीनकी गर्दिशको मालूम किया और अनेक खगोलसंबंधी आ- विष्कार किये। एक ग्रामीण चमार बड़ा भारी फिलासफर हुआ और उसने लंदनमें अनेक पुस्तकोंका संपादन किया।"

जितने बड़े बड़े शिल्पकार हुए हैं प्रायः सब शुरूमें बहुत ही सा- धारण स्थितिके आदमी थे। यदि वे अमीर होते तो कभी ऐसी उन्नति न कर पाते। गरीब होनेकी वजहसे ही उनको उन्नति करनेका शौक पैदा हुआ। उन्होने अपने छोटे छोटे कामोंसे ही धीरे धीरे उन्नति की। एकदम बड़े कामको हाथ नहीं लगाया; परन्तु उसके लिए शनैः शनैः योग्यता प्राप्त करते रहे। फल यह हुआ कि एक दिन उनकी मनोका- मना पूरी हो गई। उन्होंने सदा धैर्य्यसे काम किया और मितव्ययताको अपना सिद्धान्त बनाया। जरूरी चीजोंके लिए कभी मुँह न मोड़ा, हाँ बिना जरूरतकी चीजोंमें कभी रुपया बर्बाद नहीं किया। यही उनकी सफलताका मूल मंत्र है।

मिस्टर नैस्मिथके शब्द प्रत्येक युवकके याद रखनेके काबिल हैं। उनका कथन है कि "मेरी सारी सफलताका रहस्य केवल इसमें है कि

मनुष्यको पहले अपना कर्तव्य पालन करना चाहिए, पश्चात् भोगोपभोगोंपर ध्यान देना चाहिए और अभाग्य दुर्भाग्य आदि शब्दोंका एकदम वहिष्कार कर देना चाहिए। ऊपरके सिद्धान्तके विपरीत करनेसे ही ऐसे शब्द सुननेमें आते हैं। (भ्रम और असतोषसे ही असफलता होती है।) मिस्टर नैस्मिथने अपने वापको काम करते देखकर छोटे छोटे औजार वनाना शुरू किया और यहाँ तक उन्नति की कि वड़े वड़े एंजिनोंका आविष्कार किया तथा इतना रुपया कमाया कि ४८ वर्षकी उमरमें सांसारिक धनसंपदासे तृप्त होकर वह एकांतवास करने लगा। एकांतमें वैठकर वह आलसी नहीं वना, किंतु देश और समाजके हितार्थ नये नये अविष्कार करने लगा। लार्ड डरवीने उसकी वड़ी प्रशंसा की है। पहले इन्द्रियसुखोंकी इच्छा करना और पीछे कर्तव्यका पालन करना यह सवसे निंद्य और नीच सिद्धांत है।

छट्ठा अध्याय।

बचानेके नियम।

(विद्वानोंके वाक्य।)

मनुष्य पशुओंसे इसी कारण बड़ा है कि उसमें अपने साथियोंसे मिलकर काम करनेकी शक्ति है। समुदायसे जो काम हो सकता है, वह पृथक् पृथक् व्यक्तिसे कभी नहीं हो सकता।

हमारे लिए सबसे पहली और जरूरी बात यह है कि हम अपनी इन्द्रियोंको दमन करें और अपनी इच्छाओंको वशमें रक्खें।

भविष्यमें हमारी रक्षाके लिए सबसे उत्तम उपाय यह है कि हम अभीसे उस समयके लिए सामग्री संचय करके रक्खें।

× × × × ×

बचानेके नियम बड़े सरल हैं। सबसे पहला नियम यह है कि आमदनीसे कम खर्च करो। आगेके लिए जरूर कुछ न कुछ बचाकर रक्खो। जो आदमी आमदनीसे ज्यादह खर्च करता है वह मूर्ख और पागल है। दूसरा नियम यह है कि हरएक चीज नकद रुपया देकर खरीदो, कोई उधार न लो। जो उधार लेता है अथवा कर्ज लेता है वह जरूर धोखा खाता है और प्रायः झूठा वेईमान हो जाता है। तीसरा नियम वह है कि आशासे जिसका कोई निश्चय नहीं है, कभी खर्च मत करो। सम्भव है कि लाभ न हो। इस दशामें तुम्हारे सिरपर व्यर्थ कर्जका भार हो जायगा और तुम सदा उसके नीचे दवे रहोगे। चौथा नियम यह है कि अपनी आमदनी

और खर्चका पूरा पूरा हिसाब रक्खो। पहलेसे अपना बजट आमद और खर्चका अंदाज बनालो। उसमें खर्चको आमदनीसे कम रक्खो। ऐसा करनेसे कभी तुमको तकलीफ न होगी। तुम्हारी जरूरतकी चीजे सब तुमको मिल जायँगी। बेफायदा खर्च करनेसे तुम फिजूल चीजोको खरीद लोगे जिनकी तुम्हें कोई जरूरत नहीं और जरूरी चीजोंके लिए वक्त पर तुमको कर्ज लेना पडेगा। पाँचवाँ नियम यह है कि सदा इस बातका खयाल रक्खो कि कोई चीज फिजूल न जाने पावे। हर एक चीजको ठीक तौरसे काममें लाओ, नियत स्थान पर रक्खो और हरएक कामको कायदेसे अच्छी तरह करो। हरएक आदमीके लिए चाहे वह किसी हैसियतका हो, यह जरूरी है कि इन बातोंका खयाल रक्खे। बड़ेसे बड़े आदमीके लिए अपने घरकी चीजोंका खयाल रखनेमें कोई बात हल्की नहीं होती है। अँगरेजोंकी मेमें प्रायः आप बाजारसे सौदा खरीद कर लाती हैं। दिल्ली कलकत्ता बंबई आदि बड़े बड़े शहरोंमें बड़े बड़े लखपती आदमी आप बाजारसे सब्जी वगैरह खरीद कर लाते हैं।

इस बातकी कोई ठीक ठीक हद्द नियत नहीं की जासकती कि कितना बचाना चाहिए। यह अवसर और स्थान पर निर्भर है। गाँवमे शहरकी अपेक्षा जियादह बचत हो सकती है। सिर्फ इतना याद रखना चाहिए कि किसी दशामें भी खर्च आमदनीसे न बढने पावे।

मितव्ययता क्या अमीर क्या गरीब सबके लिए जरूरी है। इसके बिना कोई मनुष्य उदारता नहीं दिखला सकता। जो मनुष्य सारी आमदनी खर्च कर डालता है वह किसीकी सहायत नहीं कर सकता। न अपने बच्चोंको पढ़ा सकता है और न अपने कुटुम्बियोके काम आ सकता है। वह दान पुण्य भी नहीं कर सकता।

यद्यपि हम लोग परिश्रमी और स्वावलम्बी हैं, परंतु सयमी और दूर-दर्शी नहीं हैं। हम अपने विचार वर्तमान पर ही लगाये रखते हैं, भविष्यकी कुछ चिंता नहीं करते-यही हममें दोष है। इसीके कारण हम कभी कभी बहुत दुःख उठाते हैं। हमारे इस व्यवहारसे दूसरो पर भी बुरा असर पड़ता है। वे भी हमारी देखादेखी जो कुछ होता है खर्च कर डालते हैं। अमीर लोग दौलतके नशेमें आगा पीछा कुछ नहीं देखते; एकसे एक बढ़कर बागबगीचे, कोठी मकान, घोड़े गाड़ी रखते है। हमारे बराबर किसीका सामान न हो, इसी धुनमें वे सदा लगे रहते हैं। विवाह शादियोंमें, नाच तमाशोंमें हजारों और लाखो रुपया खर्च कर देते है।

धनिकोंके पास तो रुपया है, वे जो चाहे करें। खराबी है तो यह कि मामूली आदमी भी उनकी नकल करने लगते हैं। जातिमें छोटे बड़े सब तरहके आदमी होते हैं। बहुतसी बातोंमें, बहुतसे खर्चोंमें लोक-लाजके कारण सबको समान खर्च करना पड़ता है। इससे साधारण आदमियोंकी मुश्किल आजाती है। फिर उनकी देखादेखी मिहनती मजूर तक भी वैसा ही करने लगते हैं। नित्य ही देखनेमें आता है कि शहरमें भगी, चमार, कोली, कहार भी पैरमें बूट जूता, सिरपर गोल टोपी, जेबमें घड़ी, हाथमें छड़ी, बदनमें अंगरेजी कोट और कमीज डटाये रहते हैं। इन फिजूलखर्चियोंके कारण ही बादमें बडी बड़ी तकलीफें उठानी पड़ती है।

यह हमारी सरासर मूर्खता है। यदि हम सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करना चाहें तो हमको जरूर कुछ न कुछ आपत्ति कालके लिए बचाकर रखना चाहिए। इसका यह अभिप्राय नहीं कि हम पेट मोसकर बदन सिकोड़कर कंजूसकी तरह रुपया जमा करें। न खावें, न पीवें, न पढ़ें

न पढ़ावे, न बीमार होनेपर इलाज करें और न दूसरोंको दुःखमें देखकर उनकी सहायता करे। किंतु यह अभिप्राय होना चाहिए कि हम अच्छी तरह रहें। रुपयेको अपने तथा दूसरोंके सुखका कारण और साधन जानकर आगेके लिए थोड़ासा बचाकर रक्खें। कौन जानता है कि हमारी आमदनी सदा एकसी रहेगी। सम्भव है कि हम कल मर जावें अथवा बीमार पड़ जावें। यदि हमने कुछ रुपया जमा नहीं किया तो बतलाइए कल क्या हाल होगा? कौन हमारी स्त्री तथा बच्चोंकी सहायता करेगा अथवा इलाजके लिए रुपया कहाँसे आयगा? इस दशामें क्या शोकका कोई पार रहेगा? आज तो हम बड़े कहला रहे हैं, कल हमारे बच्चे भिखारी हो जावेंगे, अन्नके दाने दानेको तरसेंगे।

इस लिए यह अत्यत आवश्यक है कि हम बचाना सीखें। ऐसा करनेसे अनेक चिन्तायें जाती रहती हैं और मनमें शांति रहती है। चाहे रुपया कितना ही थोड़ा हो, परन्तु वह निर्धनता अथवा रोगके समय बहुत ही काम आता है। उसी समय उसकी असली कदर मालूम होती है। जीवन स्वतत्रतया आनंदपूर्वक व्यतीत होता है, बुढापेका रंज नहीं होता, बाल-बच्चोंकी चिन्ता नहीं रहती। जिस मनुष्यका विवाह होगया है उसके लिए तो रुपयेका जमा करना ऐसा ही जरूरी है जैसा कि वर्त्तमानमें पैदा करना। जगत्में स्त्री और बच्चे पुरुषके अधीन और आश्रित होते हैं। पुरुष आजीविका करता है और अपने कुटुम्बका निर्वाह करता है। जैसा पहले कहा जा चुका है मृत्युके समयका कोई निश्चय नहीं है। सम्भव है कि पुरुषका अकस्मात् प्लेग, हैजा अथवा और किसी कारणसे देहात हो जाय। अब यदि उसके पास पहलेसे जमा किया हुआ रुपया नहीं है तो बतलाइए उसके

कुटुम्बका निर्वाह कैसा होगा ? सिवाय इसके और क्या परिणाम होगा कि स्त्री और उसके बच्चे या तो भूखों मरेंगे या दूसरोंके आगे हाथ पसारते फिरेंगे।

अतएव प्रत्येक मनुष्यको यथाशक्ति बचानेका उद्योग करना चाहिए। परन्तु स्मरण रहे कि केवल बचानेके अभिप्रायसे बचाना ठीक नहीं है। जरूरतके समय अपने और दूसरोंके काम आवे तथा अपने बाद अपनी स्त्री और बच्चोंके काम आवे यह उद्देश्य बचानेका होना चाहिए। विद्वानोंका कथन है कि इस अभिप्रायसे बचानेमें बड़ा महत्त्व है। चाहे बचत अधिक न हो, तो भी बचानेका उद्योग करनेमें अनेक लाभ हैं। मन नियमित रूपसे काम करने लगता है, दूरदर्शिताको अपव्यय पर विजय होता है, धर्मके आगे अधर्मकी चल नहीं सकती, इन्द्रियो वशमें रहती हैं, चिंता जाती रहती है, सुख सदैव विद्यमान रहता है। बचाया हुआ रुपया चाहे कितना ही थोड़ा क्यों न हो, अनेक शोकोंको दूर कर देता है, हमारी प्रतिष्ठा और स्वतंत्रताको सुरक्षित रखता है, हम जाति पर भाररूप नहीं होते किंतु उसके उपयोगी अंग होते हैं। जाति हमसे प्रेम करती और हमको अपनेसे पृथक् नही करना चाहती। आकस्मिक दुःखोंका हमें डर नहीं रहता।

प्रत्येक मनुष्यका यह पहला कर्तव्य है कि अपनी उन्नतिको तथा अपने भाइयोंकी बढतीके लिए उचित उपायोंको काममें लावे। प्रत्येक मनुष्यको स्वतंत्र विचार करने और स्वतंत्र कार्य करनेकी शक्ति है। इसका प्रमाण उन हजारों आदमियोंकी जीवनीसे मिल सकता है जिन्होंने आपत्तियों और कठिनाइयोंसे घोर युद्ध किया है और उन पर विजय प्राप्त करके अपनेको उच्च बनाया है।

केवल दृढ़ संकल्प और स्थिर विचारोंकी जरूरत है। निःसंदेह हमको शुरूमें बड़ी बड़ी कठिनाइयाँ आवेंगी, परन्तु हमें उन्हे धीरतासे सहन करते जाना चाहिए। हमको अपने बहुतसे खर्चोंमें कमी करनी होगी। सम्भव है कि कुछ कालके लिए हमको कुछ दुःख मालूम हो; परन्तु यदि हम करते जावेंगे, साहस और उद्योग न छोड़ेंगे तो बहुत जल्द सफलता प्राप्त कर लेंगे। पहले हमको खुद मिसाल बनकर दुनियाको दिखलाना चाहिए। हम मितव्ययताका कितना ही उपदेश लोगोंको दें; परन्तु वह कुछ कार्यकारी न होगा। हाँ, यदि हम खुद करके दिखलावें तो बिना कहे ही लोग हमारा अनुकरण करने लगे और धीरे धीरे सारा समाज उन्नति कर लेगा। क्योंकि पृथक् पृथक् व्यक्तिसे ही मिलकर समाज बना है, व्यक्तिगत उन्नति अथवा अवनति पर ही समाजकी उन्नति अथवा अवनति निर्भर है।

प्रायः लोग इस बातसे डरा करते हैं कि कहीं हमारे काममें हानि न हो जाय। यह उनकी भूल है। यदि हम श्रम, साहस और दूरदर्शितासे काम करें तो कदापि हानि नहीं हो सकती। हाँ, यदि हम इनके विपरीत करेंगे तो जरूर हानि होगी। जो आदमी खुद कुछ नहीं करता और सदा दूसरोंका मुँह ताकता रहता है अथवा जो कोई अपने रुपयेको फिजूल खोता रहता है अथवा जो कोई कंजूसी करता है, उसका काम जरूर फेल होगा। बहुतसे आदमी अपनी अयोग्यताके कारण हानि उठाते हैं। वे उलटे तरीकेसे कामको शुरू करते हैं और कितना ही नुकसान क्यों न उठा लें, अपनी हठको नहीं छोड़ते। बहुतसे आदमी भाग्यको उलहना दिया करते हैं। पर यह उनका भ्रम है। वे भाग्यके अर्थको नहीं समझते। समीचीन या अच्छे प्रबन्धका ही दूसरा नाम भाग्य है। अभागा वही है जो व्यवहारिक बातोंको नहीं जानता और अनुभवसे लाभ नहीं उठा सकता।

कोई कोई मनुष्य योग्य और उत्तम होते हुए भी विचारहीन होते है। न वे देशकालका विचार करते हैं और न देशकालके अनुसार बर्ताव करते हैं। अंधेकी नाईं बढ़े चले जाते हैं, परिणाम यह होता है कि धमसे गढ़ेमें गिर पड़ते हैं, अर्थात् उनका काम बिल्कुल डूब जाता है।

जीवनक्षेत्रमें सुगमतासे निवास करनेके लिए इस बातकी जरूरत है कि हम जो कुछ कहे वह करके दिखलावें। केवल बातें बनानेसे काम नहीं चलता। हम उसी आदमीको पसंद करते है, जिसके उद्देश्य स्थिर हैं और जो उन उद्देश्योंकी पूर्तिके लिए सरल और सीधे मार्गको ग्रहण करता है।

संसारमें सफलता और धनप्राप्तिकी आशा प्रत्येक व्यक्तिके हृदयमें स्वभावसे ही अंकित है। यह इच्छा बुरी नहीं है, बहुत ही लाभदायक है। इसीसे लोग श्रम और साहस करना सीखते हैं और समाज उन्नति करता है। यह कलाकौशल्य और व्यापारको बढ़ाती है और लोगोंको काम करना सिखलाती है।

यदि यह इच्छा मनुष्यमें न होती तो वह निरा आलसी ही रहता, किसी काममें भी हाथ न लगाता। इसीकी बदौलत नित्य नये नये आविष्कार देखनेमें आते हैं।

कोई आलसी अथवा अमितव्ययी मनुष्य कभी संसारमें महत्त्वका भागी नहीं हुआ। उसका नाम कभी संसारके महत् पुरुषोंकी गण-नामें नहीं आया। जिन मनुष्योंने अपने ज्ञान विज्ञानके बलसे संसा-रको उन्नत अवस्था पर पहुँचाया है और उसके इतिहासमें किसी प्रका-रका परिवर्तन किया है वे उन्हीं महात्माओंमेंसे थे, जिन्होंने अपने

जीवनके एक समयको भी नष्ट नहीं किया। वास्तवमें श्रम पर ही जीवनका अस्तित्व है। श्रमसे बढ़कर संसारमें कोई बहुमूल्य वस्तु नहीं है।

रुपयेके सदुपयोग पर ही सब चीजोंका आधार है। न्यू आरलिंसके जान डानफकी कबर पर निम्नलिखित शिक्षायें नवयुवकोंके हितार्थ खुदी हुई हैं जिनके अनुसार चलनेसे वे कभी जिन्दगीमें धोखा नहीं खा सकते:—

१—सदा याद रक्खो कि हमारे जीवनका अस्तित्व श्रम पर है।

२—समय स्वर्ण है, एक पल भी नष्ट न करो—प्रत्येक पलको शुभ-कार्यमें लगाओ।

३—दूसरोंके साथ वैसा ही व्यवहार करो जैसा तुम चाहते हो कि वे तुम्हारे साथ करें।

४—जो काम आज हो सकता है उसे कल पर कभी मत छोड़ो।

(५—जो काम तुम खुद कर सकते हो उसके लिए कभी दूसरेसे मत कहो।)

६—जो चीज तुम्हारी नहीं है, उसकी इच्छा कभी न करो।

७—किसी भी चीजको तुच्छ मत समझो।

८—जिस चीजकी आमद नहीं है उसे फिजूल न खोओ।

९—पैदा करो, खोओ मत।

१०—तुम्हारे जीवनके समस्त कार्य नियमानुकूल होने चाहिऐं।

११—जिस चीजसे तुम्हें आराम मिलता हो उसे कभी मत छोड़ो। जीवन सदा सरलता और मितव्ययसे व्यतीत करो।

१३—अंत समय तक श्रमको न त्यागो।

बहुतसे आदमी समीचीन प्रबन्धके कारण निर्धनताकी अवस्थामे भी अपना निर्वाह करते रहते हैं, भूखो नहीं मरते। छोटे छोटे दर्जेके

मनुष्य भी एक दूसरेसे मिलकर काम करनेसे निर्धनताके चुंगलमें नही फँस सकते, किन्तु अपनी शक्तियोंको बढा सकते हैं और जातिकी उन्नतिमें भी योग दे सकते हैं।

अकेला मनुष्य समाजकी कुछ उन्नति नहीं कर सकता। हाँ, यदि वह अपने साथियोंसे मिलकर काम करने लगे तो बहुत कुछ कर सकता है। मिलकर काम करनेमें बडी शक्ति है। सभ्यता समुदायका ही फल है। प्रसिद्ध विद्वान् मिस्टर मिलका कथन है कि प्रायः जिन जिन चीजोंके कारण मनुष्य पशुओंसे बडा समझा जाता है वे सब समुदायमे रहने और मिलकर काम करनेसे ही मनुष्यको प्राप्त हुई हैं। (जातीय उन्नतिका गुप्त रहस्य मिलकर काम करना है।) जितना अधिक लाभ पहुँचाना अभीष्ट हो उतना ही अधिक मिलकर काम करना योग्य है। मध्यमश्रेणीके मनुष्योंमें मिलकर काम करनेका अभ्यास है। इङ्गलैण्ड देशकी वृद्धि और उन्नतिके कारण ये ही लोग है। इन्होंने मिलकर वे वे काम किये है जो पृथक् पृथक् व्यक्तिसे कभी न हो सकते। शत्रुओंको भगानेके लिए, बुराइयोंको दूर करनेके लिए, उद्देश्योकी पूर्तिके लिए, व्यापारकी वृद्धिके लिए, नई नई चीजोंके बनानेके लिए, कल और एंजिनोंके तैयार करनेके लिए, तथा अनेक श्रमजनक कार्योंके लिए, इन्होंने सदा अपनी शक्तियोंको मिलाकर काम किया। छोटे छोटे हिस्सोंसे बढाते बढाते बड़ी बड़ी कम्पनियाँ बनाली और करोड़ों रुपयेके कारखाने खोल लिये। जितनी स्टाक कम्पनियाँ, रेलवे कम्पनियाँ, टेलीग्राफ कम्पनियाँ, तथा कल कारखाने दिखलाई देते हैं वे सब इन्हीं लोगोंके एकत्रित श्रम और धनके नतीजे हैं। इङ्गलैण्ड देशने जितनी उन्नति की है वह सब कम्पनियों द्वारा ही की है। वहाँ ऐसा कोई शहर या ग्राम न होगा जिसमें कोई न कोई कम्पनी या सोसायटी

न हो। इन सोसायटियोंके द्वारा ही शिक्षादिका प्रबन्ध होता है और अनाथों विधवाओंकी पालना की जाती है। भारतवासियोंको भी इनका अनुकरण करना उचित है। हर एक शहरमें ऐसी सोसायटियाँ होनी चाहिए जिनके द्वारा कलाकौशल्यका प्रचार हो, व्यापारकी उन्नति हो और उनके नफेमेंसे कुछ भाग हिस्सेदारों तथा और लोगोंके बालकोंकी शिक्षा-रक्षाके लिए नियुक्त किया जाय। यदि साहस और मितव्ययतासे मिलकर काम किया जाय तो जरूर लाभ होगा और थोड़ी पूँजीवाली कम्पनी भी बहुत जल्दी बढ़ जायगी। ऐसी कम्पनियोंसे अनेक लाभ हैं। सबसे बड़ा लाभ यह है कि थोड़े थोड़े रुपयोंसे ही बड़ा काम चल सकता है और काफी नफा हो सकता है। दूसरे कम्पनियाँ बनाकर काम करनेसे अपनी ताकत बहुत बढ़ जाती है और आपसमें मेल और एकता होनेसे दुःखके समयमें तकलीफ मालूम नहीं होती। तीसरे कम्पनियोंमें काम करनेसे फिजूलखर्च भी किफायतसे खर्च करने लगते हैं और छोटे छोटे दर्जेके आदमी भी बड़े हो जाते हैं। हिस्सेदारोंके सिवा मेहनती मजूरोंको सदा काम मिलता रहता है; वे खाली नहीं बैठने पाते। वे भी धीरे धीरे मजूरीमेंसे कुछ बचाकर जमा करने लगते हैं और थोड़े ही दिनोंमें आसानीसे एक एक दो दो हिस्सोंके मालिक बन जाते हैं। जहाँ एक दो हिस्सेके मालिक हुए और साल भरका नफा मालूम हुआ फिर तो उन्हें ऐसा शौक हो जाता है कि बिना कुछ बचाये चैन ही नहीं पड़ती। परिणाम यह होता है कि कुछ वर्षोंमें ही वे मजूरोंकी श्रेणीसे निकलकर व्यापारियोंकी गणनामें आजाते हैं और अपने जीवनमें ही धनी कहलाने लगते हैं। इंग्लैंड आदि देशोंमें ऐसे सैकड़ों उदाहरण मौजूद हैं। हमें भी उनका अनुकरण करना योग्य है।

सातवाँ अध्याय।

बीमा कम्पनियाँ और सहायक सभायें।

(विद्वानोंके वाक्य।)

हमको जीवन इस लिए नहीं मिला है कि हम हर समय उन चीजोंके हासिल करनेमें लगे रहें जिनको हम मरते समय यहीं छोड़ जायेंगे।

बुढ़ापेमें हमको सुख अथवा दुःख बहुधा हमारे पूर्वके कृत्योंके अनुसार ही मिलता है।

सत्यके लिए संसारमें हम सब एक दूसरेके सहायक और शुभचिंतक हैं।

* * * * *

बचतका एक तरीका तो हम पिछले अध्यायमें बतला ही चुके हैं। उसके सिवा दो तरीके और हैं। एक यह है कि हमको अपनी जानका बीमा करा लेना चाहिए जिससे हमारे मरने पर हमारे घरवालोंको उनके खर्चके लिए काफी रुपया मिल जाय। दूसरा तरीका यह है कि ऐसे सहायक फंड खोलने चाहिए जिनसे गरीब लोगोंको दुःखके समय आराम मिले और उनके मरने पर उनकी गरीब स्त्री और बच्चोंको कुछ मदद मिल जाय—जिससे उनको एकबारगी विशेष दुःख मालूम न हो। पहला तरीका ऊँचे और बीचके दर्जेके लोगों के लिए है और दूसरा गरीब लोगोंके लिए।

यदि हम चाहें कि अपने कुटुम्बके लिए धीरे धीरे रुपया जमा करते रहें, तो इसमें वर्षों लग जावेंगे, फिर भी काफी रुपया जमा न हो सकेगा। इसके अतिरिक्त सम्भव है कि किसी समय जरूरत पड़ने पर उस रुपये पर भी तबीयत चल जाय और यह खयाल करके कि मौ-

तका कौन ठिकाना है, न मालूम कितने दिनोंमें आवे, तब तक फिर जमा कर लें–उसको भी खर्चमें ले आवें। इस कारण अपने पास जमा किये हुए रुपयेपर कोई भरोसा नहीं किया जा सकता। जरूरतके वक्त सब खर्च हो जाता है और अपने बाद कुटुम्बका क्या हाल होगा, इसका कुछ खयाल नहीं रहता।

परंतु जो मनुष्य किसी बीमा कम्पनीमें शामिल हो जाता है वह सबसे आराममें रहता है। वह सदा थोड़ा थोड़ा माहवारी या सालाना चंदा कम्पनीके कोशमें जमा करता जाता है और मौतसे बिल्कुल निडर होकर गहरी नींद सोता है। चाहे आज चंदा देकर कल ही क्यों न मर जाय परंतु उसे कुछ चिन्ता नहीं होती। कारण कि उसकी स्त्री और बच्चोंको जितने रुपयोंका बीमा कराया है उतने रुपये शीघ्र ही मिल जाते है।

बीमा करानेसे न केवल उसके कुटुम्बको लाभ होता है किंतु स्वयं उसको अपने जीवनकालमें दूरदर्शिताका खयाल होता जाता है। सबसे बड़ा फायदा यह है कि बीमा करानेवालेके मनमें दुःखके समय अत्यन्त पीडा अथवा मरते समय किसी प्रकारका क्लेश नहीं होता।

जिस मनुष्यने अपनी संतानके लिए रुपया जमा नहीं किया उसको मरते समय आधा दुःख रुपयेके न होनेका होता है। इसीके कारण औषधका उस पर कुछ असर नहीं होता और उसका रोग बढता ही जाता है। कवि बर्न्सने मरनेसे कुछ दिन पहले अपने एक मित्रको लिखा था कि "मै अबतक दुःखमें फँसा हूँ। हाय! मुझे इससे भी अधिक दुःख अपने बादकी दुःखमयी अवस्थाके भयका है। मेरी विधवा स्त्री और छह छोटे प्यारे अनाथ बच्चे अब क्या करेंगे? मैं क्या करूँ? मेरी आधी बीमारी इसी चिन्ताके कारण है।"

बीमा कम्पनियाँ विशेषकर अनाथो और विधवाओंकी रक्षाके लिए स्थापित की जाती हैं। थोडी आमदनी और पूँजीवाला मनुष्य भी इनसे फायदा उठा सकता है। थोडा थोड़ा देते कुछ दूभर नहीं मालूम होता। प्लेग आदि दुर्घटनाओंके कारण अकाल-मृत्युके समय इनसे यथेष्ट लाभ होता है।

प्रायः देखनेमे आता है कि वहुतसे आदमी उमर भर काम करते रहने पर भी मरते समय अपने बच्चोंको भूखे गरीव छोड़ जाते हैं। जीवनकालमें वे बड़े सुखचैनसे रहे, कभी खाने पीने और रहने सहनेमें कमी न की, परंतु उनके मरते ही उनकी अवस्था शोचनीय हो गई। यदि वे १०-२० रु० साल भी किसी वीमाकम्पनीमें जमा कराते रहते तो उनके खर्चमें कोई कमी न आती और उनके कुटुम्बको भी कोई कष्ट न होता। परतु उन्होंने अपनी अदूरदर्शिताके कारण इस पर कुछ भी विचार न किया, जितना कमाया सवका सव खर्च कर दिया। जिसका परिणाम यह हुआ कि उनके मरते ही उनकी संतान समाजके लिए भारस्वरूप हो गई। अपनी संतानके प्रति इस प्रकारका व्यवहार करना बड़ी निर्दयता और कठोरता है। पहले तो उनका लालन पालन करना, उनके लिए सर्व प्रकारकी सुखसामग्री सचय करना और फिर उनको परवश, पराधीन और निर्धन छोड जाना, यह एक प्रकारसे समाज और उनके प्रति अन्याय और अपराध करना है।

अतएव हरएक आदमीके लिए यह वहुत जरूरी है कि वह थोड़ा थोड़ा रुपया किसी अच्छी बीमा कम्पनीमें जमा करता रहे कि जिससे अकालमृत्यु आदिका भय न रहे। मौतके बरावर कोई निश्चित चीज नहीं; परतु मौतके समयके वरावर कोई अनिश्चित भी नहीं। यदि हमने १०-१५ रु० देकर ५०० रु० का भी आज बीमा करा लिया तो

समझना चाहिए कि ये ५०० रु० ऐसे सुरक्षित बैंकमें जमा होगये हैं कि चाहे कितनी ही जरूरत क्यो न पड़े कभी खर्च न होंगे। और यदि हम कल मर जावें तो कल ही हमारे बालबच्चोंको मिल जावेंगे।

यदि हम ये १०—१५ रु० बीमा कम्पनीमें जमा न कराकर किसी बैंकमें जमा करते या किसी और जगह सूद पर चढाते तो कहीं ३०-३५ सालमें जाकर ५०० रु० जुड़ पाते, परन्तु बीमा कम्पनीमें जमा करानेसे ये ३०—३५ वर्ष चिंता आदिके दुःखोंसे मुक्त हो गये—अब भावी दुःखका भय वर्त्तमान सुखको नष्ट नहीं कर सकता।

इस तरह जीवनका बीमा एक प्रकारका ठेका है जिससे जीवनकी कठिनाइयाँ और आपत्तियाँ सरल हो जाती है। जो लोग जल्दी मर जाते हैं वे उन लोगोंके धनमें साझी हो जाते हैं, जो देरमें मरते हैं। यदि कोई मनुष्य इतने काल तक जिये कि उसमें यदि वह स्वयं जमा करता जाता तो बीमेसे मिलनेवाली रकमसे जियादह जमा कर लेता, तो भी उसे कोई पश्चात्ताप नहीं हो सकता, यदि वह उस सुख और शांतिका हिसाब लगाकर देखे जो उसे इतने दिनोंतक रही है।

जिस तरह बम्बई कलकत्ता आदि बड़े बड़े शहरोंमे सौदागर लोग अपने मालको अग्निसे सुरक्षित रखनेके लिए उसका बीमा करा देते हैं, उसी तरह जीवनको रोग शोक तथा असमयमृत्युसे बचानेके लिए लोगोंको उसका भी बीमा करा देना उचित है। जैसे वह जरूरी है ऐसे ही यह भी जरूरी है। जिस प्रकार पति और पिताका, जीवनकालमें भोजनकी चिंता करना और कुटुम्बका निर्वाह करना कर्तव्य है उसी प्रकार जीवनके पश्चात् भी स्त्री और संतानके लिए सामान जमा कर

जाना जरूरी है। यह प्रत्येक पुरुषका धार्मिक कर्तव्य है जिसका उसे सर्वदा पालन करना उचित है। सौभाग्यसे इसके लिए साधन भी आजकाल अनेक है और प्रबन्ध भी प्रशंसनीय हैं। अतएव हमें इसके लिए तत्काल ही दृढ सकल्प कर लेना चाहिए। इसमें कोई दोष या आपत्ति नहीं है और किसी प्रकारकी मानहानि भी नहीं है। यह अति उत्तम और लाभदायक कार्य है जिसमें किसीको कोई शका नहीं हो सकती। इंग्लैंड आदि देशोंमें इसका बहुत कुछ प्रचार है। भारतवर्षमें भी यह दिन दिन बढ़ता जाता है। परंतु इतनी बात याद रखना चाहिए कि जब हम किसी कम्पनीमें शामिल हों तो उसके नियमोंको अच्छी तरह देख लेवें। उसके डाइरेक्टरों, प्रबन्धकोंके व्यवहार और हिसाव-किताबकी भलीभाँति जाँच कर लवें और जिस तरह हो सके उसकी ईमानदारीकी परीक्षा कर लेवें कि जिससे वादमें धोखा न उठाना पड़े। हमें शोकके साथ लिखना पड़ता है कि आजकलकी इश्तहारी दुनिया हमको बहुत कुछ हानि पहुँचा रही है। इस लिए चाहिए कि, हम केवल छपे हुए उदाहरणो पर ही संतुष्ट न हो जावें, किंतु अच्छी तरहसे देख भालकर शामिल हों। आजकल प्रावीडेंट फंडवाली बीमा कम्पनियाँ जगह जगह खुल रही हैं। जितने इश्तहार छपते हैं उनमें प्राय: उन्हीं लोगोंके नाम आते हैं जिनको चंदा दी हुई रकमसे जियादह रुपया मिला। इन्हीं नामों और रकमोंको देख कर सर्वसाधारण मेम्बर वनने लगते हैं, परतु वादमें वहुत धोखा खाते है और टोटेमें रहते हैं। हमने स्वयं एक कम्पनीमें अपने एक सम्बन्धीकी शादीका बीमा कराया था। करीव १८ रु० का चंदा देकर ९ रु० पाये, उलटे गाँठके ९ रु० खोने पड़े। हमें जहाँ तक खयाल है किसी इश्तहारमें भी यह उदाहरण न आया होगा और हमारा जिकर न होगा। उदाहरण जहाँ मिलेंगे

उन ही लोगोंके मिलेंगे जिन्होंने १० रु० देकर १०० रु० पाये अथवा २० रु० देकर ५०० रु० पाये।

अतएव पाठकोंको उचित है कि इश्तहारों पर ही लुब्ध न हो जावें। जहाँतक हो सके कम चदेके लोभमें आकर प्रावीडेंट फंड कम्पनियोंमें शामिल न हों। किंतु ओरियंटल, सन राइज आदि प्रसिद्ध बीमा कम्पनियोंमे जिनमे नियत रकमका बीमा किया जाता है शामिल हो। चन्दा निःसंदेह कुछ अधिक देना होगा, परंन्तु रुपयेकी संख्या मालूम होनेसे चिंता न होगी। प्रावीडेंट फंडोंमे कोई संख्या नियत नहीं होती। शादियों और मौतोंकी संख्या पर रुपयोंकी सख्या होती है। कभी १ रु० के १० रु० मिल जाते है पर कभी रुपयेके आठ आने ही रह जाते है।

दूसरा तरीका यह है कि ऐसी सोसायटियों स्थापित करनी चाहिए कि जिनसे बेचारे गरीब लोगोंको दुःख अथवा आपत्तिके समय सहायता मिले। सोसायटीमें जितने मेम्बर होते हैं वे सब एक दूसरेके सहायक समझे जाते है। सोसायटीका जितना रुपया होता है वह सब सोसायटीके मेम्बरोंकी ही सहायताके लिए होता है। प्रथक् पृथक् मनुष्य कुछ नहीं कर सकता। रोग, अथवा मृत्युके समय उसके दुखका कोई पार नही होता। न कोई उसका सहायक होता है और न उसके पास काफी रुपया ही इलाज अथवा संतानपालनके लिए जमा होता है। परतु सहायक सोसायटियोंके मेम्बरोको इस प्रकारका कोई दुःख नहीं होता। उनके इलाज अथवा उनकी संतानके पालन पोषणके लिए सोसायटी मौजूद रहती है। चाहे उन्होंने केवल १० रु० ही चंदा दे पाया हो, परन्तु सोसायटी उनके लिए १०० रु० भी खर्च करनेको तैयार रहती है।

इंग्लैंड, बेलजियम, फ्रान्स आदि देशोंमें ऐसी बहुतसी सोसायटियाँ मौजूद हैं। वहाँकि मनुष्य ऐसी सोसायटियोंमें शामिल होना अपना कर्तव्य समझते हैं। वास्तवमे इनसे लाभ भी अनेक हैं। थोड़ासा चंदा देनेसे ही लोग मेम्बर बन जाते हैं। चदेका रुपया व्यापार आदि कार्योंमें लगाया जाता है, जिससे नफा भी होता रहता है। इस तरह सोसायटीका धन भी बढता जाता है। जिस समय किसी मेम्बरको किसी प्रकारका दुःख होता है अथवा वह अचानक मर जाता है तो इस देशकी नाईं उसकी बुरी दशा नहीं होती। उसकी औलाद भूखों नहीं मरती, भीख नहीं माँगती, उसका घर-बार नीलाम नहीं होता, सोसायटी उसकी तन मन धनसे सहायता करती है। इसमें सदेह नहीं कि पहले लोगोंको चदा देते कुछ बुरा जरूर माळूम होता है और एक प्रकारका फिजूल खर्च जान पडता है, परंतु पीछे इसका असली उपयोग माळूम होता है। मिहनती-मजूर लोगोंको तो इससे बहुत ही फायदा पहुँचता है; कारण कि वे अपनी थोड़ीसी मजूरीमेंसे कुछ नहीं बचा सकते, सबका सब खर्च कर डालते हैं और दुःखके समय काम बद होने और पैसा पास न होनेके कारण जितना दुःख उनको होता है उसको वे ही जानते हैं। जो दो दिनमें अच्छे हो जाते, वे दश दिनमें भी अच्छे नहीं हो पाते। कुछ बेचारे तो पैसेके अभावसे कोई इलाज ही नहीं कर सकते, यों ही मर जाते हैं। यदि ये लोग सहायक सोसायटियोंमें शामिल हों और आमदनीका दशवाँ वीसवाँ हिस्सा भी चंदा देते रहें तो इन्हें कोई कष्ट नहीं हो सकता।

इंग्लैंडमें केवल मजूरोंने ही ऐसी अनेक सोसायटियाँ खोल रक्खी हैं। इनसे न केवल सभासदोंको लाभ पहुँचता है किंतु आमदनीका कुछ भाग अन्य धार्मिक कार्योंमें भी लगाया जाता है। इसके अतिरिक्त

एक सोसायटीके सभासद होनेके कारण सब एक दूसरेके सुख दुखमें साथी रहते हैं। आपसमें एक प्रकारकी शांति माळूम होती है। सभासदोंकी जितनी सख्या बढती जाती है उतनी ही शक्ति और प्रीति बढ़ती जाती है, जिसका परिणाम देशके लिए बड़ा ही लाभकारी होता है।

हिन्दुस्तानमे ऐसी सोसायटियोंकी बहुत कमी है। इस कमीके कारण ही यहाँके साधारण स्थितिके मनुष्य बहुत दुःख उठाते है। अतएव यहाँ ऐसी सोसायटियोंका स्थापित करना बड़ा जरूरी है। इनके स्थापित होनेसे यहाँके लोगोंमेंसे भिक्षावृत्तिके भाव निकल जायँगे और वे स्वावलम्बन और आत्मनिर्भरताको सीख जायँगे।

अवश्य ही यह काम बड़ा कठिन है। इसमें प्रत्यक्षमें लाभ कम और हानि अधिक है। परतु यदि इसको विचारपूर्वक किया जाय और अच्छे नियमों पर चलाया जाय तो अवश्य सफलता होगी। यूरुपके देशोंमें इस प्रकारकी हजारों सोसायटियाँ नियमोंके ठीक न होनेके कारण टूट गईं। इसलिए नियमोंको बड़े विचारपूर्वक बनाना जरूरी है। विशेष कर इस बात पर ध्यान देना योग्य है कि उनके सभासदों पर अवस्थाके अनुसार चंदा लगाया जाय। यह न हो कि चाहे ७० वर्षका बूढ़ा शामिल हो चाहे २० वर्षका जवान, दोनोंसे एकसा चंदा लिया जाय। बहुतसी सोसायटियाँ इसी खराबीसे फेल हुई हैं। उनमे बूढ़ोंकी तादाद बहुत बढ़ गई जो स्वभावतः जवानोंसे कहीं पहले बीमारीमें फँस गये अथवा संसारसे चल बसे। इस तरह चंद बूढ़ोंने ही सोसायटीका सारा रुपया खतम कर दिया, बेचारे जवानोंको हानि उठानी पड़ी। यह देखकर जवानोंने शामिल होना ही छोड़ दिया, केवल बूढे ही आने लगे। इनका चदा इतना हुआ नहीं कि उनकी

बीमारी अथवा मौतके खर्चको पूरा करे। अंतमें रुपयेके अभावसे सोसायटीहीकी इतिश्री हो गई।

इन सोसायटीयोंने तो इस कारणसे धोखा खाया कि इनको इन बातोंका अनुभव न था। न कोई इस प्रकारका दृष्टांत उनके सामने था; परन्तु भारतवासियोंके सामने तो अब पूरा इतिहास मौजूद है जिसमें समस्त कम्पनियों और कारखानोंकी सफलता असफलताके रहस्य और कारण प्रत्यक्ष विद्यमान हैं। विचारपूर्वक काम किया जाय तो कदापि हानि न होगी। जिन खराब्रियोंके कारण ऐसी सोसायटियोंको हानि पहुँची है उनका प्रवेश ही न होने देना चाहिए। जो कार्य किया जाय वह उद्देश्य और नियमानुकूल ही किया जाय, जितने कार्यकर्ता नियुक्त किये जायँ वे सब कर्तव्यपरायण और सत्यनिष्ठ हों; उनको धर्म और न्यायसे कदापि विमुख न होना चाहिए।

आठवाँ अध्याय ।

सेविंग बैंक ।

(विद्वानोंके वाक्य।)

मेरी उत्कट इच्छा है कि मैं समस्त संसारमें सेविंग बैंक शब्दको सुनहरे अक्षरोंमें लिख दूँ।

गरीब लोगोंकी मददके लिए सबसे अच्छा उपाय यह है कि उनको यह बात सिखलाई जाय कि वे अपनी दशा स्वयं सुधारें ।

चींटीके पास जाओ और उससे शिक्षा ग्रहण करो । उसकी कोई देख भाल नहीं करता तिस पर भी वह अपने लिए गर्मीमें सामान जमा कर लेती है और जाडेमें आरामसे खाती है ।

*   *   *   *

भारतवर्षमें जिधर देखो उधर ही 'निर्धनताका साम्राज्य है । शायद ही कोई घर ऐसा होगा जिसमें इसका जोर न हो; प्रायः सब ही इसकी शिकायत करते हैं । इसका कारण कुछ न कुछ अवश्य है। विचार करनेसे मालूम होता है कि हम अपनी मूर्खता और अदूरदर्शिताके कारण इसके चुंगलमें फँसते है । आगेके लिए कुछ भी जमा नहीं करते । रोग शोक तथा अकालमृत्युकी कुछ परवा नहीं करते । जितनी आमदनी होती है सबकी सब खर्च कर डालते है । यही कारण है कि आपत्ति आने पर हम भूखों मरते हैं । आगेकी बात कोई नहीं जानता । सम्भव है कि कल हम बीमार पड़ जावें अथवा कल हमारी नौकरी छूट जावे; यदि हमारे पास थोड़ासा भी रुपया जमा है तो हमें कुछ कष्ट न होगा । जब तक आराम होगा अथवा दूसरी जगह नौकरी मिलेगी, तब तक हम आसानीसे अपना निर्वाह कर सकेंगे । परन्तु इसके विपरीत यदि हमारे पास रुपया नहीं है तो हमारी दशा बहुत शोचनीय हो जायगी ।

चाहे कितना ही थोड़ा रुपया हो जरूरतके समय बड़ा काम आता है। मान लो, किसी मजूरके पास दस रुपये हैं। उसकी नोकरी छूट गई और दूसरे शहरमे जियादह मजूरी मिलती है, तो वह इन दस रुपयोंसे दूसरे शहरमें जाकर काम कर सकता है; परंतु यदि उसके पास कुछ नहीं है तो वह वहीं पड़ा रहेगा—कहीं भी न जा सकेगा।

हम यह नहीं कहते कि कंजूसकी तरह रुपया जमा किया जाय, हम केवल इस कारणसे रुपयेकी कदर करते हैं कि हमें आराम मिले। ससारमें सब चीजें रुपयेहीसे मिलती हैं। जिसके पास रुपया है, जो आमदनीका थोड़ा हिस्सा भी बचाता है वह सदा आराममें रहता है, कभी तकलीफ नहीं उठाता।

आजकल रुपया जमा करनेके साधन भी अनेक है। हरएक शहरमें बेंक खुले हुए हैं, और सरकारने गरीबोंके सुभीतेके लिए हरएक कसबे और हरएक शहरमें डाकखानोंके साथ साथ सेविंग-बेंक भी जारी कर रक्खे हैं। डाकखानोंमें और और कामोंके साथ सेविंग बेंकका भी काम होता है। इस बेंकके नियम बडे ही सरल और उपयोगी है। गरीबसे गरीब भी इनसे लाभ उठा सकता है। चार आने तक भी इस बेंकमें जमा कर लिये जाते हैं और चलते हिसाबमें चार आने सैकड़ा माहवारी सूद मिलता है। जब चाहो जितना रुपया जमा कर दो और हफ्तेवार जितना चाहे निकाल लो, कोई कैद नहीं। अँगरेजी राज्यमें चाहे जिस डाकखानेमें अपना हिसाब बदलवा लो, तुम्हारी कौड़ी भी खर्च न होगी। इस बेंकमे रुपया डूबने अथवा दीवाला निकलनेका भी कोई भय नहीं। यह सरकारी बेंक है। इसकी मालिक और देनदार सरकार है। सबसे बड़ी बात यह है कि

इस बेंकका हिसाब बड़ा ही गुप्त रक्खा जाता है। पोस्टमास्टरको खास तौरसे इस बातकी हिदायत होती है कि वह किसी हिसाबदारका नाम प्रकट न करे। हरएक हिसाबदारको डाकखानेसे एक किताब मुफ्त मिलती है जिसे पास-बुक कहते हैं। इसमें ही जो रुपया तुम जमा करो अथवा निकालो दर्ज किया जाता है। हर दफे तुम्हारे हिसाबकी बकाया निकाल दी जाती है। साल भरमें सूद जोड़ दिया जाता है। इसी किताबके पीछे रुपया जमा करने और निकालनेके नियम लिखे होते हैं।

पहले पहले ये बेंक इग्लैंडमे गरीब लोगोंके लिए स्थापित हुए थे, पर अब सब देशों और ग्रामोंमें जारी हो गये हैं। इनका मुख्य उद्देश्य यह है कि साधारण लोग भी रुपया जमा कर सकें। जो आदमी चार आने रोज कमाता है उसके लिए पैसा रोज बचाना कोई कठिन बात नहीं है। यदि पैसा रोज भी बचाया जाय तो महीनेमें आठ आने हो जाते हैं और ये आठ आने सेविंग बेंकमें जमा करनेसे सालमें ६ रु० हो जायँगे। १० वर्ष में ६२ रु० के करीब हो जायँगे। हर साल मूलमें व्याज भी शामिल होता जायगा। जिस मनुष्यकी आमदनी ५० रु० मासिक है, यदि वह १२ रु० मासिक डाकखानेमें जमा करे तो दश वर्षमें सूद दर सूदके हिसाबसे १७०० रु० जमा कर सकेगा। इन रुपयोंसे यदि वह चाहे तो कोई अच्छा काम कर सकता है। किसी व्यापारादिमें लगा कर दश बारह रु० सैकड़ेका सूद कमा सकता है। यदि कुछ न करे तो किसी दूसरे बेंकमें जमा करके पाँच छह रु० सूद कमा सकता है।

अतएव हमें यथासाध्य बचानेकी कोशिश करनी चाहिए। महीनेमें जो बच सके, उसे सेविंग बेंकमें जमा कर देना चाहिए। अपने बच्चोंको भी शुरूसे ही इसका अभ्यास कराना चाहिए। जेबखर्चके लिए जब

उन्हें पैसे दो तो उनसे यह जरूर कह दो कि इनमेंसे कुछ बचाकर रखते जाओ। महीनेमें जब चार आने अथवा अधिक हो जावें तब किसी पासवाले डाकखानेमें उनका हिसाब खुलवा दो। बालकोंके नामसे भी हिसाब खोला जासकता है।

उनकी 'पासबुक' उन्हींको दे दो और उनको अच्छी तरह समझा दो कि बेटा, इस किताबको अपने पास बडी होशयारीसे रखना। जब तुम चार आने जमा कर लो, तब डाकखानेमें जाकर इस किताबमें जमा करा लाना। थोड़े दिनोंमें तुम्हारे पास बहुतसे रुपये होजावेंगे, तुम अमीर कहलाने लगोगे। बच्चेको शौक बढता जायगा और वह हररोज अपने जेबखर्चमेंसे कुछ न कुछ बचाता रहेगा। इससे न केवल रुपया ही जमा होगा, किंतु उसे मितव्ययता और संचयशीलताका अभ्यास भी हो जायगा। वह सदा अपने जीवनमें सुखी रहेगा। कभी फिजूलखर्चीके कारण तकलीफ न उठायगा। फिजूलखर्च प्रायः वे ही होते हैं जिन्हें बाल्यावस्थामें रुपया जमा करनेका अभ्यास नहीं कराया जाता। इसका अभ्यास करानेके लिए सेविंग बेंक बड़े उपयोगी हैं।

हम समझते हैं, सेविंग बेंकके बारेमें इतना कह देना काफी है कि सरकारने यह बेंक और बेंकोंकी तरह अपने लाभके लिए नहीं खोला है, किंतु केवल हमारे लाभके लिए जारी कर रक्खा है। हमारा कर्त्तव्य है कि यदि हम अपना भला चाहते हैं, अपनेको संसारमे सुखी रखना चाहते हैं तो हमें जरूर कुछ न कुछ बचाना चाहिए। विना बचाये हमारी स्थिति कभी ठीक नहीं रह सकती। इसकी कुछ परवा नहीं कि कितना बचाया जाय। जितना हम आसानीसे बचा सकें उतना ही काफी है। थोड़ा थोड़ा बहुत हो जाता है। एक एक बूँदसे घड़ा भर जाता है। आधा पैसा रोज बचानेसे चार

आने महीना बचता है। चार आनेकी शक्ति कुछ कम नहीं है। एक खोमचेवाला चार आनेका माल लगाकर उससे चार आने कमाता है; दो आने खाता है, दो आने मूलमें जमा करता है। दूसरे रोज छह आने लगाकर छह आने कमाता है। इस तरह उसकी पूँजी दिन दिन बढती जाती है। थोडे ही दिनोंमें वह अमीर बन जाता है। बंगालमे एक 'अधेली बाबू' हुए हैं। उन्होंने पैसा पैसा जमा करके एक अधेली अर्थात् आठ आने जमा किये और उन आठ आनों से वे व्यवसाय करने लगे। वे धीरे धीरे व्यवसायकी शिक्षा, मितव्यय और संचयके ऊपर ध्यान रख कर छोटे छोटे व्यवसायसे उन्नति करते करते भारी बनज-व्यवहार करने लगे और थोड़े ही दिनोंमें अतुल्य ऐश्वर्यके अधिकारी हो गये। इससे प्रकट है कि अधेलीकी भी शक्ति साधारण नहीं है। जो मनुष्य एक एक पैसा जमा करके अधेली तक पहुँचेगा, समझना चाहिए कि उसने संचयकी आधी शिक्षाको प्राप्त कर लिया।

अतएव हमें भी मितव्ययी और संचयशील होना जरूरी है। मितव्ययी और संचयी पुरुषोंके लिए सबसे पहला स्कूल सेविंगबेंक है। सेविंग बेंकसे उत्तीर्ण होकर हम बड़े बडे बैंकों और कार्यालयोंमें प्रवेश पा सकते है और अतुल्य लक्ष्मीके धनी हो सकते हैं।

इंग्लैंडमें जब कुछ देशहितैषी परोपकारी पुरुषोंने गरीबोंकी शोचनीय दशा पर तरस खाकर सेविंगबेंक स्थापित किये थे, तब उन्हें बड़े बड़े कष्ट उठाने पड़े थे; अनेक आपत्तियोंका सामना करना पड़ा था। परंतु हमारा अहोभाग्य है कि अब स्वयं सरकारने हमारे लिए स्थान स्थान पर इस प्रकारके बेंक खोल रक्खे हैं जिनमें हर तरहका सुभीता है। हमारे बहुतसे भाइयोंका इनमें पहलेसे ही हिसाब होगा। जिनका

नहीं है उनसे हम अनुरोध करते हैं कि वे बिना किसी बिलम्बके इनमें अपना हिसाब खोल दें। इससे साधारणस्थितिके लोगोंका बड़ा लाभ पहुँचेगा। थोड़े ही दिनोंमें उन्हें मालूम हो जायगा कि हमारा बहुतसा रुपया जो यो ही फिजूलखर्चीमें बर्बाद हो जाता सेविंग बेंकमें सुरक्षित मौजूद है।

गरज यह कि ये बेंक हमारे लिए बड़े ही उपयोगी हैं। हमें इनकी कदर करनी चाहिए और इनसे यथासाध्य लाभ उठाना चाहिए।

नवाँ अध्याय।

छोटी छोटी चीजें।

(विद्वानोंके वाक्य।)

इस बातको याद रक्खो कि कहाँ खर्च करना चाहिए, कहाँ बचाना चाहिए और कब किस चीजको खरीदना चाहिए। ऐसा करनेसे तुम कभी भूखे न रहोगे।

जो मनुष्य छोटी छोटी चीजोंको तुच्छ दृष्टिसे देखता है उसका धीरे धीरे सर्वनाश हो जायगा।

यदि तुम चाहते हो कि तुमको सच्चा सुख प्राप्त हो तो सदा छोटी छोटी चीजोंकी रक्षा करो।

× × × × ×

संसारमें छोटी छोटी चीजोंकी बेपरवाही करनेसे हजारों आदमी बर्बाद हो गये और होते जाते हैं। संसार छोटे छोटे परमाणुओंसे बना हुआ है। हमारा जीवन जरा जरासी घटनाओंका समूह है। यदि इनमेंसे एक एक पर विचार करें तो वे बहुत ही तुच्छ और अनावश्यक मालूम होती हैं; परंतु प्रत्येक मनुष्यकी सफलता इन्हीं जरा जरा सी घटनाओं पर निर्भर है। हम किस तरह रहते हैं और किस प्रकार इन घटनाओंका सामना करते हैं, बस इन्हीं बातों पर हमारा सुख अवलम्बित है। चरित्रगठनके लिए छोटी छोटी चीजें बड़ी जरूरी हैं। छोटी छोटी आदतोंके सुधारनेसे ही हमारा आचरण शुद्ध होता है और छोटे छोटे कामोंके करनेसे ही हमारा जीवन सुधरता है। व्यापारमें वृद्धि उसी समय होगी जब हम छोटी छोटी चीजोंकी परवा करेंगे।

घरमें आराम तभी मिलेगा जब हम छोटी छोटी चीजोंको नियमसे रक्खेंगे और वक्त पर तैयार रक्खेंगे। राज्यमें उसी समय उन्नति होगी और वही राज्य उत्तम राज्य कहला सकेगा जब उसमें छोटेसे छोटे काम पर भी पूरा पूरा ध्यान दिया जायगा।

एक एक अक्षर सीखनेसे ही ज्ञान बढता है। जितने बडे बड़े विद्वान् हुए और हैं उन्होंने एक दिन किसी न किसी भाषाकी वर्णमालाका पहला अक्षर पढा था। आज जो प्रसिद्ध अनुभवी कहलाते हैं, एक दिन उन्होने अनुभव प्राप्त करनेकी पहली सीढ़ी पर पैर रक्खा था। धीरे धीरे उनका ज्ञान और उनुभव बढ़ता गया। यदि वे एक एक अक्षर न सीखते, उनको तुच्छ समझ कर छोड़ देते तो कदापि आज अनुभवी विद्वान् न कहलाते। जरा जरा सी बातोंकी कदर करनेसे ही आज वे इस योग्य हुए।

जो मनुष्य कुछ नहीं सीखते अथवा कुछ जमा नहीं करते वे इसी कारणसे गिरे रहते हैं कि उन्होंने छोटी छोटी चीजों पर ध्यान नहीं दिया। वे प्रायः कहा करते हैं कि क्या करे, संसार हमारे विरुद्ध है, परन्तु वास्तवमें संसार उनके विरुद्ध क्या होगा वे स्वय अपने शत्रु हैं।

अबतक दैव पर लोगोंकी बहुत ही अधश्रद्धा थी। परन्तु अब ज्ञानके प्रकाशसे यह कुछ कुछ हटती जाती है। अब यह विचार होता जाता है कि परिश्रम ही दैवका जनक या पिता है, अर्थात् जितना मनुष्य श्रम और पुरुषार्थ करेगा तथा छोटी छोटी चीजोंकी ओर ध्यान देगा उतना ही वह सफलताको प्राप्त कर लेगा। "उद्योगिन पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीः।" निरुद्यमी आलसी पुरुष कभी सफल नहीं हो सकता। जो मेहनत नही करता वह कभी लाभ नही उठा सकता।

मानवजीवनकी सफलताके लिए दैवकी अवश्यकता नहीं, किंतु श्रमकी आवश्यकता है । दैव सदा बाट देखा करता है और चाहा करता है कि ऐसा हो जाय; परन्तु श्रम जिस चीजको करना चाहता ह तत्काल उसे दृढ़ संकल्पद्वारा कर डालता है। दैव दोपहर तक पलंग पर पड़ा हुआ डाककी जोहमें रहता है—शायद अमुक लाटरीमें मेरा नाम निकल आवे, परंतु श्रम सवेरा होते ही अपने कार्यमें लग जाता है और शामतक अपने निर्वाहके योग्य पैदा कर लेता है। वह अवसर ढूंढा करता है और यह अपने बाहुबल पर खड़ा होता है। वह पीछे और नीचे गिरता है और यह आगे और ऊँचे बढ़ता है।

घरमें बहुतसी छोटी छोटी चीजें होती हैं। सुख और स्वास्थ्यके लिए उनकी ओर ध्यान देना बड़ा जरूरी है। स्वास्थ्यके लिए सफाई एक मुख्य चीज है। सफाईकी जरूरत बड़ी चीजोंमें उतनी नहीं होती जितनी छोटी चीजोंमें होती है। फर्श साफ रखना, कपड़े बर्तन साफ रखना, दीवारों पर गर्द मिट्टी न चढ़ने देना, जाला न लगने देना, नाली साफ रखना, किसी जगह पानी जमा न होने देना, इधर उधर मैला कुचैला न डालना। देखनेमें ये बातें बहुत ही छोटी छोटी माळूम होती हैं परन्तु स्वास्थ्य पर इनका बड़ा असर पड़ता है। इनका खयाल रखनेसे बीमारी दूरसे ही भाग जाती है और मन पवित्र रहता है। मनका शरीर और बाह्य पदार्थोंसे घनिष्ट सम्बंध है। जो मनुष्य गंदा रहता है, जिसके घरमें सफाई नहीं होती, उसका मन भी मैला रहता है। उसके हृदयमें उच्च विचार उत्पन्न नहीं होते। जो हवा हमारे मकानोंमें चलती है वह बहुत ही छोटी चीज माळूम होती है, क्योंकि न हम उसको देख सकते हैं और न उसके विषयमें अधिक जानते हैं; परंतु यदि हमारे मकानोंमें काफी साफ हवा न आवे तो हमें अपनी

मूर्खता और असावधानीके कारण जरूर तकलीफ उठानी पड़ेगी। जरासा कूड़ा करकट भले ही माल्म न हो, हमारे मकानोंकी खिड़कियाँ चाहे बंद रहें या खुलीं इसमें कोई भेद भले ही माल्म न हो, परन्तु इनका बहुत ही बुरा परिणाम होता है। कूड़े करकटसे अथवा ताजी हवाके न आनेसे बुखारको घरमें आते देर नहीं लगती और एक दफा आने पर उससे पीछा छुड़ाना मुश्किल हो जाता है। इस कारण जरासी बदबू अथवा जरासी खराब हवा भी बड़ी हानिकर है। गरज यह कि घरमें जितने काम होते हैं, यद्यपि वे सब छोटे छोटे माल्म होते हैं, परन्तु उनका परिणाम बहुत बड़ा होता है। अतएव उनकी ओर हमारा पूरा पूरा ध्यान होना बहुत ही जरूरी है।

पिन कितनी छोटी चीज है परन्तु यदि वह ठीक तौरसे न लगाया जाय तो उससे लगानेवालेकी मूर्खता और फूहड़पन माल्म हो जायगा। ऐसे मनुष्यकी कभी इज्जत नहीं हो सकती। एक पुरुषका विवाह होनेवाला था। एक दिन उसने अपनी होनहार स्त्रीको बाल खोले हुए और बिना पिन लगाये हुए अपने कमरेमें घुसते देख लिया। बस, उसी दिनसे उसके दिलमें यह बात जम गई कि यह स्त्री बड़ी बेपरवाह है—इसका छोटी छोटी चीजोंकी तरफ खयाल नहीं है। इससे विवाह करना कदापि उचित नहीं है।

एक बार किसी सौदागरने किसी अखबारमें एक मुशीके लिए इश्तहार दिया। इश्तहारको देखकर बीसों आदमियोंकी दरख्वास्तें आईं। उसने सबको एक ही समय पर अपनी दूकान पर बुलाया और हर एकको एक एक पैसेकी नमककी पुड़िया बनानेको कहा। जब सब बना चुके, तो सौदागरने तमाम पैकटोंको अपनी मेज पर रक्खा और

उनमेंसे उस आदमीको पसंद किया जिसने सबसे उमदा पैकट बनाया था। उसने इस जरासे कामसे ही उनकी योग्यताका पता लगा लिया।

छोटी छोटी चीजोंकी बेपरवाहीसे बड़ी बड़ी हानियाँ हो चुकी हैं और बड़े बड़े काम फेल हो गये हैं। जहाजकी तलीमें जरासा छेद होजानेसे पानी उसमें भर जाता है और लाखों रुपयेका जहाज दमके दममें डूब जाता है। अँगरेजी कहावत है कि घोड़ेके पैरमें नालके न होनेसे उसका पैर टूट गया, पैर टूटनेसे घोड़ा गिर पड़ा, घोड़ेके गिरनेसे सरदार गिर गया, सरदारके गिरते ही शत्रुने उसको पकड़ लिया और मार डाला, सरदारके मारे जानेसे सारी सेना तितर बितर हो गई। देखिए जरासी लोहेकी नालके न होनेसे कितनी बडी हानि हुई!

इसके सिवाय प्रायः लोग कहा करते हैं कि अजी रहने भी दीजिए, यह ही काफी होगा, क्यों फिजूल झगड़ेमे पड़ते हो। उनका यह कहना बड़ा हानिकर है। ऐसा कहनेसे कितने ही घर जलकर राख होगये, कितने ही आदमी बिगड़ गये, कितने ही जहाज डूब गये—जिनकी कोई संख्या नहीं। ऐसा कहना सरासर भूल है। यह असफलताका मूल कारण है। हमको चाहिए कि 'इससे काम चल जायगा' ऐसे शब्द कभी न कहें। इस बातकी कोशिश करें कि वही काम करें जो सबसे उत्तम और उपयोगी हो।

हमारा जरासा आलस हमारे सारे कामको बिगाड़ देता है। कभी कभी जरासी बेपरवाहीके कारण हमें सैकड़ों रुपयोका घाटा उठाना पड़ता है। हमारे साथ बोर्डिंगमें एक महाशय रहा करते थे। वे सदा इस बातकी शिकायत किया करते थे कि हमारे कमरेमेंसे न जाने कौन हमारी चीजें चुरा लेजाता है। उन्होंने बहुत कुछ खोज की, परन्तु कुछ

भी पता नहीं चला। सबने उन्हें यह सलाह दी कि तुम एक बड़ा लोहेका सदूक लाकर उसमें अपना सारा जरूरी सामान रक्खा करो। बेचारोंने उसी रोज १०) रु० की लागतका एक सन्दूक मँगाया। यह तो किया मगर उसके लिए एक रुपयेका ताला मँगानेका आलस कर ही गये। नतीजा यह हुआ कि उसी चोरने मौका पाकर उनका माल फिर निकाल लिया। उनके जरासे आलसने देखिए कितना नुकसान पहुँचाया। इसी तरह बहुतसे लोग चावियोंको बेपरवाहीसे इधर उधर डाल देते हैं और जब कोई नौकर वगैरह मौका देखकर उनका माल निकाल भागता है तो हाथ मल मल कर पछताते है।

हमारे जीवनमें प्रतिदिन ही ऐसी घटनायें हुआ करती हैं। जिस घरमें छोटी छोटी चीजोंकी कदर नहीं की जाती--उनको सावधानीसे नियत स्थान पर सुरक्षित नहीं रक्खा जाता, समझ लो कि उस घरका अन्त आनेवाला है। धनवान् वही हो सकता है जो परिश्रमी है। परिश्रमी पुरुष कभी किसी चीजकी बेकदरी नहीं करता। छोटी छोटी चीजोंकी भी पूरीपूरी रक्षा करता है।

देखनेमें कोई चीज कितनी ही छोटी क्यों न हो, परन्तु उसकी ओर हमें उतना ही ध्यान देना जरूरी है जितना बड़ी चीजकी तरफ। उदाहरणके लिए एक पैसेको लीजिए। देखनेमे यह एक जरासे ताँबेका टुकड़ा है परंतु यह कितना उपयोगी है, कितनी चीजें इससे खरीद सकते हैं और इसको ठीक तौरसे खर्च करनेसे हमें कितना आनंद प्राप्त हो सकता है। एक एक पैसेसे रुपया हो जाता है। यदि हम पैसोंकी बेकदरी करें, एक इधर एक उधर फेंक दें, एककी सिगरेट पीलें, एककी जरासी शराब चख लें, तो हमारी सारी आमदनी यों ही उड़ जायगी। परंतु यदि हम एक एक पैसेको उचित रीतिसे खर्च करें-

कुछको सेविंग बेंकमें जमा करें, और कुछको बीमा कम्पनीमें लगावें तो बिना किसी कठिनाईके हमारी सब जरूरतें पूरी हो जायँगी और हमको किसी प्रकारकी चिन्ता न होगी ।

थोड़ा थोड़ा बचानेसे बहुत जमा हो जाता हैं । दाने दानेसे ढेर हो जाता है । एक एक तिनकेसे गट्ठा बन जाता है । पैसे पैसेसे रुपया हो जाता है । एक एक पैसा बचानेसे रुपये बच जाते हैं । रुपयेसे सुख, शान्ति, और स्वतन्त्रता प्राप्त होती है, परंतु स्मरण रहे कि पैसा ईमानदारीसे कमाना चाहिए । (ईमानदारीका कमाया हुआ एक पैसा दूसरेके दिये हुए रुपयेसे अच्छा है ।)

जो आदमी पैसेका उपयोग नहीं जानता वह सदा दूसरोंका मुँह ताकता रहता है । उसकी स्त्री और बच्चे टुकड़े टुकड़ेको तरसते रहते हैं । परन्तु जो पैसेको उत्तम रीतिसे खर्च करता है, वह सदा आनंदमें मग्न रहता है । उसकी स्त्री और बच्चे अच्छा खाते, अच्छा पहनते और अच्छी शिक्षा पाते हैं । वे कभी भूख, प्यास और गर्मी सर्दीके दुःख नहीं सहते। अचानक आपत्तिके समय वह कभी भयभीत नहीं होता। नौकरी छूट जाय अथवा बीमारी आजाय तो वह व्याकुल नहीं होता ।

अतएव पैसा देखनेमें चाहे जरासा मालूम हो, परन्तु उसकी शक्ति बहुत जियादह है । पैसोंकी रक्षा करनेसे रुपयेकी रक्षा होती है । इंग्लैंडमें ऐसी अनेक सोसायटियाँ है कि जिनमें केवल एक पैसा प्रति दिन जमा करनेसे बड़ी बड़ी रकमें मिलती है। जैसे यदि कोई आदमी जिसकी उम्र २० वर्षकी है ६० वर्षकी अवस्था तक एक एक पैसा प्रति दिन जमा करता रहे, तो उसके मरने पर उसके कुटुम्बियोंको २०० रु० के लगभग मिल जायँगे चाहे वह कल ही क्यों न मर जाय । जिसकी आयु १५ वर्षकी हो यदि वह जीवन पर्यंत एक पैसा दिया

करे तो उसके मरने पर उसकी औलादको ४०० रु० मिल जायँगे। यदि कोई आदमी अपने बच्चेके पैदा होनेके दिनसे एक पैसा रोज दिया करे तो १४ वें वर्षमें उसे ८५ रु० मिल जायँगे।

यदि कोई आदमी अपने बच्चेके पैदा होनेके दिनसे एक आना रोज दिया करे तो २१ वर्षकी उमरमें उसे ६८५) रु० मिल जायँगे। यदि कोई व्यक्ति—चाहे स्त्री हो चाहे पुरुष—२५ वर्षकी उमरसे एक आना दिया करे तो जीवनपर्यंत जब कभी बीमार पड़ेगा, उसे बीमारीकी हालतमे १) रोज मिलता रहेगा।

पैसेमें इतनी शक्ति है। देखिए, एक एक पैसेसे 'सहायक फंड' कितना काम कर रहे हैं। एक एक पैसा लेकर सैकड़ों रु० देते हैं, फिर भी खूब लाभ उठाते है। भारतवर्षमें भी ऐसे फंडोंके खुलनेकी जरूरत है।

पैसेकी तरह ही मिनिट और सेकंडको समझो; एक सेकंड भी कभी व्यर्थ न खोओ। जरूरतके वक्त एक सेकंड ही बड़ा काम देता है। जरा उस वक्तका अनुमान करो कि जब तुम्हें कहीं रेलमें बैठ कर जाना है और तुम उस समय स्टेशन पर पहुँचते हो; जब गार्डने सीटी दे दी और हरी झंडी दिखला दी है। बस, एक सेकंडमें गाड़ी चलनेवाली है। यदि उस समय एक सेकंडकी देर करते हो तो तुम गाड़ीमें नहीं बैठ सकते। समय बड़ा अमूल्य है। जो समय नष्ट हो जाता है वह कभी फिर नहीं आसकता। क्या पैसा और क्या सेकंड संसारमें कोई वस्तु भी व्यर्थ नहीं है। छोटीसे छोटी चीज भी कामकी है। चाहे कितनी ही छोटी चीज हो परन्तु जरूरतके वक्त उसके न होनेसे बड़ी तकलीफ होती है। मान लो कि हमारे गलेका बटन टूट गया। हमको कचहरी जाना है। परन्तु हमको सुई नहीं मिलती।

न जाने हमने उसे कहाँ रख दी है। देखिए, सुई कितनी जरासी चीज है। परन्तु इसके भी न होनेसे ऐसे वक्तमें कितनी तकलीफ होती है। अथवा हमने दियासलाईको कहीं बेपरवाहीसे रख दी। आधीरातको जब सब सो रहे हैं, हमें कुछ डर मालूम हुआ। परन्तु दियासलाईके न होनेसे हम लेम्प नहीं जला सकते। इस वक्त रुपये काम नहीं आसकते। क्योंकि बाजार बंद है, सब जगह अँधेरा हो रहा है, हर कोई सो रहा है। बिना दियासलाईके लेम्प नही जल सकता; परन्तु दियासलाई मिलती नहीं। इस समयके कष्टका कोई पार नहीं। यदि एक रुपयेमें भी एक सलाई मिल जाय, तो हम सहर्ष ले ले।

अतएव हमें किसी चीजको भी तुच्छ न समझना चाहिए। प्रत्येकको सावधनीसे नियत स्थान पर रखना चाहिए और उसका सदुपयोग करना चाहिए।

दसवाँ अध्याय।

स्वामी और सेवक।

(विद्वानोंके वाक्य।)

श्रमसे धन उत्पन्न होता है, मितव्ययतासे बढता है और सावधानीसे सुरक्षित रहता है। जो मनुष्य अपने कार्यको श्रमसे करता है, किंतु सावधानीसे नहीं करता वह एक हाथसे कमाता है और दूसरे हाथसे फेंक देता है।

धनसंचय करना हमारे अधिकारमें है। हमारी आय इतनी अधिक अवश्य है कि यदि हम बुद्धिपूर्वक व्यय करें और संयमका अभ्यास करें तो बहुत जल्द धनवान् बन सकते हैं।

कभी कभी कठिनसे कठिन मार्गद्वारा ही सफलता प्राप्त होती है।

स्वामी भी अपने सेवकोंकी बुरी आदतोंको बहुत कुछ सुधार सकता है। उनमें दूरदर्शिता और मितव्ययता पैदा कर सकता है। यद्यपि मजूर कारीगर यह नहीं चाहते कि कोई उनका संरक्षक हो, परन्तु यदि उनकी कोई सहायता करे तो इसमें उन्हें कोई शंका भी नहीं होती। यह हम पिछले अध्यायोंमें दिखला ही चुके हैं कि पृथक् पृथक् व्यक्ति भी बहुत कुछ कर सकते हैं। मितव्ययताका अभ्यास करके अपनी आमदनीमेंसे थोड़ा थोड़ा जरूरतके लिए बचा सकते हैं, परन्तु ऐसा करनेके लिए उन्हें उत्साह, सहायता और सहानुभूतिकी आवश्यकता है।

यह मालिकोंका काम है कि वे अपने नौकरोंकी बहती और लाभका सदैव खयाल रक्खें और उनके साथ जहाँ तक हो सके प्रेम और सहा-

नुभूतिका व्यवहार करें। इसमें उनका खर्च कुछ नहीं होता, किंतु लाभ बहुत जियादह होता है। जिस नौकरके साथ इस प्रकारका बर्ताव किया जाता है वह अपने मालिकके लिए प्राण तक देनेके लिए तैयार रहता है।

नौकर प्रायः कमसमझ हुआ करते हैं। शिक्षाके अभावसे उनमें विचारशक्ति नहीं होती, वे अपने हानि लाभको नहीं देख सकते। जहाँ चाहे खर्च कर डालते हैं। मालिकको चाहिए कि सदा इस बातका खयाल रक्खे कि मेरा नौकर सिगरेट तो नहीं पीता, शराबकी भट्टीपर तो नहीं जाता, इधर उधर वाहियात तो नहीं फिरता और फिजूल खर्च तो नहीं करता। यदि वह ऐसा करता है तो उसे इस तरह मना करना चाहिए कि जिससे उसके अंतरंगमें मालिककी ओरसे भय अथवा अरुचि पैदा न हो जाय, किंतु प्रेम तथा प्रतिष्ठाका अंकुर जम जाय। उन्हें संयम और दूरदर्शिताका अभ्यास करानेके लिए उनके लिए सेविंग बेंक और उनके बच्चोंके लिए पैसाबेंक खोलने चाहिए, संशोधक सभायें स्थापित करनी चाहिए और समय समय पर लेखों और व्याख्यानोंद्वारा उनको रुपयेका सदुपयोग बतलाना चाहिए, जिससे वे अपनी मजूरीको व्यर्थ न खो दें। जिस कारखानेका मालिक नोकरोंके साथ ऐसा वर्ताव करता है, उसका कारखाना सदा उन्नति करता जाता है। क्योंकि कारखानेकी उन्नति नौकरोंके हाथमें होती है। उस कारखानेके नौकर औरोंकी अपेक्षा कम मजूरी लेते हैं और अधिक काम करते हैं। उनको अपने मालिकसे एक तरहका प्रेम हो जाता है और वे कारखानेको अपना निजी काम समझने लगते हैं। उनमें कभी हड़ताल वगैरहका नाम भी सुनाई नहीं देता।

इंग्लैंड आदि देशोंमें ऐसे अनेक उदाहरण मिलेंगे, परन्तु भारत-वर्षमें इस समय ऐसे उदाहरणोंकी वहुत कमी है। यहाँ स्वामी और सेवकका कोई सम्बन्ध ही नहीं मालूम होता। स्वामीको अपनी धुन है, सेवकको अपनी लगन है। न स्वामीको सेवकसे सहानुभूति है और न सेवकको स्वामीसे प्रेम या प्रीति है। हरएकको अपनी फिक्र है। मालिक चाहता है कि जितना हो सके और जवतक हो सके इससे काम ले लूँ—चार पैसेका काम एक पैसेमें करा लूँ। नौकर चाहता है कि जितनी जल्दी हो सके इसकी वेगारसे अपना पीछा छुड़ा लूँ और एक पैसेकी मजूरीके चार पैसे ले लूँ। चाहे नौकर भूखके मारे मर रहा हो, उसे खाँसी जुकाम बुखार हो रहा हो, परन्तु मालिक उसे छोड़ना नहीं चाहता। और चाहे कितना ही जरूरी काम क्यों न हो, नौकर उसे करना नहीं चाहता। गरज यह कि यहाँ मालिक और नौकरके बीचमें कोई सम्वन्ध नहीं। इस सम्बन्धके न होनेसे हमारे कार्योंमें बड़ी बाधा पहुँचती है। हर रोज नये नये झगड़े देखनेमें आते हैं। स्वामी सेवकका सम्वन्ध केवल रुपयेका ही न होना चाहिए, दोनोंमें पारस्परिक प्रेम और सहानुभूति होना जरूरी है। अपने कुटुम्बियोंसे प्यार करो, अपने पड़ोसियोंसे प्यार करो, अपने जातिवालोंसे प्यार करो, अपने देशनिवासियोंसे प्यार करो, मनुष्य मात्रसे प्यार करो और प्राणी मात्रसे प्यार करो। इस तरह हमें क्रम क्रमसे प्यारकी सामीको वढ़ाना चाहिए।

नौकर चाहे कितने ही उद्दंड हो पर वे मालिकके अधीन होते हैं; मालिकका उन पर बहुत कुछ अधिकार होता है। मालिकका काम है कि जहाँ तक हो सके उनका सुधार करें। सदा उनके अभीष्ट पर दृष्टि रक्खे। इंग्लैंडमें बहुतसी कम्पनियोंने अपने नौकरोंके लिए रातके

स्कूल, दिनके स्कूल, पुस्तकालय, औषधालय बेंक आदि खोल रक्खे हैं और उनके रहनेके लिए वहीं कारखानोंके पास ही मकान बना दिये हैं। एक कम्पनीमें काम करनेवाले सब लोग प्रायः एक जगह रहते हैं और वहीं एक गाँव सा बसा लेते हैं। उनकी जरूरतोंको पूरा करनेके लिए हरएक चीजकी दूकानें खोल दी गई है जिनमें उन्हें लागतके दाम पर शहरसे कहीं सस्ता और अच्छा माल मिलता है। वहाँके रहनेवालोंमें धीरे धीरे आपसमें खान-पान और विवाहसम्बन्ध भी हो जाते है और वे सदा दुःख-सुखमें एक दूसरेको सहायता करते हैं।

भारतमें भी रेलवे कम्पनियाँ अपने आदमियोंके साथ प्रायः ऐसा ही व्यवहार करती है। हरएक स्टेशन पर रहनेके मकान बने होते है। स्थान स्थान पर रेलवे अस्पताल खुले हैं, जहाँ बिना किसी फीसके इलाज किया जाता है और दवाई भी बिना मूल्य दी जाती है। कम्पनीकी ओरसे प्राविडेंट फंड होता है जिसमें समस्त कर्मचारियोंका रुपया धीरे धीरे जमा होता है। बड़े बडे शहरोंमें रेलवे स्कूल भी खुले हुए हैं। रेलवे कम्पनियोके समान अन्य कम्पनियोको भी अपने आदमियोंका खयाल रखना चाहिए और जहाँ तक बन सके उनकी शारीरिक, मानासिक और आत्मिक शक्तियोंको बढाते रहना चाहिए। जिन कारखानोंमें केवल शारीरिक काम लिया जाता है उनके स्वामियोंको चाहिए कि अपने सेवकोंके लिए रातकी पाठशाला और पुस्तकालय भी खोल दें, तथा समय समय पर उनके लिए व्याख्यानोंका भी प्रबन्ध कर दें कि जिससे उन्हें मानसिक और आत्मिक उन्नति करनेका भी अवसर मिले। इसी तरह पृथक् पृथक् व्यक्तिको अपने अपने नौकरकी भी दशा सुधारनी योग्य है। बहुधा देखनेमें आता है कि हमारे घरोंमें जो नौकर काम करते हैं उनमे चुरट पीने, झूठ बोलने, मैला

रहने और चोरी करनेकी बुरी आदते होती हैं। उनकी देखादेखी हमारे बालक भी बिगड जाते हैं। यदि हमें नौकरोंकी भलाईका खयाल न हो तो न सही, परन्तु अपने बालकोंकी भलाईका खयाल तो अवश्य होना चाहिए ! इसी खयालसे ही उनकी बुरी आदतोंको छुड़ाना चाहिए। इसके अतिरिक्त उनको कुछ शिक्षा भी देनी जरूरी है। इसके लिए सबसे अच्छा उपाय यह है कि एक मोहल्लेके आदमी मिलकर उनके लिए रातका स्कूल खोल दें जिसमें उनको एक एक दो दो घंटे रोज पढाया जाय। धीरे धीरे वे पढना लिखना सीख जायँगे और बहुत कुछ उन्नति कर सकेंगे। उनके वेतनमेंसे एक आना रुपया काटकर तथा आधआना रुपया अपने पाससे मिलाकर किसी बेंकमें उनके नामसे अपनी मार्फत जमा कराते रहना चाहिए। जब उनके पास थोड़ासा रुपया जमा हो जाय, तब वह किसी व्यापार आदिमें लगा दिया जाय अथवा उससे किसी कम्पनीका एकाध हिस्सा खरीदवा दिया जाय। ऐसा करनेसे उनकी पूँजी धीरे धीरे बढती जायगी और उनकी दशा बहुत कुछ सुधर जायगी। उनके विचार उच्च हो जावेंगे और उनसे देशको बड़ा लाभ पहुँचेगा। नौकरोंकी दशा सुधारनेके लिए एक बातकी और जरूरत है और वह यह कि उनको घृणाकी दृष्टिसे नहीं देखना चाहिए। यद्यपि वे आपके नौकर हैं, आपके आधीन हैं पर इस कारणसे उन्हें तुच्छ समझना ठीक नहीं है। नौकर तो शायद आप भी हो। अंतर केवल इतना है कि आप अधिक वेतन पाते हैं और वे बेचारे थोड़ा। नौकर होनेकी दृष्टिसे दोनों बराबर है। जिस तरह एक १००) मासिक वेतन पानेवाला बाबू यह पसंद नहीं करता कि उसका अफसर उसे गाली दे, मारे अथवा दिक करे, इसी तरह जिस नौकरको आप ७) रु० मासिक देते हैं वह भी यह पसंद नहीं कर

सकता कि आप उसे 'बे' 'तू' करके बोलें अथवा हर समय डॉटें-डपटें और मारे। अपनी जान सबको प्यारी है। आत्मगौरवका विचार प्रत्येक व्यक्तिके हृदयमें होना आवश्यक है। यदि ७) रु० मासिकका नौकर गाली सुनना पसंद नहीं करता तो इससे यह न समझ लेना चाहिए कि वह पाजी अथवा धूर्त है। नहीं, उसे अपनी इज्जतका खयाल है। वह अपनेको और नीच बनाना पसन्द नहीं करता। जब तक यह भाव मनुष्योंके हृदयमें न आयगा वे उन्नति नहीं कर सकते। अतएव यदि आप देशके सच्चे शुभचिंतक हैं, और साथमें यह इच्छा रखते है कि आपका काम ठीक ही चलता रहे तो आपको नौकरोंके साथ चाहे वे कितने ही छोटे दर्जेके हों और उनका वेतन कितना ही न्यून हो, उत्तम रीतिसे व्यवहार करना चाहिए। उनके सुख दुखका पूरा पूरा खयाल रखना चाहिए। उनको अपना दास और गुलाम न समझना चाहिए किंतु अपना सहायक और रक्षक समझना चाहिए। उनको भूलकर भी गाली-गलोज न देना चाहिए। उनकी भूलोंको उसी तरह क्षमा करना चाहिए जिस तरह आप अपने अधिकारियोंसे अपनी भूलोंकी क्षमाकी आशा रखते हैं। परन्तु हॉं, यह जरूर है कि उन्हें इतनी स्वतत्रता न दे देनी चाहिए कि जिससे वे मुँहलगा हो जायँ। आवश्यकतासे अधिक किसीसे भी बातचीत नहीं करना चाहिए। फिजूल बातोंके करनेसे नौकर तो नौकर घरके आदमी भी खराब होजाते हैं और फिर पीछेसे उनका सुधारना कठिन होजाता है। नौकरोंको उनकी जिम्मेदारियोंका पूरा पूरा बोध करा दो और उनके हृदयमें इस बातको जमादो कि आप उनके सच्चे शुभचिंतक हैं।

ग्यारहवाँ अध्याय।

अपव्यय।

(विद्वानोंके वाक्य।)

कर्ज कभी मत लो, सदा हिसावसे खर्च करो।

कर्ज लेकर खर्च करनेसे मनुष्यका गौरव कभी नहीं बढ़ता।

* * * *

आयसे अधिक व्यय करनेको अपव्यय कहते हैं। जितनी आय हो वह सबकी सब खर्च कर देनेको भी अपव्यय कहते है। अमितव्यय व्यर्थव्यय आदि इसीके पर्यायवाची नाम हैं। अपव्ययके कारण यह देश दिनों दिन निर्धन होता जाता है। यह एक ऐसी बुरी आदत है कि इसमे फँस कर लखपतीको भी भिखारी होते देर नही लगती। भारतमें केवल धनिक पुरुष ही अपव्ययी नहीं होते, किन्तु साधारण स्थितिके मनुष्य भी विवाहादिमें हजारों रुपये कर्ज लेकर खर्च कर डालते हैं।

जहाँ देखो वहाँ फिजूलखर्चीकी ही चर्चा है। इस फिजूलखर्चीने हजारों घरोंका सत्यानाश कर दिया, लाखोंको पैसे पैसेका भिखारी वना दिया। जो कभी सेठ साहूकार कहलाते थे, जिनके घर कभी हाथी घोड़े बँधे थे, जिनकी कभी बँधी बँधती थी और खुली खुलती थी, आज उन्हींकी संतान टुकड़े टुकड़ेको तरसती है और मेरे तुम्हारे आगे हाथ पसारती फिरती है। यह आदत घटती नहीं, दिनों दिन वढती ही जाती है। गाँवके आदमी शहरवालोंकी देखादेखी करते जाते हैं और फिजूलखर्चीमें ही अपना गौरव समझते हैं। इंग्लैंड आदि पश्चिमी देशोंमे तो केवल कपडे और फेशन वगैरहमें ही फिजूलखर्ची

होती है, किन्तु भारतवर्षमें जियादहतर विवाह-शादियोंमें, उत्सवोंमे, मेले-प्रतिष्ठाओंमें, जन्म-मरणमे और धनिकोंके नानाप्रकारके भोगविलासोंमें होती है। गरीबसे गरीब भी अपने बेटे-बेटीकी शादीमें कर्ज लेकर खर्च करना जरूरी समझता है। गाँठमें चाहे कौड़ी न हो और न भविष्यमें होनेकी आशा हो, किन्तु शादीके खर्चके लिए वह जेवर बेच देता है-घर दूकान तक गिरवी रख देता है। इसमे ही वह अपना गौरव समझता है। चाहे कुछ हो, परन्तु भाई बन्धुओ और जाति बिरादरीमें सिर नीचा न हो। अमुक व्यक्तिने अपने लड़केकी शादीमें ५,००० रु० खर्च किये, मुझे भी उतना ही खर्च करना जरूरी है; नहीं तो लोग क्या कहेंगे? बिरादरीमे नाक कट जायगी, इस विचारने ही हमको अमितव्ययी बना रक्खा है।

दैनिकचर्यामे भी हमारा सदा यही विचार रहा करता है कि किसी तरह हम दूसरोंसे कम न समझे जावें। लोग हमारा उतना ही आदर करें जितना दूसरोंका करते हैं और हमारे पास उतनी ही इष्ट सामग्री हो जितनी दूसरोंके पास है। इन्हीं वस्तुओंके सग्रह करनेमें हम अपनी सारी आमदनी खर्च कर डालते हैं। कभी कभी जरासी चीजके लिए भी कर्ज तक लेते नहीं डरते। न जाने हमारे अंदर यह बुरा विचार कबसे पैदा हो गया है कि जैसा दूसरे करे वैसा हम भी करें। यदि हमारा दूसरा भाई घोडे-गाड़ी रखता है, बहुतसे नौकर रखता है, बड़े बढिया मकानमें रहता है, प्रतिदिन नये नये कपड़े बदलता है, अच्छे अच्छे खाने खाता है और दूसरोंको खिलाता है तो हमें भी ऐसा ही करना चाहिए-तब ही हमारी बात रहेगी। परन्तु यह कभी नहीं विचारते कि इतना खर्च करनेकी हमारी शक्ति भी है या नहीं; उसकी आमदनीके बराबर हमारी आमदनी भी है या नहीं, दूसरोंके समान

हम प्रतिष्ठा पाना तो जरूरी समझते है किन्तु उसके कारणों और साधनों पर कभी विचार नहीं करते।

चाहे हम कितने ही निर्धन हो, चाहे हमारी आमदनी कितनी ही थोड़ी हो, चाहे हम अपनी आमदनीसे कुटुम्बका अच्छी तरह पालन भी न कर सकते हों परन्तु हम ससारमें अपनेको अमीर ही दिखलाना चाहते है। लोग यह कदापि न जानें कि हम गरीव हैं, इसीको हम अपने जीवनका उद्देश्य समझते है। इस दिखलावेको लिए ही हम कर्ज लेकर विलायती दूकानोंके वने हुए सूट पहनते हैं, यार--दोस्तोंको अच्छे अच्छे खाने खिलाते हैं और कभी पैदल चलना पसंद नहीं करते। परन्तु जव कर्ज वढ जाता है, वाप-दादाका जमा किया हुआ माल खतम हो जाता है, वेंकमें पैसा नहीं रहता, घर दूकान दूसरेकी हो जाती है और अदालतमें नालिशें होने लगती हैं, तव हमारा सारा मान भंग हो जाता है, सारे यार-दोस्त कपूरके समान उड़ जाते हैं—कोई हमारी तरफ झॉक कर भी नहीं देखता।

जिनमें स्वावलम्वन और आत्मवल है, जो आत्मगौरवके वास्तविक अर्थको जानते हैं, उन्हें गरीवी कभी नहीं सताती। थोडीसे थोडी आमदनीमें भी वे अपना निर्वाह कर सकते है। मजे उड़ानेवाले यार दोस्तोंसे प्रतिष्ठा होती है, यह समझना निरी मूर्खता है। वे तव ही तक आपके साथी है जव तक आपके पास रुपया है, अथवा आपको उधार मिल सकता है। जिस दिन आपको उधार मिलना वद हो गया, उसी दिन वे भी आपके यहॉ आना वद कर देंगे। यह हाल केवल यार–दोस्तोंका ही नहीं है, सम्बन्धियोका भी यही हाल है। ऐसे लोगोंसे गौरव कदापि नही वढ सकता। गौरव स्वावलम्वन और चरित्रगठनसे

बढ़ता है। (रुपयेको मितव्ययता और सावधानीसे खर्च करनेसे प्रतिष्ठा बढती है न कि कर्ज लेकर अथवा उधार लेकर खर्च करनेसे।)

हम बहुतसी रस्मों और रिवाजोंके दास बन रहे हैं। इन्होंने ही हमको चारों ओरसे जकड़ रक्खा है। हमको कोई काम उनके विरुद्ध करनेका साहस नहीं होता। जो कुछ हमारे बड़ोंने किया है अथवा हमारे कुटुम्बमें होता चला आया है वही हमको करना होगा, चाहे हम उसके योग्य हों या न हों। हम आपत्ति सहनेको तैयार हैं, घर-बार बेचनेको मौजूद हैं; परन्तु फिजूलके रीति-रिवाजोंको रोकनेके लिए तैयार नहीं। हमारा दिल भले ही कहता हो कि ये रस्में बुरी हैं, इनको छोड़ना चाहिए, इससे हमको बड़ी हानियाँ पहुँच रही हैं; किन्तु हम स्वय अगुवा बनना नहीं चाहते। चाहते हैं कि पहले दूसरे लोग छोड़ें, पीछे हम देखेंगे। यदि कोई व्यक्ति साहस करके किसी रस्मको छोड़ भी देता है, तो जातिवालोंकी ओरसे उसका उत्साह बढ़ाया नहीं जाता है उलटा वह हतोत्साहित किया जाता है। उसका प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूपसे विरोध और अपमान किया जाता है। न उसके यहाँ कोई जाता है और न उसकी किसी प्रकारसे सहायता की जाती है। तमाम जाति उसको कृपण और दरिद्र कहकर पुकारती है। यह देखकर किसीका साहस नहीं होता कि कोई काम भी प्रचलित प्रथाओंके विरुद्ध करे। परतु यदि विचारपूर्वक देखा जाय, तो यह हमारी निर्बलता और अज्ञानता है। हमको चाहिए कि हम किसीका परवा न करें। दूसरे लोग हमसे क्या कहेंगे इसका विचार तक भी दिलमें न लावें। वे जो चाहें कहें, हमारा कुछ नहीं बिगड़ सकता। यदि वे हमारा साथ नहीं देते तो न सही, परन्तु हमें कोई काम अपनी वितसे बाहर नही करना चाहिए। यह हमारा दृढसंकल्प होना चाहिए। इसमें संदेह

नहीं कि इसके लिए बड़े साहसकी जरूरत है परतु अंतमें हमारी ही विजय होगी, इसमें भी कोई सशय नहीं। आज अज्ञानताके कारण लोग हमारा भले ही विरोध करें; परंतु थोड़े दिनोंके बाद हमारा सत्य सब पर प्रकट हो जायगा और सब कोई हमारा अनुकरण करने लगेंगे। पहले हरएक कार्यमें बाधायें आती हैं, परंतु बादमें सब काम सरल हो जाते हैं। इतिहास इस बातका साक्षी है। जितने नये नये काम हुए प्रारम्भमें लोगोंने उनका घोर प्रतिकार किया, परन्तु अब सभी उनकी मुक्तकंठसे प्रशंसा करते है। केवल साहस और श्रद्धाकी आवश्यकता है।

संसारमें सब मनुष्य एकसे नहीं है। धनवान् भी हैं, निर्धन भी हैं, बलवान भी हैं, निर्बल भी हैं। एकसे बढ़कर एक हैं। यदि हम दूसरोंका ही अनुकरण करनेमें अपना गौरव समझते हैं तो कदापि गौरव प्राप्त नहीं कर सकते। गौरव बुरी चीज नहीं है; प्रत्येक मनुष्यका कर्तव्य है कि गौरव प्राप्त करे। जिस मनुष्यका गौरव नहीं, उसका जन्म लेना ही ससारमें निष्फल है। भेद केवल इतना ही है कि हम गौरवके वास्तविक अर्थको नहीं समझते। हमारा विचार है कि अच्छे अच्छे कपड़े पहनने और बढिया बढिया मकानोंमें फेशनसे रहनेमें ही गौरव है। अँगरेजी लिबास और अँगरेजी ढगमें रहना तो मानों गौरवकी उच्चतम सीढीपर चढ जाना है। चाहे हमारा आचरण कैसा ही हो, चाहे हम दिनों दिन कर्जके भारसे दबते जाते हों; परन्तु हमारी समझमें इन बातोंका गौरवसे कोई सम्बन्ध नहीं। गौरव केवल फेशन और स्टाइलमें है। इस अज्ञानताने ही हमारा सत्यानाश कर दिया और यही अब भी करती जाती है।

यह बाहरी फेशन और दिखलावा दिनोंदिन बढता जाता है। फ्रांस और इग्लैंड तो पहले ही इन बातोंमें प्रसिद्ध थे परन्तु अब भारत भी

कुछ कम नहीं रहा। उन देशोंमें तो केवल कपड़े वगैरहमे ही फिजूलखर्ची की जाती है, परन्तु भारतमें न केवल कपडेमें किंतु जेवरमें भी लाखों रुपया प्रतिदिन नष्ट किया जाता है। चाहे कोई आदमी कितना ही निर्धन हो परन्तु वह भी जेवरको एक प्रकारकी आवश्यक चीज समझता है। प्रमाणके लिए इस देशके गरीबसे गरीव घरको ले लीजिए। अनाज उसमें भले ही न निकले, परन्तु जेवर कुछ न कुछ अवश्य निकलेगा। विवाह-शादियोंमें हजारों रुपये केवल जेवरके लिए ही खर्च किये जाते है। विना जेवरके विवाह हो ही नहीं सकता। वेटीवाला पहले यह पूछ लेता है कि कितना जेवर चढ़ाओगे, पीछे मँगनी करता है। सैकड़ा पीछे आठ मनुष्य ही ऐसे निकलेंगे जिनको अपने बेटे-बेटियोंके विवाहमें कुछ कर्ज नहीं लेना पड़ता है और दस ऐसे निकलेंगे जिनको अपनी जायदाद वेचनी अथवा गिरवी नहीं रखनी पड़ती है। इस तरह लोगोंको जेवरके लिए कर्ज लेना पड़ता है। फिर सुनारको घड़ाई देनी पड़ती है। सुनार कभी असली चीज नहीं वनाता, कुछ न कुछ खोट अवश्य मिला देता है। यदि न भी मिलावे, तो भी जेवर दिनो दिन घटता जाता है। पहननेसे घिसता है और रखनेसे खराब होता है। लाभ कुछ नहीं होता, पत्थरकी तरह रक्खा रहता है। यदि कभी वेचा जाय, तो घड़ाई और खोटके अतिरिक्त कम दाममें कम भावसे बिकता है। लाभके स्थानमें उलटी हानि होती है और रुपयेका दुरुपयोग होता है। यदि इतना रुपया जेवरमें खर्च न करके किसी व्यापार आदिमें लगाया जाय अथवा बैंकमें जमा किया जाय, तो दिनों दिन बढ़ता जायगा और कुछ वर्षोंके बाद दूना होयगा। इसमें संदेह नहीं कि प्राचीन कालमें जेवर बनवानेकी प्रथा एक उपयोगी सिद्धात पर प्रचलित की गई थी। दुःख आपत्तिके समय--टोटे घाटेमें जेवर बड़ा काम आता

था परंतु उन दिनोंमें जेवर उसी रुपयेका बनवाया जाता था जो फालतू होता था, जिनकी जरूरत नहीं होती थी। कर्ज लेकर जेवर कभी नहीं बनावाया जाता था। आजकल भी यदि किसीके पास फालतू रुपया हो तो वह जेवर बनवा सकता है। हमें इसमें कोई एतराज नहीं; परंतु कर्ज लेकर जेवर बनवाना सरासर मूर्खता है। जेवर उपयोगी अवश्य है किन्तु आवश्यक नहीं है।

जिस तरह पेरिसकी स्त्रियाँ उधार लेकर नये नये फेशनके कपडे बनवाती हैं, उसी तरह भारतीय स्त्रियाँ अपने पुरुषोंको तरह तरहके फेशनके जेवर बनवानेके लिए तंग करती रहती हैं। यदि पुरुष अपनी निर्धनताके कारण उनकी इच्छा पूर्ण नहीं करते, तो मानों घरमें युद्ध खडा कर लेते है।

इंग्लैंडमें जब कोई मर जाता है तब बड़ी सज-धजके साथ उसका क्रिया-कर्म किया जाता है और सैकड़ों रुपये खर्च कर दिये जाते हैं। इसी तरह भारतमें जब किसीके पुत्र पैदा होता है अथवा कोई बड़ा आदमी मर जाता है, तब सैकड़ों रुपये नाच तमाशों, नुकतों और ज्योनारोंमें खर्च कर दिये जाते हैं। कहीं कहीं तो ऐसा रिवाज है कि चाहे बूढा मरे चाहे जवान, चाहे छोटा मरे चाहे बड़ा, सब भाइयोंको तेरहवीं खिलानी ही पडती है। विवाहोंमें पैसे पास न होते हुए भी भाजी देनी पडती है और दहेजमें सैकड़ों रुपयेका सामान देना पड़ता है। किसी किसी जातिमें जबतक लड़कीवाला हजार पांचसौ रुपया लड़केवालेको नहीं दे देता विवाह ही नहीं हो सकता।

इन प्रथाओंके कारण झूठी नामवरीके खातिर लोगोंको लाचार होकर कर्ज लेना पडता है, परन्तु यह उनकी निर्बलता है। वे कर्ज लेते डरते नहीं, उनको कर्ज लेते भय नहीं मालूम होता। वे समझते हैं

कि कर्ज लेना अच्छा है परंतु जातिमें अपमानित होना अच्छा नहीं ।
उनके दिलमें कभी यह विचार नहीं आता कि विवाहादिक कार्यके लिए
कर्ज लेना अनुचित है। वे इसको जरूरत समझे हुए है । यही उनकी
भूल है । जातिमें जितनी प्रथायें है वे सब मनगढ़ंत हैं। किसी नि-
यम पर भी स्थिर नहीं हैं । हम क्यों उनकी नकल करें, यह समझमें
नहीं आता । कुछ अमीरोंने फिजूलखर्ची करके उनको प्रचलित कर
दिया है; हमारा काम है कि हम उन्हें हानिकर समझकर तोड़ दें ।
इसमें कोई पाप नहीं । यह धर्मके विरुद्ध नहीं । सभ्यता और शिष्टा-
चारके प्रतिकूल नहीं । भावी जीवनके लिए बाधक नहीं । केवल कुछ
लोगोंके भयसे वास्तविक गौरवको नष्ट करना, ऋण और चिन्ताका
असह्य भार अपने सिर पर उठाना, अपनी स्वतंत्रताका नाश करना
और अपनी संतानको उत्तम शिक्षासे वंचित रखना निरी मूर्खता है ।
यदि हम किसी विवाहमें १००० रु० खर्च न करके १०० रु०
में ही काम कर लें, सारे शहरके खाते-पीते लोगोंको न खिलाकर
कुछ अपने इष्ट मित्रों और भूखोंको ही खिला दें, जेवर और
चमकीले भड़कीले रेशमी मखमली कपड़ोंमें हजारों रुपये नष्ट न
करके साफ और सादे कपड़ों पर ही संतोष कर लें, तो हमें कोई शह-
रसे नहीं निकाल देगा; न कोई धर्मसे पतित कर सकेगा और न कोई
जातिसे बाहर कर देगा । कुछ दिन जातिके मूर्ख लोग भड़भड़ करके
रह जायेंगे । हमारा कर्तव्य है कि हम अपनी लड़कीके विवाहमें लड़के-
वालेसे जेवरका नाम भी न लें, किन्तु उसे यह समझावें 'कि जेवरमे
रुपया लगाना रुपयेको बर्बाद करना है । हमको वे काम करने चाहिए
जिनसे रुपया बढ़े और रुपयेको ऐसे कामोंमे लगाना चाहिए कि जो
जीवनके लिए आवश्यक हों। जेवर जरूरी चीज कदापि नहीं है। पौष्टिक

पदार्थ खाना, साफ सुथरे कपड़े पहनना, स्वच्छ मकानमें रहना, संतानको उत्तम और उच्च शिक्षा दिलाना, रोग शोक और अकालमृत्यु आदिके लिए रुपया जमा करना और अनाथो विधवाओंकी सहायता करना, ये जीवनकी आवश्यकताये हैं। पहले इनको पूरा करना हमारा सर्वोपरि कर्तव्य है। यदि इन सबसे रुपया बच जाय और इन सम्बन्धी कोई इच्छा न रहे, तो भले ही हम जेवरमें रुपया खर्च कर दें; परन्तु इन सब बातोंका विचार न करते हुए कर्ज लेकर जेवरमे रुपया लगाना अथवा और फिजूलखर्ची करना मानों अपनी नींवमें कुल्हाड़ी मारना है।

हमें तो कर्जको सुनकर भय मालूम होता है। इसके नामसे ही डर लगता है। यह वह बला है कि जिसके पीछे एक बार लग जाती है फिर उसको कठिनाईसे छोड़ती है। कर्ज लेना क्या है अपनी ईमानदारीको बेचना और झूठ और बेईमानीको मोल लेना है। कर्जवाले सदा बादे किया करते हैं, परन्तु उन्हे पूरे कभी नहीं कर पाते। वे हरएककी निगाहमें गिर जाते हैं और सब गौरव खो बैठते हैं। उनकी स्वाधीनता नष्ट हो जाती है, मनोबल क्षीण हो जाता है, प्रतिष्ठा जाती रहती है। कोई उन पर विश्वास नहीं करता और किसीके आगे वे मुँह उठाकर बोल नहीं सकते।

अतएव हमें कदापि कर्ज न लेना चाहिए। भूखों मरना अच्छा है; परन्तु कर्ज लेकर पेट भरना अच्छा नहीं। हमारी जितनी आमदनी हो, उसीके अनुसार खर्च करें। आमदनीसे जियादह खर्च करनेका विचार तक भी कभी दिलमें न लावें। कोई चीज चाहे कितनी ही सस्ती मिले, उधार न लें। स्मरण रक्खो, उधारमें तुम्हें कभी कोई भी चीज सस्ती नहीं मिल सकती। दूकानदार इस बातको खयालमें रखता है कि तुम इतने दिनोंमें रुपया दोगे, वह उससे दूनी मुद्दतका

सूद लगा लेता है। कुछ व्यापारी छह छह महीनेके उधार पर कपड़ा वगैरह बेचा करते हैं। लोग खुशी खुशी उनसे माल लेते हैं और समझते हैं कि इसमें हमको लाभ रहेगा, पर वे मितव्ययताके नियमोंसे अपरिचित हैं। उन्हें एक रुपयेके मालके तीन रुपये देने पड़ते है। यदि वे अपनेको छह महीनेतक किसी तरह वशमें कर लेवें, तो छह महीनेके बाद वही चीज एक रुपयेमें वाजारसे नकद दाम देकर खरीद सकते हैं और दो रुपया बचा सकते है। इसके लिए कठिनाई कोई नहीं है, केवल संकल्पकी आवश्यकता है। हम यह संकल्प कर लें कि हम कोई चीज उधार नहीं लेंगे, चाहे हमें कोई कितना ही लोभ दे हम उसके लोभमें न आवेंगे और अपने विचार पर जमे रहेंगे। यही बात हमें अपनी स्त्री और बच्चोको समझा देना चाहिए। प्रायः बहुतसी फिजूलखर्चियाँ स्त्रियोंके आग्रहसे हुआ करती हैं। यदि स्त्रियोको हमारी दशाका अच्छी तरह ज्ञान होगा, आयव्ययसे परिचित होगी और साधारण गणित जानती होंगी तो कदापि फिजूलखर्चके लिए जोर न देंगी और न स्वयं करेंगी।

यह बात भी सदा याद रखनी चाहिए कि यदि हमारी अमदनी इतनी थोडी है कि हम कोई इच्छित पदार्थ नहीं ले सकते, तो हमे अपनेको वशमें करना चाहिए और इस बातका उद्योग करना चाहिए कि हम उस योग्य हो जावें। हमारे पास इतना रुपया हो जाय कि हम उस पदार्थको ले सके। ऐसा करनेसे अवश्य एक दिन हमारी मनोकामना पूर्ण हो जायगी। मान लो, हमारी आमदनी केवल १० रु० मासिककी है जिसमें हमारा बड़ी मुश्किलसे पूरा पडता है। ऐसी दशामें हमको कदापि विवाह न करना चाहिए। जब हम अपना ही निर्वाह इतनी थोड़ी आमदनीमें मुश्किलसे कर पाते है तब अपनी स्त्रीका कैसे कर सकेंगे? फिर थोड़े दिनों बाद यदि बच्चे हो गये, तो क्या करेंगे?

न उनको खिला सकेंगे, न पढ़ा सकेंगे। परिणाम यह होगा कि वे घर घर भीख माँगते फिरेंगे, अन्तमें चोर और डाकू बनेंगे और कुल जाति और देशको कलंकित करेंगे। यदि हम देखते हैं कि हमारा लड़का मूर्ख है, कुछ कमाता धरता नहीं, तो हमारा धर्म है कि हम उसका भी कभी विवाह न करें। अभी तो वह स्वयं हम पर और देश पर भार है, उस दशामें उसकी स्त्री भी भारस्वरूप हो जायगी और उस बेचारीका जीवन बड़ा ही दुःखमय हो जायगा। अतएव सारांश यह है कि जितनी आमदनी हो उससे कम खर्च करना चाहिए और थोड़ा थोड़ा सदैव बचाते रहना चाहिए। जितनी चादर हो उतने पैर फैलाओ। आमदनीके अनुसार खर्च करो। दूसरोंकी रीस करके अथवा रीति-रिवाजोंका खयाल करके एक पैसा भी अधिक खर्च न करो। कोई चीज उधार न लो और पास मौजूद हो उसको सावधानीसे खर्च करो। फिजूल न खोओ।

बारहवाँ अध्याय ।

ऋण (कर्ज) ।

(विद्वानोंके वाक्य।)

हिसाब रक्खे विना जीवन निरर्थक और दु खमय है ।

ऋण बुरी बला है । यह झूठ, नीचता, कुटिलता, चिंता और मायाचारकी जननी है । प्रतिष्ठितसे प्रतिष्ठित व्यक्तिको भी क्षणभरमें अपमानित कर देना इसका एक साधारण काम है ।

"दिवसस्याष्टमे भागे शाकं पचति यो गृहे ।
अनृणी चाप्रवासी च स वारिचर मोदते ॥ "

—महाभारत ।

* * * * *

जब लोग कर्ज लेते हैं तब बेचारे यह नहीं जानते कि हम कर्ज लेकर अपनेको किन किन दुःखों और आपत्तियोंमे डालते है। चाहे किसी कामके लिए कर्ज लिया जाय जबतक वह चुकाया नहीं जाता- चक्कीके पाटकी तरह कर्ज लेनेवालेके गलेमें लटका रहता है। एक सेकंडके लिए भी उसको आराम नहीं लेने देता। रातको सोते समय भी भूतकी तरह उसकी छाती पर सवार रहता है। न कभी वह भर पेट भोजन कर पाता है और न कभी अपने बालबच्चोकी जरूरतोंको पूरा कर सकता है। कर्ज क्या लिया मानों अपनेको बंधनमें डाल लिया और सारे घर-गृहस्थीके सुखको खो दिया।

जिनकी आमदनी अच्छी खासी है वे भी प्रायः कर्जके भारसे वर्षों दबे रहते हैं। न जाने यह कैसा रोग है कि पीछा ही नहीं

और न जाने कैसा भूत है कि चढकर उतरना ही नहीं जानता। क्या तो कोई आगेके लिए बचावे और क्या कोई जान मालका बीमा करावे, इसके मारे चैन तो पडती ही नहीं। सूखा-रूखा खाकर और फटा-पुराना पहन कर जो कुछ बचता है, वह सब इसीकी भरतीमें भरा जाता है।

जिनके यहाँ बड़ी बडी रियासतें और जागीरें है, वे भी प्रायः कर्जके भारसे दुःखी रहते हैं। किसी बुरी आदत अथवा फिजूलखर्चीके कारण जागीरोंको गिरवी रखकर कर्ज लेते हैं। मगर जहाँ एक बार कर्ज लिया कि बस फिर उमर भर उससे छुटकारा नहीं पा सकते। कम होनेके स्थानमें कर्ज उलटा दिनों दिन जियादह होता जाता है और थोड़े ही दीनोंमें जागीरकी हैसियतसे भी बढ जाता है। इसका परिणाम यही होता है कि जागीरें हाथसे चली जाती है और जो कल बड़े अमीर कहलाते थे, वे आज भिखारी बन जाते हैं।

इतिहाससे पता लगता है कि बड़े बड़े आदमी भी कर्जदार रहते हैं। कर्जका वडाईसे घना सम्बन्ध है। ससार वड़े आदमियों पर भरोसा करता है, इसी कारण उन्हें कर्ज मिल जाता है। यही हाल बडी वडी जातियोंका है। उनकी वड़ाईके कारण उन्हें कर्ज देते कोई नहीं डरता। कर्ज किन्हें नहीं मिलता? जो छोटे हैं, जिनपर कोई भरोसा नहीं करता। वे जैसे पैदा होते है वैसे ही मर जाते हैं, उनको कोई जानता भी नहीं। परन्तु कर्जदारोंका नाम सारी दुनियामें फैल जाता है। किताबों और समाचारपत्रोंमें लिखा जाता है। उनके विपयमें तरह तरहके विचार किये जाते हैं। सबकी आँख उनपर लगी रहती है, वे कैसे है, उनका स्वास्थ्य कैसा है, सदा ही ये सवाल होते रहते हैं और

यदि वे कभी विदशमें चले जाते हैं तो सब कोई उनके लौटनेकी बाट देखा करते हैं।

संसारमें कैसी अनौखी दशा है। बेचारे कर्ज देनेवालेकी ही आपत्ति है। हर कोई उसे ही कड़ा और कठोर ठहराता है। कर्ज-दारको सब कोई भला और सीधा कहते है। उसकी दशा पर शोक करते हैं और उससे सहानुभूति रखते हैं। जब कोई कर्जदार कर्ज नहीं चुका सकता और लेनदारका उस पर तकाजा होता है, तब कर्ज-दारसे कोई नहीं कहता कि तूने कर्ज क्यो लिया था, अब जिस तरह हो अदा कर। बेचारे साहूकारको ही सब कहा करते हैं कि इसको कर्ज क्यों दिया था? अब आधा चौथाई जो कुछ मिले उस ही पर संतोष कर। कर्ज देना बुरा है।

चाहे कुछ हो, लोग चाहे जो कहें, पर असली बातको कोई नहीं मेंट सकता। कर्ज लेना बुरा ही नहीं, किन्तु घृणा और नीचताका काम है। कर्जदारके घर पर सदा साहूकारका आदमी और दीवानीका चपरासी समन लिये खड़ा रहता है। ज्योंही कोई उसके दर्वाजेको खटखटाता है, त्योंही उसका चेहरा पीला पड़ जाता है। उसके यार दोस्त अब उसकी तरफ देखते भी नहीं और उसके रिस्तेदार उससे बोलते भी नहीं। उसकी सारी आबरू मिट्टीमें मिल जाती है। उसको बाहर जाते शर्म मालूम होती है और घरमें रहते कोई आराम नहीं मिलता। वह मिजाजका कड़वा और चिड़चिड़ा हो जाता है और जीवनका आनंद खो बैठता है। उसे सदा रुपयेकी जरूरत रहती है, परन्तु पिछला कर्ज न चुकानेके कारण कोई एक पैसा भी नहीं देता। वह सदा झूठे हीले और बहाने किया करता है। किसीको उस पर विश्वास नहीं रहता। वह अपनी स्वाधीनताको नष्ट कर देता है और

उसकी दशा बडी ही शोचनीय हो जाती है। वह सदा यह चाहा करता है कि किसी दूसरेसे कर्ज मिल जाय जिससे पहला कर्ज चुका दूँ। ऐसा करनेसे कुछ दिनोंके लिए जान बच जायगी। परन्तु कब तक? आज बची तो कल खैर नहीं। एक न एक दिन अवश्य घर-बार नीलाम हो जायँगे और खुदको जेलखानेकी सैर करनी पडेगी।

अब सवाल यह है कि जब कर्ज ऐसी बुरी चीज है तब हमें इससे बचनेके लिए क्या करना उचित है और किस तरह हम अपनी स्वाधीनता और प्रतिष्ठाको सुरक्षित रख सकते हैं। इसका केवल एक उपाय है जो हम पिछले अध्यायमें बता चुके हैं, अर्थात् हमें अपने वित्तके अनुसार खर्च करना चाहिए। आमदनीसे एक कौड़ी भी अधिक खर्च करना अनुचित है। परन्तु इसी बातकी हममें कमी है। हम आमदनीकी कुछ परवा नही करते और खर्चका कोई हिसाब नहीं रखते। जितना चाहे उधार लेकर खर्च किये जाते हैं। झूठी नामवरी और दिखलावेके लिए कितना ही रुपया फिजूल कामोंमे बर्बाद कर देते हैं जिनसे कोई भी लाभ नहीं होता। हम अपनी मूर्खतासे समझते हैं कि सज-धजसे रहने और लोगोंको दावतें खिलानेसे नाम होता है। परन्तु एक अँगरेजी कहावत है कि "मूर्ख खिलाया करते हैं और चतुर खाया करते हैं।"

हमें कदापि कोई चीज उधार न लेना चाहिए और दूकानदारोंको भी कोई चीज उधार न देना चाहिए। उधारको जहाँ तक हो, बद करना ही उचित है। हरएक चीजके लिए नकद दाम देना चाहिए। जब दाम न होंगे तब हम खुद ही कोई चीज न लेंगे। उधारमे कुछ ऐसा जादू है कि बिना जरूरतकी चीजे भी ले ली जाती हैं। यह खयाल कि 'कौन दाम नकद देना है, फिर दे देंगे,' हमारी बहुतसी फिजूलख-

चियोंका कारण होता है। हरएक चीजको नकद दाम देकर लेनेसे हम सिर्फ वे ही चीजें खरीद सकेंगे जिनके विना काम चलता ही नहीं। ऐसा करनेसे कभी तकलीफ नहीं हो सकती।

उधार और कर्ज लेनेकी आदत मूर्ख और निर्धन लोगोंमें ही नहीं, उन लोगोंमें भी पाई जाती है जो बड़े विद्वान् और बुद्धिमान कहलाते है। वे दूसरोंको उपदेश देते हैं किंतु स्वयं उससे उलटा करते है। इतिहास ऐसे उदाहरणोंसे भरपूर है। विश्वविख्यात उपदेशक बेकनका नाम कौन नहीं जानता? उसके तत्त्व और सिद्धान्त कौन नही मानता? परन्तु उसकी जीवनीको सुनकर हृदय काँप उठता है। ऐसा विद्वान् शिक्षक और उपदेशक होने पर भी उसने मितव्ययताका अभ्यास नहीं किया। सदा फिजूलखर्चियोंके कारण वह कर्जपर कर्ज लेता गया। कर्ज चुकानेके लिए तथा बढ़े चढ़े खर्चके लिए उसने अंतमें घूँस तक लेना पसंद कर लिया। परन्तु पाप कभी छिपा नहीं रहता। उसका घूँस लेना किसी तरह उसके शत्रुओं पर प्रगट हो गया। उन्होंने तुरन्त उसको दोषी ठहराकर बडा ही लज्जित और अपमानित किया और उसके जीवनको नष्ट-भ्रष्ट कर दिया।

बेचारा बेकन निरा तत्त्ववेत्ता विद्वान् था। हिसाव-किताब और लेन-देनके विषयमें अधिक न जानता था। उससे ऐसी भूल होना कोई अचमेकी वात नहीं। अचभा तो मिस्टर पिटका है। यद्यपि मिस्टर पिटने कठिनसे कठिन आपत्तिके समयमे भी राष्ट्रीय धनकी रक्षा की है और उसका यथेष्ट प्रबंध किया है, परतु वे स्वयं सदा कर्जमें ही फँसे रहते थे। हजारों रुपयेकी आमदनी होते हुए भी वे कर्जसे छुटकारा न पा सके। उनके घरेलू खर्च इतने बढ़े चढ़े थे कि एक लाख

रुपया सालनासे भी काम न चलता था। उनके मरने पर छह लाख ६,००,००० रु० कर्ज उनकी तरफसे जातिने चुकाया।

यही दशा लार्ड मेलविल, फाक्स शेरीडन, बाईरन, कूपर, वेन्स्ट-ग्रीन,पील, मारलो, वेनजानसन, बर्न्स, गोल्डस्मिथ, सर वाल्टर स्काट आदि अनेक बड़े बड़े विद्वानों, लेखको और कवियोंकी थी। एक नहीं दो नहीं, सैकड़ों उदाहरण उनकी असावधानी और फिजूलखर्चीके मिलते हैं। कर्जदारोंने इनके नाकमे दम कर दिया, तिस पर भी इन्हों-ने अपनी आदतोंको न सुधारा और मरते मरते भी फिजूलखर्चीको न छोड़ा। हमारे इस देशमें भी ऐसे उदाहरणोंकी कमी नहीं।

यद्यपि ऐसे लोगोंकी संख्या बहुत ऊंची है, परन्तु मितव्ययी पुरु-षोंका भी सर्वथा अभाव नहीं है। हरएक देश और हरएक कालमें अमितव्ययी पुरुषोंके साथ साथ मितव्ययी भी होते रहे हैं। शेक्सपिय-रने कभी कर्जका नाम भी नहीं लिया। डाक्टर जानसनका जीवन मितव्ययता और दूरदर्शिताका मानों एक स्पष्ट चित्र था। उसने रुपये-के अभावसे आपत्ति पर आपत्ति झेलना स्वीकार किया, बिना मकानके सड़कों पर ही रात बिता देना और भूखा रहना पसद किया, किन्तु कर्ज लेना गवारा न किया। शुरूसे ही गरीबीने उसको दबा लिया था, परन्तु वह उसकी कोई परवा न करता था। उसको लोग क्या कहेंगे, दूसरे कैसे रहते हैं, ऐसी बातोंका उसे कभी स्वप्नमें भी खयाल न होता था। वह अच्छी तरह जानता था कि मनुष्यको कभी अपने वित्तसे बाहर खर्च न करना चाहिए। इन प्रारम्भिक दुःखोंने ही उसके हृदयमें प्रेम और सहानुभूति पैदा कर दी थी। घोर आपत्तिमें भी वह अपनेसे जियादह गरीबोंकी सहायता करना अपना मुख्य धर्म समझता था।

कर्जके बारेमें डाक्टर जानसनने एक वार अपने एक मित्रको लिखा था–" भूल कर भी कभी कर्ज न लो। इसको एक कठिनाई ही मत समझो, किन्तु एक विपत्ति जानो। सदा अपनी आमदनीसे कम खर्च करो। छोटे छोटे कर्ज छोटी छोटी गोलियोंके समान हैं जो चारो तरफसे तुम पर आ रही हैं। तुम कदापि इनसे नहीं बच सकते। कही न कहीं तुम्हारे घाव जरूर हो जायगा। बड़े बड़े कर्ज गोलोंके समान है जो शोर तो बहुत करते है परन्तु हानि नहीं पहुँचाते। पहले तुम्हें चाहिए कि छोटे छोटे कर्जोंको चुका दो। पीछे शांतिके साथ बड़ोको चुकानेकी चिंता करो। यदि तुम शाति और संतोषके साथ रहोगे और कभी आमदनीसे जियादह खर्च न करोगे, तो कभी धोखा न खाओगे।"

प्रत्येक मनुष्यका कर्तव्य है कि वह अपनी आमदनी और खर्चका ठीक ठीक हिसाव रक्खे और महीनेके अन्तमें कुछ न कुछ बचाकर आगेके लिए किसी बेंकमें जमा कर दे। लेखकों और कवियोंको यह खास तौरसे याद रखना जरूरी है। यदि वे अंधाधुध खर्च करेंगे, तो कर्जदार हो जायेंगे। फिर उनका समाज और कालको उलहना देना किसी मतलबका न होगा। जैसा करेंगे, वैसा फल पावेगे। थेकरेने लिखा है कि "जो कोई अपनी आमदनीसे जियादह खर्च करे और उचापतका रुपया न चुकावे, उसे उसी दम जेलखानेमें भेज देना चाहिए–चाहे वह कोई हो। चाहे वकील हो, चाहे लेखक और चाहे कवि।" थेकरेका यह कथन बहुतोंको बुरा मालूम हुआ होगा, परन्तु इसकी सचाईमें तनिक भी सन्देह नहीं है।

लेखकोंको यह समझ कर कि हम समाज और देशका उपकार कर रहे हैं मनमाना खर्च न करना चाहिए। इसमें संदेह नहीं कि

समाज उनका कृतज्ञ है, किंतु यह नहीं हो सकता कि वे सामाजिक अन्याय करते जावें और समाज मौन धारण किये रहे। समाजकी तथा स्वय अपनी खातिर उनके लिए यह बड़ा ही जरूरी है कि वे आपत्तिकालके लिए कुछ जमा करते जावे। देशको और सर्व श्रेष्ठ पुरुषोंको उनकी सहायता अवश्य करनी चाहिए; किंतु सर्वोत्तम यह है कि उन्हें स्वयं अपनी सहायता करनी चाहिए।

तेरहवाँ अध्याय।

धन और दान।

(विद्वानोंके वाक्य।)

संसारमें ऐसे बहुतसे आलसी पुरुष हैं जिनको भीखका एक पैसा भी कमाईके एक रुपयेसे अच्छा लगता है।

यदि तुम्हारे पास धन है, परन्तु तुम उसको अच्छी तरह खर्च करना नहीं जानते, तो वह धन तुम्हारे सिर पर एक बोझा है जो मरते समय ही उतरेगा।

बुरी तरहसे पैदा करके दान देनेकी अपेक्षा न देना ही अच्छा है।

* * * * *

दानी और दयालु होनेके लिए कमखर्च होना जरूरी है। कम खर्च करनेसे अपनेहीको नहीं किंतु दूसरोंको भी बहुत कुछ लाभ पहुँचता है। इसकी ही बदौलत औषधालय, शिक्षालय, अनाथाश्रम और विधवाश्रम आदि सार्वजनिक संस्थाओंकी स्थापना होती है।

यदि रुपया न हो तो दूसरोंकी सहायता करना तो एक तरफ रहा, अपना भी निर्वाह नहीं हो सकता। ऐसी दशामें बेचारे अनाथों अपाहजों और विधवाओंका मरण ही समझना चाहिए। संसारमें कितने ही प्राणी ऐसे हैं जिन्हें एक बार भी भर पेट भोजन नहीं मिलता। जिन्हें रहननेको मकान नही और पहननेको कपड़ा नहीं। ऐसे लोगोकी सहायता करना, भूखोंको आहार दान देना, अन्धे, लूले, लँगड़े, भयभीत पुरुषोंको अभय दान देना, और अज्ञानियोंको ज्ञानदान देना मनु-

ष्यमात्रका धर्म है। जिनके हृदयमें जरा भी प्रेमकी धारा बहती है, जिनको ईश्वरभक्तिमें किंचित् भी अनुराग है, वे कदापि दयालुता और परोपकारतासे मुँह नहीं मोड़ सकते। व्यक्तिकी और समाजकी अपेक्षा प्रत्येक मनुष्यका सर्वोपरि कर्तव्य है कि वह यथाशक्ति दूसरोंकी सहायता करे। समाज अनेक व्यक्तियोंका समूह है। समाज तब तक उन्नतिशील नहीं कहला सकता, जबतक उसका पृथक् पृथक् व्यक्ति उन्नति न कर रहा हो। यदि समाजमें एक भी व्यक्ति निर्धन व असहाय है और समाजका उसकी ओर लक्ष्य नहीं है तो समझना चाहिए कि समाज अभी अवनतिकी दशामें है। समाजोन्नतिके लिए समाजके प्रत्येक सदस्यको अपनी और अपने कुटुम्बियों तथा अपनी जातिके भाइयोंकी उन्नति करना, उनके कार्योंसे सहानुभूति रखना परमावश्यक है।

दूसरोंकी सहायता करनेके लिए यह जरूरी नहीं कि मनुष्यको धनवान् ही होना चाहिए। परोपकारके लिए धन सहायक अवश्य है किंतु आवश्यक नहीं। कितने ही व्यक्ति ऐसे हो गये हैं जिनके पास धनका नाम भी न था, परन्तु परोपकारमें वे लखपती और करोड़पतियोंसे भी बढ़ गये थे। उन्होंने पैसा पास न होते हुए भी वे वे काम किये हैं, जो अटूट लक्ष्मीके धनी भी न कर सके। ऐसे लोगोंकी इतिहासमें कमी नहीं। प्रत्येक युग, प्रत्येक काल और प्रत्येक देशमें ऐसे महात्माओंने जन्म लेकर अपने सदुपदेश तथा बाहुबलसे संसारका उपकार किया है। जहाँ कहीं जितने महात्मा परोपकारी पुरुष हुए, वे प्रायः सब धनहीन थे। उन्होंने धन देकर असहाय पुरुषोंकी ही सहायता नहीं की, किन्तु अपनी कोमल उपदेशभरी वाणीसे उनको वे वे मार्ग बतलाये जिनके द्वारा असंख्यात पुरुषोंने आलसको त्यागकर श्रम साहस और उद्योगकी शरण लेकर स्वावलम्बका पाठ सीखा, तथा अपव्ययी असंयमी पुरुषोंने

अपनी विषयवासनाओंको तिलांजुली देकर आत्मकल्याणके लिए सम्यक् चारित्रको धारण किया। ईसा, गौतम, महावीर आदि महापुरुष इन्हीं महात्माओंमेंसे थे। इसी प्रकार जितने बड़े बड़े तत्त्ववेत्ता, विद्वान्, विज्ञानवारिधि संसारमें हुए, वे सब धनहीन थे, परंतु उन्होने अपने बाहुबलसे सर्वसाधारणके हितार्थ अनेक विद्यालय, पुस्तकालय आदि स्थापित करके तथा पुस्तकें निर्माण करके संसारको अपार लाभ पहुँ-चाया। वाट, न्यूटन, आचार्य हेमचंद्र, कबीर, रामदास, तुकाराम ईश्व-रचंद्र विद्यासागर, सर सैयद अहमद, दयानन्द सरस्वती, गोपाल कृष्ण गोखले आदि इन्हीं महापुरुषोंमेंसे थे। अब भी महात्मा गाधी, मिसेस एनी वेसेन्ट आदि अनेक व्यक्ति विद्यमान् हैं जो अपनी विद्याद्वारा स-मस्त संसारका उपकार कर रहे हैं। कुछ समय पहले यूरुपमें डाक्टर डान नामके एक पुरुष हुए है। वे पहले वड़े ही गरीब थे, परन्तु बादमें उनकी आमदनी कुछ बढ़ गई थी। उन्होंने अपने मनमें विचार किया कि मेरी आमदनी इस लिए नहीं बढ़ी कि मैं इसे फिजूलके कामोंमें खर्च कर दूँ, किंतु परमात्माने इस लिए मेरी आमदनी बढ़ाई है कि मैं इसके द्वारा अपने सहधर्मियों और सहजातियोंका कुछ भला करूँ। तदनुसार वे आमदनीमेंसे खर्चके लिए निकाल कर शेष गरीबोंके लिए खर्च कर डालते थे और खर्च भी इस तरह करते थे कि किसीको मालूम भी न होता था। उनका विचार था कि दूसरेसे कहकर किसीकी सहायता करना, सहायता नहीं किंतु केवल लोगोंमें अपनेको बड़ा कहलवाना है। जब दूसरोंकी सहायता करना हमारा धर्म है, तब यह समझमें नहीं आता कि हम क्यों झूठे नामकी खातिर लोगोंमें अपने तुच्छ कार्योंको प्रकट करके अपने किये हुए पर पानी डालें। ईश्वर उन्हीं लोगोंसे प्रसन्न होता है, जो बिना नामवरीकी इच्छाके कुछ शुभ कार्य करते हैं। इसी

अभिप्रायसे कितने ही कैदियोंको उन्होंने रुपया देकर कैदसे छुड़ाया, कितनोंहीको पढ़ा लिखा कर विद्वान् बनाया और कितने ही अनाथों विधवाओं और अपाहजोंको गुप्तदान देकर उनका पालन पोषण किया। उन्होंने एक नौकर खास इसी मतलबसे रख छोड़ा था कि जहाँ जिस किसीको जरूरत समझी जाय, तुरन्त सहायता दी जाय। एक बार उनका एक मित्र किसी कारणसे निर्धन हो गया। उनको किसी तरह यह बात मालूम हो गई। उन्होंने तुरन्त उसके पास १५०० रु० भेजे। मित्रने लेनेसे इन्कार किया, परन्तु उन्होंने आग्रहपूर्वक कहा कि " मित्रवर, मैं जानता हूँ कि उदरपूर्तिके लिए तुम्हें जरूरत नहीं है; परन्तु मैं इस बातको सहन नहीं कर सकता कि मेरा एक मित्र जो पहले धनी रह चुका है और जिसने अपने धनसे अनेक असहायोंकी सहायता की है निर्धन अवस्थामें रहे। मैं प्रार्थना करता हूँ कि आप इसको सहर्ष स्वीकार कीजिए। "

यही हाल ईश्वरचन्द्र विद्यासागरका था। जहाँ कहीं उन्होंने सुना कि अमुक व्यक्ति ऋणके भारसे दब रहा है--वह ऋण नहीं चुका सकता--कि वे तुरन्त गुप्त रीतिसे उसकी ओरसे रुपया जमा कर दिया करते थे। उन्होंने लाखों रुपया गरीबोंकी सहायतामें खर्च किया है।

देखा जाता है कि हम लोग रुपयेकी प्रशंसा करनेमें बहुत ही अत्युक्ति करते हैं। हम रुपयेको सर्वशक्तिमान् समझते है। हमारा विचार है कि रुपयेकी बराबर संसारमें कोई भी चीज नहीं है। सब कुछ रुपयेहीसे हो सकता है, इसी कारण हरएक कामके लिए रुपया जमा करते है। पापी दुराचारी पुरुषोंके सुधारनेके लिए भी चंदे किये जाते हैं, परंतु चंदोंसे कुछ नहीं हो सकता। बुरे लोगोंको सुधारनेके लिए रुपयेकी जरूरत नहीं है। इसके लिए सदाचार और सच्चरित्रकी जरू-

रत है। धनके द्वारा जातिमे कदापि महान् परिवर्तन नहीं हो सकते। लोगोंको अधर्म, असयम, अदूरदर्शितासे रोकनेके लिए और उनको उत्तम समीचीन उपायोके द्वारा सुख सम्पादन करनेको उत्तेजित करनेके लिए शुद्ध अंतःकरण, निस्वार्थ आत्मसमर्पण और कठिन परिश्रमकी जरूरत है। रुपयेसे निस्सन्देह बहुत कुछ सहायता मिल सकती है, परन्तु रुपया स्वयं कुछ नहीं कर सकता। महात्मा पालने आधे रोम देशमें ईसाई धर्मका प्रचार किया था, तथापि वह स्वय डेरे तम्बू बनाकर अपना निर्वाह करता था। उसने कभी एक पैसा भी चंदेका जमा नहीं किया। दान देनेवाले धनिकोंकी अपेक्षा सत्यपरायण, धर्मनिष्ठ और शुद्धहृदय मनुष्योंकी अधिक अवश्यकता है।

जहाँ देखो, लोग रुपयेको सर्वोत्तम और श्रेष्ठ पदार्थ समझते हैं। कहीं कहीं तो रुपयेको साक्षात् देवी लक्ष्मी कह कर आराध्यदेवके समान पूजते है। भारतवर्षमें तो घर घर दिवालीके दिन लक्ष्मीकी पूजा होती है। इसरायली और यूनानी लोग भी रुपयेकी पूजा करते थे। बच्चेसे लेकर बूढ़ेतक प्रत्येक व्यक्ति रुपयेका नाम सुनते ही मनमें फूला नहीं समाता। रात दिन रुपये पर ही दृष्टि रहती है। रुपया ही धन है। रुपया ही प्रतिष्ठाका कारण है। जिनके पास रुपया है वह अपनेको सब कुछ समझता है। जिसके पास नहीं, वह हरवक्त इसीकी धुनमें रहता है। जहाँ दो आदमी खड़े होते है और कोई सामनेसे गुजरता है, तो यही प्रश्न होता है कि यह कौन है—इसकी क्या आमदनी है? यदि तुम कहो कि यह एक सज्जन धर्मात्मा पुरुष है, तो कोई उसको देखेगा भी नहीं; जाने दो, सैकड़ों फिरा करते हैं। परंतु यदि तुम यह कह दो कि यह बड़ा धनवान् है, इसके यहां लाखों और करोड़ोंकी सम्पत्ति है, तो हरएककी निगाह उसपर पड़ेगी। लोग आगे

बढ़ बढ़ कर उसे देखेंगे। इग्लैंडमें एक समय था, जब धनवान्को अपने सामनेके निकलते हुए देखनेके लिए, सडक पर सैकड़ों आदमी इकट्टे हो जाया करते थे। यही दशा इस देशकी अब तक है। जहाँ लोगोने सुना कि आज अमुक राजा महाराजा निकलेंगे, घंटों पहले पैर जमा कर खड़ा होना शुरू कर देते हैं।

रुपयेका नाम सुनते ही लोगोंके मुँहमें पानी भर आता है। रुपयेके लिए झूठ बोलते, चोरी करते लज्जा नहीं आती तथा जीवनके सारे उद्देश्योंको और स्वयं जीवनको भी अर्पण करनेमें शका नहीं होती। १०० पीछे ९० बल्कि इससे भी जियादह मनुष्य रुपयेकी जोहमें ऐसे बेसुध रहते हैं कि उन्हें संसारमें क्या हो रहा है, इसकी खबर भी नहीं रहती। वे रातदिन अपनी धुनमें लगे रहते हैं। उन्हें क्या मालूम है कि हमारे कितने भाई दाने दानेको तरस रहे हैं और कितने रुपयेके अभावसे अज्ञान अवस्थामें पड़े हुए हैं। उन्हें अपने भोगविलास प्रिय हैं। उनके जीवनका उद्देश खाना पीना मजे उड़ाना ही है। कोई ही ऐसा धनी होगा, जो धनका बोझ सिर पर उठाते हुए भी संयमी और परिश्रमी हो। नहीं तो प्रायः सब ही आलसी असंयमी और भोगविलासप्रिय होते हैं।

एक अनुभवी विद्वान्का कथन है कि यदि धनके कारण मनुष्य मनुष्यको न भूले, तो संसारसे आधा पाप एकदम उठ जावे। यदि स्वामी सेवकसे सहानुभूति रक्खे और सेवक स्वामीसे प्यार करे, तो हमको कदापि शिकायत करनेका मौका न मिले। धनिकोंका काम है कि अपने नौकरोंकी भलाईके लिए उनसे जो कुछ हो सके उसमें कदापि ढील न डालें। अपनी बढीचढ़ी आदमनीमेंसे कुछ भाग सर्वसाधारण और विशेष कर अपने यहाँ काम करनेवालोंके हितार्थ

विद्यालय, पुस्तकालय, औषधालय स्थापित करनेमे, अच्छे मकान, अच्छी सड़के बनानेमें व्यय करें। ऐसा करनेसे न केवल वे, किन्तु उनके पुत्र पौत्र भी जन्म जन्मान्तरो तक उनका आभार मानेंगे। साथमे समाज और देशका भी कल्याण होगा।

चाहे मनुष्यके पास कितना ही अधिक रुपया हो जाय, परन्तु उसकी तृप्ति नहीं होती। वह रात दिन अधिकाधिक जोड़नेहीकी फिक्रमें रहता है। तन तोड़कर जिस तरह होता है पैसा पैसा जोड़ता है और पैसे पैसेके लिए तुच्छसे तुच्छ काम करते हुए भी नहीं शरमाता। चाहे उसके पास इतना रुपया हो जाय कि उसको वह अपने जीवनमे खर्च भी न कर सके, तो भी वह और जियादह पैदा करनेके विचारको नही छोड़ता। जान पड़ता है कि इसका कारण शिक्षाका अभाव है। धनिकोंको उच्चशिक्षा नहीं मिलती। वे धनके नशेमे न स्वयं पढ़ते हैं और न अपनी सन्तानको पढ़ाते है। न उन्हे किसी पुस्तकसे शौक होता है और न किसी साहित्यसे प्रेम होता है। उनको केवल रुपयेकी लगन होती है। उसी पर वे आसक्त होते है। रुपया ही उनका धर्म और रुपया ही उनका आराध्य देव होता है।

उनके हृदयमें रुपयेका कुछ ऐसा महत्त्व होता है कि विद्या, धर्म नीति आदि उनकी दृष्टिमें सब कुछ तुच्छ होते हैं। इसी कारणसे वे अपने बालकोंको शिक्षा दिलाना फिजूल समझते है। देखा जाता है कि अमीरोंकी औलाद प्रायः फिजूलखर्च होती है। बाप जैसे कजूसीसे रुपया जोड़ता है, बेटा वैसी ही फिजूलखर्चीसे उसे उड़ा देता है। किसीने सच कहा है कि रुपयेके पर होते है। ऐसे हजारो उदाहरण मौजूद है कि पहली पीढीने रुपया कमा कर जमा किया, दूसरीने फिजूल बर्बाद किया और तीसरी फिर ज्योकी त्यो हो गई।

दादाने कमाया, बापने उड़ाया और बेटेने भीख और चोरी पर गुजर किया। व्यापारियोका तो यह हाल नित्य ही देखनेमे आता है। जो कल बडे कोठी कारखानेवाले बन रहे थे, जिनके यहाँ लाखोंका लेन-देन हो रहा था, कल शामको उनका दिवाला निकल गया और आज वे दीवालिया और कंगाल हो गये।

बुढापेमें आनन्दसे जीवन वितानेके लिए यह जरूरी है कि जीवनीमें समय और धनका सदुपयोग किया जाय। प्रत्येक युवकका-कर्तव्य है कि वह ज्ञान, विज्ञान, कला कौशलमें निपुणता प्राप्त करनेका उद्योग करे। हमारे जीवनमें कितना ही समय प्रतिदिन व्यर्थ नष्ट हो जाता है। यदि हम उसे इतिहासादिके पाठमें व्यय करें अथवा किसी नवीन आविष्कारके करनेमें लगाया करें, तो संसारका बहुत कुछ उपकार हो सकता है। रुपया पैदा करनेकी इच्छा जवानीमें ही पूर्ण हो जानी चाहिए। बुढापेम भी रुपया पैदा करते रहना और उसके लिए सर्वप्रकारके सुखोको तिलाञ्जुली दिये रहना मानों पशुवत् जीवन व्यतीत करना है। जिस तरह गधे बैल वगैरह पशु मरते समय तक लादे जाते हैं, उसी तरह उस मनुष्यकी दशा है जो मरते मरते भी रुपयेकी लालसा नहीं छोड़ता। जवानी कड़ा परिश्रम करके रुपया कमानेके लिए है, परन्तु बुढापा शान्तिके साथ एकांतमें किसी ऐसे विषय पर विचार करनेके लिए है जिससे संसारका उपकार हो और आत्माका कल्याण हो। यदि कोई अमीर आदमी बुढ़ापेमें भी रुपयेकी लालसा नहीं छोड़ता, तो हम कह सकते हैं कि उसको कदापि सुख नहीं मिल सकता। उसका जीवन दुःखमय जीवन हो जाता है। वह रात दिन चक्कीकी तरह पिसता रहता है। सम्भव है कि उसका धन प्रतिदिन बढ़ता जाय, परन्तु ऐसे धनसे क्या लाभ! वह

उस धनको न तो खा सकता है और न खर्च कर सकता है। उसका धन लाभदायक होनेके स्थानमें उलटा उसके लिए चिन्ता और आपत्तिका कारण हो जाता है। सचमुच ही वह मनुष्य लालचका गुलाम हो जाता है। लालचके वश नीचसे नीच कार्य करता हुआ भी नहीं लजाता। सब कोई उसे घृणाकी दृष्टिसे देखते है और वह स्वयं भी अपनी नीच अवस्थाका अनुभव करता है।

कहते है कि एक अमीर आदमीने मरनेसे कुछ दिन पहले बैंकसे कुछ रुपये और अशर्फियाँ मँगाई। जब वह मरने लगा, तब उसने अपने हाथ उन अशर्फियोसे भर लिये। उसके प्राण निकल रहे थे, परन्तु उसके हाथोंसे रुपये न छूटते थे। वह बेहोशीकी हालतमें भी रुपयोंको गिनता था और एक एकको चूमता था। वह मर गया, परन्तु रुपये उसके हाथमें ही रहे। एक दूसरे महाशय मरते मरते यही कहते रहे कि " मेरा रुपया मेरे साथ जायगा। मैं अपने रुपयेका अधिकारी हूँ। मुझसे मेरे रुपयेके विषयमें कोई कुछ नहीं पूछ सकता। "

महमूद गजनवी जिसने हिंदुस्तान पर १८ बार चढ़ाई की और जो हर बार यहेंकि नगरों और मंदिरोंसे अतुल्य लक्ष्मी लूटकर ले गया उसके विषयमें प्रसिद्ध है कि उसने अपनी तमाम जिंदगी रुपया पैदा करनेमें ही व्यतीत की। मरते समय उसे यह खयाल हुआ कि यह रुपया जिसे मैंने इतनी मार धाड़ और जुलमसे पदा किया, जिसके लिए मैंने अपने धर्म कर्म सबको नष्ट कर दिया, शोक, यहीं छोड़कर जाता हूँ। हाय! मुझे क्या मालूम था कि एक दिन मेरा इससे वियोग हो जायगा। मैं समझता था कि मैं सदा ही जीवित रहूँगा और यह मेरा धन भी सदा मेरे साथ रहेगा। इसी कारण येनकेन प्रकारेण जिस तरह हुआ मैंने

रुपया पैदा किया, परन्तु अव यह ज्ञात हुआ कि यह धन, यह सम्पदा विनश्वर है और जीवनका उद्देश्य रुपया पैदा करना नहीं है।

धन उपयोगी अवश्य है परन्तु यह खयाल कि धन प्रतिष्ठाका कारण है, मिथ्या है। मूर्ख और गँवार लोग ही धनकी प्रशंसा किया करते हैं। विद्वान् विद्याके सामने धनको तुच्छ समझते हैं। कितने ही लखपती धनाढ्य ऐसे हैं जिन्हें कोई जानता भी नहीं और भूल कर भी पूछता नहीं। ससारमें प्रतिष्ठा उसीकी होती है, जिससे संसारका कुछ भला होता हो। जिनसे कुछ भला नहीं होता, चाहे वे कोट्याधीश ही क्यों न हों, न होनेके वरावर है। इस विषयमें इतिहास हमारे कथनका साक्षी है। कहीं भी आजतक किसी निरे धनवान्का कोई स्मारक चिह्न नहीं वनाया गया। विद्वानोंके, परोपकारी राजाओंके, देशहितैषियों और जातिनेताओंके सर्वत्र ही चिह्न, चरित्र और स्मारक मिलते हैं, परन्तु निरे धनवान्का कहीं कोई चिह्न ढूँढ़े भी न मिलेगा। किसीने सच कहा है कि यश कहीं वाजारमें नहीं विकता। यह केवल उत्तम कार्योंके सम्पादनसे प्राप्त होता है।

धन और सुखका एक दूसरेसे कोई सम्बन्ध नहीं। कभी कभी तो धन दुःख और आपत्तिका कारण होता है और सुख निर्धनतामें ही देखनेमें आता है। महापुरुषोंके जीवनचरित पढनेसे माल्म होता है कि सवसे जियादह सुख उनको उस समय मिला, जव वे निर्धनतासे धीरता और वीरताके साथ युद्ध कर रहे थे। उसी समय उन्होंने दूसरोंके हितार्थ अपने स्वार्थका त्याग किया, भावीमें स्वतंत्रता प्राप्त करनेके लिए मितव्ययताका अभ्यास किया, अपने मन और हृदयको विषयवासनाओंसे रहितकरके पवित्र किया और ज्ञान विज्ञानके द्वारा अपना तथा देशका उपकार किया। एक विद्वान् लिखते हैं, कि "मैं अपनी

युवावस्थाको कभी नहीं भूल सकता। उस समयका स्मरण होते ही मैं अंगमें फूला नहीं समाता, जब मेरे पास एक पैसा भी न था और मैं एक दानशालामें रहकर पढा करता था।"

धनी और निर्धन दोनोंकी दशा एक सी नहीं है। दोनोंमें बड़ा अंतर है। धनीको धनी होनेके कारण कितना ही रुपया निर्धनसे जियादह खर्च करना पड़ता है। हर एककी निगाह उस पर रहती है—हर कोई उसे ठगना चाहता है। उसे स्वयं अपनी स्थिति रखनेके लिए अधिक खर्च करना होता है; परन्तु उसे अपने धनकी रक्षाकी सदा चिन्ता रहती है। चोर वगैरहका सदा भय रहता है। इसी चिंतामें उसे रातको नींद नहीं आती, रात-दिन जागते ही वीतते है। उसका मन सदा इसी झंझटमें परेशान रहता है।

देखा जाता है कि प्रायः धनिक पुरुष तरह तरहके रोगोंमे ग्रसित रहते हैं। मोटापा और अजीर्ण तो कभी उनका पीछा ही नहीं छोड़ते। वे रात दिन गद्दे-तकिये लगाये पड़े रहते हैं, देरमें पचनेवाले वढ़िया वढ़िया खाने खाते हैं और श्रम कुछ भी नहीं करते। इसी कारण सदा पेटकी शिकायत किया करते हैं। श्रम और पाचनशक्तिका गहरा सम्बन्ध है। (श्रमसे पत्थर भी हजम हो जाता है, परन्तु) निठल्ले एक जगह पड़े रहनेसे (और शरीरसे कुछ भी काम न लेनेसे हलकीसे हलकी चीज भी हजम नहीं होती।) एक विद्वान्का कथन है कि "प्रकृतिके नियमोंमें जरा भी रिआयत नहीं होती। उसका व्यवहार सबके साथ एकसा होता है। यदि धनी पुरुषको धनद्वारा सुख मिलता है तो अजीर्णके कारण कष्ट भी उसे सहना पड़ता है और यदि निर्धन पुरुष निर्धनताके कारण कष्ट सहता है तो हाजमें और नीरोगताके कारण आराम भी उसे ही मिलता है। संसारमें ऐसा एक भी पुरुष नहीं जिसको

सब तरहसे सुख ही सुख हो। न कोई ऐसा ही पुरुष है, जिसे दुःख ही दुःख हो।"

बहुतसे आदमी दूसरेके धनको देखकर जला करते हैं, पर यह उनकी नीचता है। धन कोई आसान चीज नहीं। इसका प्राप्त करना कठिन काम है। इसके लिए अनेक दुःख और कष्ट उठाने पड़ते हैं। जिन्होंने धन कमाया है उन्हें बड़ी बड़ी तकलीफें उठानी पड़ी हैं। पग पग पर आपत्तियोंका सामना करना पड़ा है। अनेक बार इंद्रियोंको दमन करना और इच्छाओंको वशमें रखना पड़ा है। मोटा खाना, मोटा पहनना, और पैदल चलना पड़ा है। ऐसी ऐसी अनेक आपत्ति-योंको सह कर उन्होंने धन कमाया है। परन्तु देखा गया है कि उन्होंने तो इतने कष्ट सहकर कमाया, पर उनकी औलादने उसे इने-गिने दि-नोंमें ही मटियामेट कर दिया।

अनेक व्यक्ति निर्धनताको बहुत बुरा समझते हैं; परंतु यह भी उनकी भूल है। निर्धन होना पाप नहीं। निर्धनतामें कोई निन्दा या अपमान भी नहीं। बल्कि बहुतोंने तो निर्धनताकी प्रशंसा तक की है। जो मनुष्य कोई पापकार्य नहीं करता और रुपयेके लोभके वशमें आकर आत्मसम्मानको नष्ट नहीं करता, वह निर्धन होते हुए भी महान् प्रति-ष्ठित है। वह पुरुष निर्धन नहीं कहा जाता, जो अपना खर्च चा-लाकर कुछ बचा सकता है और हरएक चीजको नकद दामोंसे खरी-दता है। वह उस आलसी धनी से जियादह सुखी है, जो सदा मोदी और दर्जीका कर्जदार रहता है। एक विद्वान्‌का कथन है कि "वह आदमी गरीब नहीं जिसके पास कुछ नहीं; किन्तु वह आदमी ग-रीब है जिसके पास कुछ काम नहीं, या जो, कुछ कर नहीं सकता। जो आदमी काम करनेके योग्य है और काम करता है, वह उससे

कहीं अच्छा है जिसके पास हजारों रुपये है परन्तु कुछ काम करनेको नहीं है।"

निर्धनतासे मनुष्यकी बुद्धि बढ़ती है। जितने बड़े बड़े पुरुष हुए उनमें बहुतसे शुरूमें निर्धन थे। निर्धनतासे आचरण सुधरते हैं और चरित्र गठित होता है। साहसी आदमियोंको कठिन काम ही प्रिय होते है। इतिहास इस बातका साक्षी है कि जितने परोपकारी दयालु और सत्यवक्ता पुरुषोत्तम हुए हैं, वे प्रायः निर्धन थे। एक धर्मोपदेशकने एक बार कहा था कि "ईश्वरने निर्धनताको पैदा किया है, परंतु दीनताको पैदा नहीं किया। इन दोनोंमें बड़ा अंतर है। निर्धनता आदरणीय और दीनता घृणित है। निर्धनतासे मानहानि नहीं होती, किन्तु दीनतासे मानहानि होती है।"

संसारमें गरीब ही सबसे जियादह सुखी हैं। धनवान् रातदिन चिन्ताओंमें फँसा रहता है। गरीबको अपनी थोड़ीसी आमदनी पर संतोष होता है और उसीके अनुसार वह खर्च करता है; परन्तु अमीरको कभी संतोष ही नहीं होता। वह धनका अनुचर बना रहता है। धनके कारण वह अभिमानके शिखर पर चढ़ा रहता है और धनके लिए झूठ भी बोल देता है। एक विद्वान्का कथन है कि "संतोषी आदमीका एक रुपया असंतोषीके हजारसे कहीं अच्छा है।"

अब प्रश्न यह है कि दानका धनसे क्या सम्बन्ध है और दानमें धन कहाँतक उपयोगी हो सकता है? आज कल जिधर देखो उधर दानकी ही चर्चा है। हर कोई अपने उपदेशमें किसी न किसी दानशालाके लिए ही अपील किया करता है। जहाँ देखो वहाँ भिखारियोंका झुंड दीख पड़ता है। यद्यपि प्रतिदिन हजारों लाखोंके चन्दे होते है, तथापि भिखारियोंकी संख्यामें कोई कमी नजर नहीं आती—दिन

दिन बढती ही होती जाती है। अबसे दस वर्ष पहले जितने भिखारी थे अब उनसे दुगने तिगुने हो गये हैं। इसका मूल कारण यदि विचार कर देखा जाय तो यह मालूम होगा कि हमारे देशमें जो लाखों रुपया सदावर्त आदि कामोंमें भूखे नगोंको दिया जाता है, वह ही भूखोंकी सख्या बढानेवाला है। जबतक सडक पर फिरनेवाले और पैसा माँगनेवालोंको पैसे मिलते रहेंगे और सदावर्तमें वे-पूछ भोजन मिलता रहेगा, इनकी संख्या कदापि कम न होगी। इन पर जो रुपया खर्च किया जाता है वह कदापि दान नही हो सकता—वह कु-दान है। इससे पुण्य नहीं होता, उलटा पाप बढता है। लोगोको श्रम, संयम और साहससे घृणा होती है और आलस और असंयमसे प्रेम होता जाता है।

इस देशमे भीख माँगना एक पेशा हो गया है। यहाँ भिखमंगोंकी संख्या ५२ लाखसे भी अधिक है। आठ आठ नौ नौ वर्षके बच्चे भी दूसरोंकी देखादेखी भीख माँगने लगते हैं। धूर्त बाबा लोग उनके कानोंमें मुदरे डालकर तथा उन्हें भगवें वस्त्र पहिनाकर जन्म पर्यंतके लिए भिखारी बना देते है। यदि ये लोग कुछ काम करते, तो इनसे ससारको कितना लाभ पहुँचता? परन्तु जब इनको बिना मेहनत किये और बिना पढे लिखे ही रुपया मिल जाता है, तब फिर क्या जरूरत है कि मेहनत करें। इनकी देखादेखी बहुतसे मेहनती लोग भी मेहनतको छोड देते हैं और इन्हींका पेशा करने लगते हैं। मेहनती दिनभरमें कहीं दो चार आने ही कमा पाता है, परन्तु यदि इनका दाव लग जाय तो ये कभी कभी रुपया रुपया रोज भी कमा लेते हैं।

ये भिखमंगे दो तरहके होते है। कुछ तो ऐसे होते हैं जो अपने रुपयेको जोड़ते जाते हैं, कौड़ी भी खर्च नहीं करते। यहाँ तक कि कई कई दिनके फाके तक कर लेते हैं, पर पैसा खर्च नहीं करते।

इनको रुपयेसे एक प्रकारका तीव्र मोह होता है। ऐसे कितने ही भिखारियोंके पास मरने पर बड़ी बड़ी रकमें निकली हैं। कुछ भिखारी ऐसे होते हैं कि वे दिनभरमें जो कुछ मॉग कर कमाते हैं, रातको सबका सब फिजूल उड़ा देते हैं। खोज करनेवालोंने पता लगाया है कि ये लोग शराबी और विषयी होते है। ये भीखके पैसेसे ऐसे कुकर्म करते हैं जिनको कहते हुए लज्जा आती है। दुनिया भरके अवगुण और विषय इनके अदर मौजूद हैं। दिनमे तो ये भेड़की भोलीभाली गरीब शकल बनाये रहते हैं, परन्तु रातको भेड़ियेका रूप धारण कर लेते हैं। दिनमें फटे पुराने चीथड़े लपेटे रहते हैं, परंतु रातको नवाब बन जाते है। ऐसे ही लोगोंके कारण पाप और दुराचार दिन दिन बढते हैं। हिंसा झूठ चोरी कुशीलके ये ही नेता और उत्तेजक होते हैं। इन बहुरूपियोंने संसारको खूब ही ठग रक्खा है।

यदि विचार कर देखा जाय, तो इनके कारण हम ही लोग हैं। यदि हम इनको पैसा न दें, तो ये कुछ नहीं कर सकते। हमारा यह खयाल रहता है कि ये भूखे है। इनके देनेमें बड़ा पुण्य होगा। आहार दानकी बराबर कोई दान नही। इसी विचारसे हम इनको कुछ न कुछ दिये विना नहीं रहते। परन्तु यह हमारी भूल है। इनके देनेमें कोई पुण्य नहीं होता, उलटा पाप होता है। इनको देना दान नहीं, किन्तु कुदान है। ये दानके पात्र नहीं; किन्तु कुपात्र है। कुपात्रोंको देनेसे कई हानियाँ होती है—एक तो फिजूलखर्ची, दूसरे लोगोंको कामसे हठाकर आलसी बनाना, तीसरे पापकार्य और दुराचारका प्रचार कराना। शास्त्रकारोंने जो दानका उपदेश दिया है, उसका यह अभिप्राय है कि आहारदान उन लोगोंको दिया जाय जो वास्तवमें भूखे हैं। अर्थात् जो ऐसे रोगी अपाहिज और निर्बल हैं कि जिनसे कुछ काम

नहीं हो सकता। ऐसे आदमी बहुत ही कम निकलेंगे और उनको भरपेट भोजन करानेमें अथवा उनकी औषध आदिका प्रबन्ध करनेमें बहुत ही कम खर्च होगा। उनके लिए स्थान स्थान पर अस्पताल और औषधालय बने हुए हैं, जहाँ उनको खाना कपड़ा दिया जाता है और बिना कुछ लिये उनका इलाज किया जाता है। इग्लैंड आदि देशोंमें कोई बाजारमें अथवा सड़कपर भीख नहीं माँग सकता। वहाँ पर खैरातखाने और गरीबोंके लिए घर बने हुए है। जो वास्तवमें गरीब होते हैं, जो स्वयं अपने हाथसे कमा नहीं सकते वे इन घरोंमें भेज दिये जाते हैं और वहाँ उन्हें खाना कपड़ा दिया जाता है। भारतमें भी इनकी आवश्यकता है। भारतमें एक और बड़ी खराबी है और वह यह कि यहाँ धर्मके नाम पर उन सडे मुसंडोंको खिलाया जाता है कि जो हर तरहसे सुखी हैं, जिन्हें दूसरोंकी सहायताकी जरा भी जरूरत नहीं है। हमें चाहिए कि ऐसोंको खिलाना छोड़कर वास्तवमें गरीबोंको खिलावें।

आहारदानके सिवाय आजकल सबसे उत्तम दान विद्यादान है। विद्यासे मनुष्यको अपने कर्तव्य और अधिकार मालूम होते हैं। क्या हेय है और क्या उपादेय है, इसका ज्ञान विद्यासे ही होता है। विद्यासे ही मनुष्य सभ्य और प्रतिष्ठित कहलाता है और विद्यासे ही वह अपने आत्मगौरवको सुरक्षित रख सकता है। ऐसी विद्याका प्रकाश करना और जिस तरह हो सके उसका सर्व साधारणमें प्रचार करना, धनिकोंका कर्तव्य है। विद्यावृद्धिके लिए स्कूल पाठशालायें खोलना, वाचनालय और पुस्तकालय स्थापित करना, उत्तमोत्तम पुस्तकें, मासिकपत्रों और समाचारपत्रोंका निकालना सर्वोत्तम दान है। यदि प्रत्येक मनुष्य एक वार एक पैसा भी देवे तो ३० करोट भारतवासियोंसे ५० लाख रुपया एकदम एक मिनिटमें जमा हो जावें। किसी

भिखारीको शराब और भंगके लिए पैसा देनेके स्थानमें यदि विद्याके लिए पैसा दिया जाय, तो कितना उपकार हो सकता है?

आज कल चारों ओर अज्ञानान्धकार फैल रहा है। इसके कारण इस देशमें अनेक हानिकर प्रथाओंने अधिकार जमा रक्खा है। इस अज्ञानको दूर करनेके लिए प्रत्येक मनुष्यका कर्तव्य है कि अपनी आमदनीमेंसे कुछ भाग दानके नामसे निकालकर विद्याप्रचारमें व्यय करे। धनिकोंको इस ओर विशेष लक्ष्य देना चाहिए। उन्हें अपनी लक्ष्मीको इस कार्यमें लगाकर दानके लिए यशका भागी बनना उचित है। इसके समान संसारमें कोई पुण्यकार्य नहीं। इतना यश और कीर्ति भी किसी दूसरे कार्यमें नहीं। जिन लोगोंने अपने रुपयेको ऐसे कार्योंमें लगाया, चाहे आज उनका शरीर इस संसारमें विद्यमान न हो, परन्तु उनका नाम इतिहासमें अजर अमर है। बम्बईके स्वर्गवासी सेठ रायचन्द्र प्रेमचन्द्रका नाम सर्वत्र विख्यात है। जबतक कलकत्ता विश्वविद्यालयका अस्तित्व है, तबतक उनका नाम सूर्यके समान प्रकाशित रहेगा। जबतक मोहमडन कालेज अलीगढ़ और मुसलमान जातिका अस्तित्व है, तबतक सर सैयद अहमदका नाम इतिहासके पृष्ठोंमें सुनहरे अक्षरोंमें लिखा रहेगा। जगत्प्रसिद्ध धनी कारनेगीका नाम क्यों इतना मशहूर है? इसी कारणसे कि उसने अपनी अतुल्य लक्ष्मीको जहाँ तहाँ विद्याप्रचारमें व्यय किया। इसी प्रकार जिन्होंने अपने रुपयेको विद्याके कार्योंमें लगाया, वे महान् पुण्य और यशके भागी हुए।

भारतवर्षमें विद्याकी बड़ी जरूरत है। स्वयं हमारे महाराजाधिराज राजराजेश्वर जार्ज पंचमने भी यही समझकर शिक्षार्थ अतुल्य दान दिया है। महाराज बड़ोदाने विद्याप्रचारमें करोड़ों रुपया खर्च किया है। अब भारतीय राजा महाराजाओं और धनिकोंका काम है कि देशमें मुफ्त शिक्षाका

प्रचार करें। शिक्षार्थ दान देकर महाराजका अनुकरण करें। असमर्थ दीन छात्रोंको छात्रवृत्तियाँ देकर पढाया जाय, उनके हितार्थ छात्रालय, पुस्तकालय, औषधालय, और व्यायामशालायें स्थापित की जायँ। सर्वसाधारणका कर्तव्य है कि ऐसे भिखारियोंको जो अपने हाथसे कमा सकते हैं एक पैसा भी न दें, किंतु उनको यही उपदेश दें कि मेहनत करके कमाओ। इसी कारण सरकार दुर्भिक्षादिके अवसर पर लोगोंके लिए कोई काम खोल दिया करती है। यदि इन लोगोंको काममें न लगाया जाय, तो इन सबकी भिक्षावृत्ति हो जाय। जो लोग वास्तवमें अपाहज है और अपने हाथसे कमानेको असमर्थ हैं, उनके लिए ऐसे अपाहजखाने बनाये जायँ जहाँ उनको भरपेट भोजन मिले। सदाव्रतमें हरकोई आकर ले जाता है, परन्तु अपाहजखानोंमें केवल उन्हींको मिल सकेगा जो वास्तवमें पात्र है। अनाथों, और विधवाओंके लिए ऐसे अनाथाश्रम और विधवाश्रम खोलने चाहिए, जहाँ पर उन्हें सर्व प्रकारकी शिक्षा दी जाय। पश्चिमी देशोंमें भिखारी लोग सड़कों पर नहीं माँगने पाते। वहाँ अपाहजखाने और अनाथालय बने हुए हैं। वहाँके अनाथालयोंके लड़के बड़े बड़े विद्वान् होकर निकलते हैं। इस देशमें भी ऐसे ही कार्योंमें दान देनेकी जरूरत है।

इससे यह न समझ लेना चाहिए कि जितना रुपया भारतवासी वर्तमानमें दानके नामसे खर्च कर रहे हैं, उससे अधिक रुपया खर्च करना पड़ेगा। नहीं, कदापि नहीं। आजकाल लाखों और करोड़ों रुपया आलसी अकर्मण्य लोगोंको—जो सर्वथा अपात्र हैं—दानके नामसे दिया जाता है। जो लोग श्रम करके कमा सकते हैं उन्हें कदापि दान न देना चाहिए, इस सिद्धातको सामने रखकर यदि प्रवृत्ति की जाय तो वह सब रुपया बच सकता है और सुपात्रोंके हितार्थ उत्तम कार्योंमें व्यय हो सकता है।

चौदहवाँ अध्याय ।

नीरोग घर ।

(विद्वानोंके वाक्य ।)

सभ्यताका सर्वोत्तम साक्षी वह घर है, जिसमें हम रहते हैं ।

स्वच्छता स्वास्थ्यका मूल है अर्थात् सफाई तन्दुरुस्तीकी जड़ है ।

दुर्गंध और मैलेपनसे सद्गुण कोसों दूर भागते हैं ।

धर्मार्थकाममोक्षाणां शरीरं साधनं परम् ।

*　*　*　*　*

स्वास्थ्यको लोग धन कहा करते हैं। उर्दूमें भी कहावत है कि "तन्दुरुस्ती हजार न्यामत है।" वास्तवमें स्वास्थ्यके विना सारी सम्पत्ति व्यर्थ है । हरएक आदमी—चाहे वह मस्तकसे काम करता हो चाहे हाथ पाँवसे—स्वास्थ्यको एक बहुमूल्य पदार्थ समझता है । निस्संदेह स्वास्थ्यके बिना जीवन निष्फल और भारस्वरूप है । प्रकृतिने हमारे शरीरको कुछ इस तरहसे बनाया है कि यदि किसी अंग या उपांगमे जरा भी तकलीफ हो, तो हमको कभी सुख नहीं मिल सकता । सुख ही जीवनका मूल अभीष्ट है ।

सुख उसी समय मिल सकता है, जब हमारी सारी इन्द्रियाँ और सारे अंग नीरोग अवस्थामे हों । यद्यपि केवल शारीरिक सुख ही जीवनका उद्देश्य नहीं है, किन्तु यह बात अवश्य है कि शारीरिक सुख अर्थात् स्वास्थ्य पर ही जीवन निर्भर है । जितना जिसका स्वास्थ्य अच्छा है उतना ही जियादा वह जीता है और जितना जिसका

स्वास्थ्य खराब है उतना ही जल्द वह मर जाता है। दूसरे शब्दोंमें, मनुष्योंकी शारीरिक सुखकी बढ़तीसे आयु बढती है और घटतीसे आयु घटती है।

सुख स्वास्थ्यका सूचक है और दुःख मौतका हलकारा है। परन्तु याद रहे कि दुःख बिलकुल बुरी चीज नहीं है। यह एक प्रकारसे हमारा बडा हितैषी है। यदि हमको कोई शारीरिक दुःख अथवा कष्ट होता है, तो हम तुरन्त जान जाते हैं कि हमने अवश्य किसी नियमका उल्लंघन किया है और किसी प्राकृतिक सिद्धान्तकी अवज्ञा की है। रोग क्या है? एक प्रकारसे हमारा निरीक्षक है, जो सदा हमारी अवस्थाकी जाँच करता रहता है। जहाँ हमने कोई गड़बड़ की, जरा भी असावधानी की, तुरन्त आकर हमें घेर लेता है और जोर जोरसे चिल्लाकर कहता है कि "यदि तुम सुख चाहते हो, तो अपनी अवस्थाको ठीक करो। प्रकृति माताकी शरणमें आओ, उसकी आज्ञाओं और शिक्षाओंका पालन करो।" इससे मालूम होता है कि दुःख और रोग भी एक अपेक्षासे स्वास्थ्यके लिए उपकारी और हितकर हैं।

अतएव शारीरिक सुख अथवा स्वास्थ्यके लिए यह जरूरी है कि प्रकृतिके नियमोंका पूरी तरहसे पालन किया जाय। अब प्रश्न यह है कि वे नियम कौनसे हैं? उनके जाननेके लिए प्रकृतिने हमको विवेक और बुद्धि दी है। यदि हम इनको काममें न लावें और अधाधुधीसे रहें, तो परिणाम यह होगा कि हमको बीमार पडते देर न लगेगी। प्रकृति हमारी जरासी भी असावधानीको सहन नहीं कर सकती। यदि राज्यका कोई अपराध हमसे हो जाय, तो शायद हमको क्षमा भी मिल जाय; परन्तु प्रकृतिके दर्बारमें माफीका नाम नहीं। लाख चिल्लाओ, कोई सुननेवाला नहीं। कोई भी अपराध बिना दडके खाली नहीं जाता।

कुसूर करते देर लगती है, परन्तु सजा मिलते देर नहीं लगती। पाठकोंको यह पढ़कर आश्चर्य होगा, परन्तु इसमें बाल बराबर भी झूठ नहीं है। प्रतिदिन हम इसे अपनी आँखोंसे देखते हैं। जहाँ किसी आलसी निरुद्योगी पुरुषने जरा अधिक खा लिया कि कब्ज और मन्दाग्निरोग उसे तत्काल दबा लेते हैं। कोई चिकनी चीज खाकर पानी पीलो, तुरन्त खाँसी हो जायगी। एक रात भी ओसमें सो जाओ तमाम बदनमें पीड़ा होने लगेगी। इसी तरह और अनेक रोग हो जाते हैं और इनकी बदौलत एक दिन मरना पड़ता है।

जिस तरह स्वास्थ्यसम्बन्धी नियमोंका पालन न करनेसे हमारे शरीरको दुःख पहुँचता है, उसी तरह हमारी सोसायटी या समाजको भी हानि पहुँचती है। प्लेग, हैजा वगैरह महामारियाँ प्रायः उन्हीं घिचपिच मोहल्लों और गलियोंमें शुरू होती हैं, जो गन्दी और घिनावनी होती हैं। जहाँ न कभी धूप पहुँच पाती है और न साफ हवा। ऐसा बहुत काम सुननेमें आया होगा कि अमुक शहरमें प्लेग पहले उस मोहल्लेमें हुई, जहाँ अँगरेज लोग रहा करते हैं। जहाँ कहीं देखा और सुना होगा, पहले उन्ही मोहल्लेमें हुई, जहा कसाई, चमार वगैरह गन्दा काम करनेवाली जातियाँ रहती है, अथवा जो इतने तंग और अँधेरे है कि वहाँ धूप और हवाका प्रवेश भी नहीं होने पाता। इन बीमारियोंसे जितने आदमी मरते हैं, उन सबके कारण हम ही लोग हैं। यदि हम सफाईका खयाल रखें, तो इतने आदमी कभी नहीं मर सकते।

स्वास्थ्यके लिए सबसे आवश्यक चीज हवा है। हवाके बिना एक मिनिट भी जिन्दा रहना असम्भव है। खाना और पानी चाहे न मिले परन्तु हवाकी हर समय जरूरत रहती है। जहाँ जियादह आदमी रहते है, वहां यदि ताजी हवा हरघड़ी आती जाती न रहे, तो वहाँकी हवा

विषैली हो जाती है। यदि हवाके आनेके लिए काफी खिड़कियाँ और दरीचे नहीं हैं, तो हवा कारबोनिक हो जाती है। जो हवा शरीरमेंसे एकवार निकलती है, यदि वही फेफड़ोंमेंसे होकर दोबारा चली जाय, तो विषरूप हो जाती है। इस कारण साफ हवाकी बड़ी भारी आवश्यकता है। कितने ही आदमी साफ हवाके न मिलनेसे घबड़ाकर मर जाते हैं। कलकत्तेकी 'कालकोठरी'* का हाल आप लोगोंने इतिहासमें पढा ही होगा। वहेंकि नवाब सिराजुद्दौलाने एक रातको १४६ अँगरेजोंको एक बहुत छोटीसी तंग और अँधेरी कोठरीमें ठूस दिया था। प्रातःकाल जब कोठरीका दर्वाजा खोला गया, तो केवल २३ आदमी जिन्दा निकले। वे भी अधमरे हो रहे थे। बाकी सब हवा न मिलनेके कारण घुटकर मर गये। ऐसे और भी अनेक उदाहरण मिलेंगे। इनकी सत्यतामें कुछ भी सन्देह नहीं। एक चूहेको एक बोतलमें बन्द कर दो, ऊपरसे ऐसी डॅाट लगा दो कि बोतलमें बिलकुल हवा न जाने पाय। थोडी देरके बाद चूहा मर जायगा।

अतएव साफ हवाका खयाल रखना प्रत्येक मनुष्यका सबसे पहला नियम और सबसे पहला कर्तव्य है। साफ हवा उसी समय मिल सकती है जब हमारे रहने, सोने, खाने, पीनेके मकान बड़े और खुले हुए हों। हरएक आदमीके लिए काफी जगह हो और प्रकाशके लिए काफी द्वार हों। खानेमें चाहे हम गेहूँ खायें चाहे चने, परन्तु रहनेके लिए वही मकान चाहिए जो साफ और सुथरा हो। चाहे हमें कितना ही किराया देना पड़े, पर मकान स्वास्थ्यप्रद हो। अच्छे घरसे ही हम

* ऐतिहासिकोंका मत है और अब प्राय निर्विवाद सिद्ध हो चुका है कि कलकत्तेकी 'काल-कोठरी' वाली घटना बिलकुल असत्य और कपोलकल्पित है—प्रकाशक।

मनुष्य कहला सकते हैं। सच पूछा जाय तो घर ही संसारमें सबसे अच्छा स्कूल है यही पर बच्चा पैदा होता है और यहीं पर पलकर बड़ा होता है। यहाँकी प्रत्येक वस्तुका उस पर प्रभाव पड़ता है। यहाँकि जलवायुसे उसका जीवन बनता है। यहाँकी सभ्यता और यहाँके आचरणसे ही उसका चरित्र गठित होता है। यदि यहाँकी हवा खराब है मकान छोटा और गन्दा है, पडोसमें नीच जातिके मनुष्य रहते हैं, तो यहाँ पर जिस बच्चेका पालन होगा, वह कदापि स्वच्छ और निरोगी नहीं रह सकता। उसको मैले और गन्देमें रहनेका अभ्यास पड़ जायगा। वह रातदिन कारबोनिक हवाका ही सेवन करता रहेगा। परन्तु जैसा हम ऊपर कह आये हैं दण्डसे वह कभी नही बच सकता। वह जबतक जीता रहेगा, किसी न किसी रोगसे ग्रसित रहेगा। परन्तु इसके विपरीत जो बच्चा साफ सुथरे मकानमे पैदा होगा, जिसका स्वच्छ और निरोगी मनुष्योंसे सम्बन्ध होगा, सभ्य और शिक्षित मातासे पालन होगा, वह कभी गन्दा और मैला न रहेगा। वह सदा शुद्ध जलवायुके कारण स्वस्थ और निरोगी रहेगा। कहनेका तात्पर्य यह है कि अच्छे घरमें रहनेसे स्वास्थ्य अच्छा रहता है, आचरण सुधरते हैं और आयु दीर्घ होती है, परन्तु बुरे घरमें रहनेसे रोग सताते हैं, आचरण बिगड़ता है और आयु घटती है।

बच्चा घरमें माताकी गोदमें जो कुछ सीख लेता है वह उम्र भर कभी नहीं भूलता। जितनी आदतें होती है, वे सब उसी वक्त पड़ जाती हैं। हमको यह कहनेमें जरा भी सकोच नहीं होता है कि बच्चेमें जो बुरी आदतें बालकपनमे हो जाती हैं, उनको बादमें छुडानेका उद्योग करना बिलकुल व्यर्थ जाता है। बच्चोंके चरित्रका सुधारना स्कूलमास्टरोंके हाथमें नहीं है। उनका एक प्रकारसे इस विषयमे कोई सम्बन्ध

ही नहीं। बालकोंके चरित्रगठनका काम केवल उनके माता पिता और उनके पास रहनेवाले भाई बहनों तथा अड़ोसी पड़ोसियोंका है। स्कूलमें बच्चेको चाहे कितनी ही उच्चशिक्षा दी जाय, उच्चसे उच्च कक्षा क्यों न पास करा दी जाय; परन्तु यदि वह स्कूलसे पढ़कर शामको गन्दे, मैले, तग और अँधेरे घरमे जाता है, तो उसकी सारी शिक्षा निरर्थक है। स्वास्थ्य और आचरण घरकी शिक्षा पर निर्भर है। यदि शुद्ध जलवायुके अभावसे अथवा असभ्यता और दुराचरणके कारण स्वास्थ्य और आचरण बिगड़ जाय, तो स्कूलमें प्राप्त की हुई शिक्षा भी लाभके स्थानमें हानिकर ही सिद्ध होगी। अतएव घरको केवल खाने और सोनेहीकी जगह न समझना चाहिए, किंतु वह स्थान समझना चाहिए जहाँ आत्मगौरवकी रक्षा होती है और सासारिक सुखोंकी प्राप्ति होती है। घरमें सुख उसी समय मिल सकता है और कुटुम्बियों और विशेषकर बालकों पर उसी समय अच्छा प्रभाव पड़ता है जब वहाँ पर स्वच्छता और बुद्धिमत्ताका खयाल रक्खा जाता हो। उनका खयाल तब ही रक्खा जा सकता है, जब घरकी प्रबन्धिका गृहिणी स्वयं, स्वच्छ, नियमबद्ध, परिश्रम करनेवाली और शिक्षिता हो। घरका सुख दुःख केवल गृहिणी पर निर्भर है। यदि गृहिणी स्वच्छ है, तो घर अवश्य स्वच्छ रहेगा। परन्तु इसके विपरीत यदि गृहिणी मूर्खा और गन्दी है, तो लाख यत्न करने पर भी घर स्वच्छ नहीं रह सकता। घर पूर्ण रूपसे स्त्रीके अधिकारमें है। पुरुष २४ घंटे घरमें नहीं रहता, परन्तु स्त्री आठों पहर वहीं रहती है। वह चाहे तो विना किसी कष्टके बडी असानीसे प्रत्येक वस्तुको साफ और सुथरी रख सकती है।

जबतक पृथक् पृथक् घर उन्नति न करें, तबतक कोई जाति उन्नति नहीं कर सकती और घरकी उन्नति स्त्रीके हाथमे है। अतएव स्त्रियोंके

लिए यह जानना बड़ा जरूरी है कि किस तरह अपने घर अच्छे रक्खे जा सकते हैं। यह जाननेके लिए शिक्षाकी जरूरत है। उनको शुरूसे ही स्वास्थ्यरक्षा और गृहप्रबन्धकी शिक्षा दिलाना आवश्यक है, जिससे वे बड़ी होकर योग्य रीतिसे अपने घरका प्रबन्ध कर सकें। परन्तु खेद है कि भारतवर्षमें इसकी ओर लोगोंका लक्ष्य ही नहीं है। यहाँके लोग कुछ दिन पहले तो स्त्री-शिक्षाके कट्टर विरोधी थे। अब कुछ दिनोंसे विरोध तो प्रायः जाता रहा, परन्तु प्रचारके लिए यथेष्ट उद्योग नहीं होता। कहनेके लिए अनेक कन्या-पाठशालायें हैं, परन्तु वास्तविक शिक्षा शायद ही कहीं दी जाती हो। जो अवस्था शिक्षाके लिए योग्य होती है, उस अवस्थामें यहाँ विवाह कर दिया जाता है। विवाह होते ही शिक्षाका द्वार एकदम बन्द हो जाता है। उस समय तक जो दो चार पुस्तकें पढ़ ली जाती हैं, उन्हीं पर सन्तोष कर लिया जाता है। इस प्राप्त हुई शिक्षासे विशेष लाभ नहीं किंतु कभी कभी हानि पहुँचती है। अर्धविद्या भयंकर होती है। यही कारण है कि भारतवर्षमें अशिक्षित स्त्रियोंकी अज्ञानता और असावधानीसे सैकड़ों घर दुःखमय हो रहे हैं; हजारों बच्चे गर्भहीमें मर जाते हैं और प्लेग, हैजा आदि महामारियाँ पीछा नहीं छोड़तीं।

यद्यपि स्त्रियोंकी अज्ञानतासे कितने ही कष्ट उठाने पड़ते हैं; परन्तु यदि विचार किया जाय तो स्त्रियोंकी अज्ञानताका कारण बेचारी स्त्रियाँ नहीं है, किन्तु पुरुष हैं। वे ही इस ओर लक्ष्य नहीं देते। साधारण स्थितिके लोग यदि कुछ न करें, तो आश्चर्य नहीं, आश्चर्य तो उन पर है जो उच्चशिक्षा प्राप्त किये हुए हैं, सब कुछ सामर्थ्य रखते हैं, देश और समाजके नेता बनते हैं, परन्तु स्वयं अपनी लड़कियोंकी आठ दस वर्षकी उमरमें ही शादी कर देते हैं। वे इस बात पर कभी विचार

तक नहीं करते कि ये लडकियाँ जिनको हम दूसरे घरोंमें वहाँका भार उठानेके लिए भेज रहे हैं, उस भारके उठानेके लिए समर्थ भी हैं या नहीं। परिणाम यह होता है कि वे दूसरे घरोंमें जाकर अज्ञानताके कारण हास्य और निन्दाकी पात्र बनती हैं और घरका कुछ भी प्रबन्ध नहीं कर सकतीं। न स्वयं करना जानती हैं और न दूसरोंसे कराना जानती हैं। थोडी ही अवस्थामें उन्हें प्रायः गर्भका असह्य भार उठाना पड़ता है। गर्भरक्षा और सन्तानपालन जैसे महान् कार्य उनके सिरपर आजाते हैं, जिनसे वे सर्वथा अनभिज्ञ हैं।

सन्तानपालन और स्वास्थ्यरक्षा साधारण काम नहीं है। इनके लिए बडी चतुर बुद्धिमती और शिक्षिता स्त्रियोंकी आवश्यकता है। हमारा कर्तव्य है कि हम अपनी लडकियोंको शुरूसे ही इन बातोंकी शिक्षा दें और उनको स्वच्छ जलवायुका सेवन करावें तथा अच्छे मकानोंमें रक्खें। चाहे किराया कितना ही अधिक देना पडे, चाहे कुछ हो, परन्तु रहनेका मकान जैसा हम ऊपर कह आये हैं साफ सुथरा और हवादार होना चाहिए।

बहुतसे आदमी बढिया मकानमें रहनेको फिजूलखर्ची समझा करते हैं, परन्तु यह उनकी बड़ी भूल है। जियादह किराया देकर अच्छे मकानमें रहना फिजूलखर्ची नहीं, किन्तु कमखर्ची है और इसके विपरीत थोड़े किरायेके गन्दे मकानमें रहना फिजूलखर्ची है और ऐसी फिजूलखर्ची है कि जिसमें रुपया भी नष्ट होता है, चिन्ता भी रहती है और जानके भी लाले पड़े रहते हैं। उदाहरणके लिए मान लो कि यदि खराब हवा और बदबूके कारण बीमारी आ गई, तो अच्छे मकानके किरायेसे कितना ही जियादह दवाई और डाक्टरोंकी फीसमें लग जायगा।

इसके सिवाय गन्दी हवामें रहनेसे एक और बड़ी भारी खराबी होती है वह यह है कि कारबोनिकगैसकी अधिकतासे शरीर शिथिल पड़ जाता है और इन्द्रियाँ निर्बल हो जाती हैं। इनको उत्तेजित करनेके लिए—शरीरसे कडे काम लेनेके लिए—प्रायः लोग अफीम गाँजा शराब वगैरह नशेकी चीजोंका सेवन करने लगते है जिनसे तन, मन, धन, तीनों नष्ट होते है। एक दिनमे जितनेकी शराब या अफीम खर्च हो जाती है, उतना जियादह किराया देनेसे अच्छा मकान मिल सकता है; परन्तु इस पर कोई विचार नहीं करता। लोग रुपयेके लोभके कारण खराबसे खराब मकानमें रहना पसन्द कर लेते हैं, चाहे परिणाम कुछ भी हो। इस लोभका मुख्य कारण अज्ञानता है। अज्ञानताके कारण ही यहाँके लोग ऐसे मकान बनाते हैं कि जिनमें हवा और धूप भूलकर भी नहीं आने पाती। हम नहीं समझते कि ऐसे मकानोंके बनानेमें क्या लाभ होता है। खर्च कुछ कम नहीं होता, मेहनत भी कम नहीं लगती। यदि अच्छे खुले हवादार मकान बनाये जायँ, कुरसी ऊँची दी जाय, हर एक मकानमें हवाके लिए दरवाजे और खिड़कियाँ रक्खी जायँ, तो जहाँतक हिसाब लगा कर देखा गया है, एक पाई भी जियादह खर्च न हो। कारण कि हवा और रोशनी जिनकी कि जरूरत है, बिना मूल्य ही मिलती हैं।

यद्यपि स्वास्थ्यरक्षाके नियमोंका पुस्तकों और व्याख्यानोंद्वारा बहुत कुछ प्रचार किया गया है, परन्तु अभीतक लोगोंका इसकी ओर पूरा पूरा ध्यान आकर्षित नहीं हुआ। इसका कारण यदि विचार करके देखा जाय तो यही मालूम होगा कि यहाँके ग्रामीण लोग प्रायः इसके लाभोंसे अपरिचित हैं और इसके नियमोंको बहुत कठिन समझते हैं। पर यह उनका केवल भ्रम है। स्वास्थ्यरक्षाके लिएं कुछ खर्चकी जरूरत नहीं

और कोई कठिनाई भी नहीं। केवल शुद्ध जलवायुकी जरूरत है और ये दोनों चीजे बिना मूल्य मिलती हैं। जहाँ कहीं मैल और गन्दगी हो तुरन्त पानी डाल कर साफ कर दो। जिस मकानमें हवाका मार्ग न हो, वहाँ दीवारमें एक छोटासा छेद कर दो। मकानके समान अपनी गली अपने शहर और अपने बदनका भी खयाल रक्खो। शरीरको साफ न रखनेसे सिरमे जूँ पड़ जाते हैं, बदनमें दाद और खुजली हो जाती है और गलियोंको साफ न रखनेसे प्लेग वगैरहके कीड़े पैदा हो जाते हैं अथवा मलेरिया बुखार फैल जाता है, जिससे हजारों आदमी प्रतिवर्ष मर जाते हैं।

बुरी गन्दी गलियोंमें रहनेसे केवल मलेरिया आदिका ही भय नहीं, किन्तु और भी बहुतसी बुराइयाँ पैदा हो जाती हैं। देखनेसे मालूम होता है कि ऐसी जगहमें रहनेवालोंको गन्दगी और बदबूसे घृणा नहीं रहती। उन्हे रातदिन बुरे बुरे शब्द सुनने और लोगोंको शराब पीकर बकते हुए देखनेका अभ्यास पड़ जाता है। उनके चारों ओर वे लोग रहते हैं, जिनका पेशा दुराचार है। ऐसी दशामें रहनेसे उनका आचरण कभी ठीक नहीं रह सकता और उनका चरित्रगठन कदापि नहीं हो सकता। ऐसी जगहमें रहना मानो बालकों और स्त्रियोंके चरित्रको जान बूझकर बिगाड़ना है।

शरीररक्षा और चरित्रगठन तथा गृहसुख और सार्वजनिक (पब्लिक) सुखमें घनिष्ट सम्बन्ध है। बुरी गन्दी जगहमें रहनेसे चरित्र पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है। वह प्लेगसे भी अधिक हानिकर है। ताजी हवाके न मिलनेसे अथवा बदन साफ न रहनेसे बदन ही कमजोर नहीं होता, किन्तु दिल भी गिर जाता है और कोई मानसिक उन्नति नहीं हो सकती। आत्मसम्मान नष्ट हो जाता है। बुरी बुरी वासनायें चित्तमें पैदा

होने लगती हैं, आचरण बिगड़ जाते हैं, मन चंचल हो जाता है। कभी शराब पीनेको जी चाहता है और कभी व्यभिचारकी इच्छा होती है। इसी तरह पाप और दुराचार दिन दिन बढता जाता है।

स्वास्थ्यरक्षाके नियमोंका पालन न करनेसे क्या अमीर क्या गरीब प्रत्येकको आर्थिक दण्ड भी भोगना पड़ता है। अमीरोंको उन अनाथों विधवाओंकी रक्षार्थ चन्दे देने पड़ते हैं, जिनके माता पिता और रक्षक हैजे वगैरहमें अचानक मर जाते हैं। बीमारीमें भी उनका बहुत खर्च पड़ता है। क्योंकि रोग गरीबोंके घरोंसे निकलकर अमीरोके घरोंमें जाता है और किसी न किसीको उसकी भेट होना पड़ता है। इसके अतिरिक्त कितना ही रुपया औषधालयों, अनाथाश्रमों और विधमाश्रमोंमे खर्च करना पड़ता है। गरीबोंको भी कुछ कम खर्च नहीं करना पड़ता। यदि अमीरोंका धन खर्च होता है तो गरीबोंकी जान जाती है। यही उन बेचारोंके लिए सबसे बड़ा धन है। यही उनका सर्वस्व है। इसी पर सब कुछ निर्भर है और यदि वह ही चला गया, तो उनका सब कुछ खो गया।

इस पर भी यह देखकर बड़ा आश्चर्य होता है कि लोग स्वास्थ्यरक्षाकी कोई चिन्ता नहीं करते। यद्यपि स्वास्थ्यरक्षा और आरोग्यताके लिए बड़े बड़े शहरोंमें म्यूनीसिपालिटियाँ हैं, लेकिन म्यूनीसिपालिटियोंकी गलियों और सड़कों तक ही पहुँच है। वे गलियोंकी गन्दगी और मैलेपनको तो दूर करा सकती हैं, परन्तु अन्दर घरोंमें उनकी पहुंच नहीं। घरोंमें जो मलमूत्रके स्थान हैं, अथवा गाय भैंस बाँधनेके मकान हैं, अथवा बर्तन भाँडे साफ करनेके स्थल हैं, वे इतने गन्दे और मैले रहते हैं कि यदि कोई अच्छे साफ हवादार मकानमें रहनेवाला मनुष्य वहाँसे निकल जाय, तो दुर्गन्धके कारण उसका साँस

घुट जाय। इन स्थलोंकी सफाई म्यूनीसिपाल्टियोंके अधिकारसे बाहर है। इनका साफ रखना इन रहनेवालोंका काम है। यदि वे इस ओर ध्यान न दें, तो केवल अपनेको ही हानि नहीं पहुँचाते, किन्तु तमाम मोहल्लेवालों और धीरे धीरे तमाम शहरवालोंको हानि पहुँचाते हैं। एक शहरमे बीमारी होनेसे दूसरे शहरमें फैल जाती है। दूसरेसे तीसरेमें और तीसरेसे चौथेमें, इस तरह एक आदमीकी असावधानी और गन्देपनसे सारे समाज और सारे देशको हानि पहुँचती है। परन्तु यदि प्रत्येक व्यक्ति सफाई और तन्दुरुस्तीका खयाल रक्खे, तो कहीं बीमारीका नाम भी सुनाई न दे। बीमारीके कारण हम ही हैं। जितने भयंकर रोग है, उन सबके छोटे छोटे कीडे होते हैं जो शरीरमें प्रवेश करके शरीरको विषरूप कर देते हैं। संसार भरके डाक्टर इस बात पर सहमत हैं कि ये कीड़े गन्दी, बदबूदार हवासे पैदा होते है। गन्दगी और बदबू हमारी ही बेपरवाही और मैलेपनसे फैलती है। यदि हम हरएक चीजको सफाईसे रक्खें—बदनको, कपड़ोंको, मकानको, माल-असबाबको साफ रक्खे, कहीं कूडा-करकट इकट्ठा न होने दें, बदबू न होने दें, कोई चलितरस, अभक्ष्य पदार्थ न खावें, तो कभी भी बीमारी न हो।

इन बातोंका खयाल रखना कोई कठिन बात नहीं। यह केवल हमारी इच्छा और प्रतिज्ञा पर निर्भर है। यदि हम दृढ संकल्प कर लें, तो कुछ भी कठिन नहीं। विना संकल्प और प्रातिज्ञाके कुछ नहीं हो सकता। चाहे हमको कितना ही अच्छा मकान मिले, साफ सुथरा और हवादार भी हो, परन्तु यदि हमारी आदत सफाईकी नहीं, हमको स्वच्छतासे प्रेम नहीं, हमारी स्त्री मैली और फूहड़ है, तो हम उसको भी थोड़े ही दिनोंमें खराब कर देंगे। शराबी, जुआरी, फिजूलखर्च

आदमी अच्छेसे अच्छे महलको भी डरावना और घिनौना बना देगा, परन्तु इसके विपरीत यदि खराबसे खराब मकान भी उस आदमीको दिया जाय जो कमखर्च और मेहनती है और जिसकी आदतमें सफाई है, तो वह उसे भी अपनी मेहनत और शौकसे साफ सुथरा और अच्छा बना लेगा।

जब मकानका अच्छा बुरा बनाना उसमें रहनेवालोंके हाथमें है, तब उनका कर्तव्य है कि अपने और दूसरोंके फायदेके लिए मैलेपनकी आदतको छोड़कर सफाईकी आदत डालें। इसमें सन्देह नहीं कि जिन लोगोंकी आदत शुरूसे मैलेपनकी पड गई है, उनको सफाई एकदम नहीं आ सकती; परन्तु यह अवश्य है कि यदि वे उद्योग करे तो बहुत जल्दी सीख सकते हैं। शुरूमें कठिनाई होगी, परन्तु थोड़े दिनोंमें ही सफाईका शौक हो जायगा—जरासा मैलापन भी न दिखलाई देगा।

सबसे जियादह जरूरी यह है कि बच्चोंको शुरूसे ही सफाईका अभ्यास कराया जाय। इसके लिए पुस्तकोंकी जरूरत नहीं, केवल नमूनेकी जरूरत है। कोई बुरी मैली और गन्दी चीज उनके सामने न आना चाहिए, वे स्वयं मैलेपनसे घृणा करने लगेंगे। बच्चोंको बोलना कौन सिखाता है? इग्लैंडके बच्चे अँगरेजी और हिंदुस्तानके बच्चे हिंदुस्तानी किस भाँति सीख जाते हैं? जैसा उनके माता, पिता, भाई बहिन बोलते हैं, वैसा ही वे भी बोलने लगते हैं। इसी प्रकार यदि वे आपको साफ सुथरा देखेंगे, मैल और बदबूसे घृणा करते देखेगे, हररोज कपड़ों और घरोंको साफ होते देखेंगे, आपको स्नान करते, हाथ पैर धोते हुए देखेंगे, तो वे भी आप जैसे हो जायँगे।

किसीने क्या ही अच्छा कहा है कि "सफाई तन्दुरुस्तीकी जड़ है। मितव्ययता, सदाचार और आत्मसम्मानकी कल है। जिस घरमें सफाई

है, वह सदा सुखी और निरोगी है और जिसमे मैलापन है, वह दुःखी और रोगी है। सफाईमें भलाई और आराम है, मैलेपनमे बुराई और तकलीफ है। सफाई सभ्यताकी सूचक है और उन्नतिका द्वार है। मैलापन असभ्यताका सूचक है और अवनतिका कारण है। सफाईसे मन पवित्र होता है और मैलेपनसे अपवित्र हो जाता है।"

शरीर आत्माका मन्दिर है। उसमें आत्मा विराजमान है। आत्माकी पवित्रताके लिए शरीरका पवित्र होना आवश्यक है। बिना शरीरकी पवित्रताके आत्माका शुद्ध होना दुस्साध्य है। इसी कारण देवदर्शन पूजापाठ आदिके पूर्व शौचादिसे निवृत्त होना आवश्यक है। जहाँ देखिए वहींके मन्दिरों, मसजिदोंमें कुए बने हुए हैं। ये इसी लिए बनाये गये है कि पूजा प्रार्थना करनेके पहले शरीरको शुद्ध करना योग्य है। कोई हिन्दू विना स्नान किये पूजा नहीं कर सकता है और कोई मुसलमान विना हाथ, मुँह, पैर धोये नमाज नहीं पढ़ सकता। धर्मशास्त्रोंमें आत्मशुद्धताके लिए शरीरशुद्धताकी आवश्यकता दिखलाई है। क्योंकि विना शरीरकी शुद्धिके मन शुद्ध नहीं हो सकता और मनकी शुद्धिके विना आत्माकी शुद्धि नहीं हो सकती।

इस लिए अन्तमें फिर कहा जाता है कि सफाई एक मुख्य चीज है। स्वास्थ्यरक्षा, सन्तानपालन, आत्मसम्मान तथा गृहप्रबन्धके लिए प्रत्येक मनुष्यको और विशेषकर प्रत्येक गृहिणीको इसका अभ्यास करना चाहिए। रहने सहने, खाने पीने वगैरह हरएक काममें इसका खयाल रखना चाहिए। इसके विना स्वप्नमें भी सुख नहीं मिल सकता।

परन्तु इस देशमें स्त्रियोंको बहुत ही तुच्छ दृष्टिसे देखा जाता है। उनके पढाने लिखानेमें एक पैसा भी खर्च नहीं किया जाता। यह सरासर भूल है। शिक्षा क्या स्त्री क्या पुरुष सबके लिए जरूरी है, बल्कि स्त्रि-

योंके लिए तो और भी जरूरी है। पुरुष यदि न पढ़ें तो अधिक हानि नहीं, परन्तु यदि स्त्रियाँ न पढ़ें तो वे कदापि गृहप्रबन्ध और सन्तान-पालन जैसे महत् कार्योंका सम्पादन योग्य रीतिसे नहीं कर सकतीं। शिक्षिता स्त्रियोंकी सन्तान ही स्वच्छ और निरोगी रह सकती है और संसारमें कुछ करके दिखला सकती है। यह प्रत्यक्ष देखनेमें आता है कि शिक्षिता माताओंकी सन्तान प्रायः शिक्षित होती है। उनको प्रारं-भसे ही शिक्षा, विद्या और स्वच्छतासे स्वाभाविक प्रेम होता है। परन्तु इसके विपरीत अशिक्षिता माताकी सन्तान बहुत कम सभ्य और शिक्षित होती है।

धन प्राप्त करनेकी इच्छा प्रत्येक मनुष्यमें पाई जाती है और वास्तवमे जीवनके लिए धनकी बड़ी आवश्यकता है। परतु धनका मूल श्रम है। अर्थात् श्रमसे–मेहनत करनेसे धन प्राप्त होता है और मेहनत भी तभी हो सकती है जब स्वास्थ्य अच्छा हो। अतएव स्वास्थ्य सबसे बढ़कर है। सब उन्नतियोंसे पहले स्वास्थ्यलाभ करना आवश्यक है। स्वास्थ्यके विना किसी प्रकारकी उन्नति नहीं की जा सकती। इस लिए स्वास्थ्यलाभके नियमों पर प्रत्येक व्यक्तिको ध्यान देना चाहिए।

पन्द्रहवाँ अध्याय

सुखी जीवन।

(विद्वानोंके वाक्य।)

गुण कर्मसे मनुष्यको ऊँच नीच समझो। उत्तम कुलमें उत्पन्न होनेसे कोई उत्तम नहीं कहला सकता। उत्तम वही है, जो उत्तम कार्य करता है— चाहे नीच कुलमें ही उत्पन्न हुआ हो।

उत्तम स्वभाववाले मनुष्यकी सेवा करना श्रेष्ठ है, चाहे वह दरिद्र ही क्यों न हो। वह समय अवश्य आयगा, जब वह तुम्हें तुम्हारे कामोंका बदला देगा।

जो चीज तुम्हें नहीं मिल सकती, ऐसा प्रयत्न करो कि उसका अभाव तुम्हारे हृदयके उल्लासको नष्ट न करे।

* * * * * *

जिस तरह ससारमें और अनेक कार्य हैं, उसी तरह सुखपूर्वक जीना भी एक महान् कार्य है। इसका करना उतना ही कठिन है, जितना किसी गूढ विषयका अध्ययन करना अथवा और कोई चातुर्यका कार्य करना। प्रत्येक वस्तुका सदुपयोग करना और जीवनके उच्चतम उद्देश्यकी पूर्ति करना सुखीजीवन पर ही निर्भर है।

सुखपूर्वक रहनेके लिए कुछ कम बुद्धिकी जरूरत नहीं है। यद्यपि यह गुण किसी किसी मनुष्यमें स्वाभाविक होता है, तथापि इसका अभ्यास प्रत्येक व्यक्ति कर सकता है। माता पिता तथा अध्यापकोंके द्वारा बालकोंके हृदयमें इसका सस्कार बाल्यावस्थामें ही करा दिया जा सकता है और अभ्यास और आचरण द्वारा समय पाकर इसका पूर्ण

ज्ञान हो सकता है। परन्तु विना बुद्धिके यह ज्ञान कदापि स्थिर नहीं रह सकता।

संसारमें सुख चिन्तामणि रत्नके समान ऐसा दुर्लभ नहीं है कि इसके लिए इच्छा करना अथवा इसकी प्राप्तिके लिए उद्योग करना ही निष्फल हो। नहीं, यह ऐसे अनेक छोटे छोटे रत्नोंका संग्रह है, जो एक साथ जुड़े हुए हैं और देखनेमे सुंदर माळूम होते हैं। हमारे जीवन-मार्गमें चारों ओर पग पग पर जहाँ देखिए वहाँ ही साधारणसे साधारण घटनाओंमें भी सुख व्याप्त है। उनसे आनंदित होना ही परम सुख है। परंतु हम किसी महान् सुखकी प्राप्तिकी जोहमें लगे रहते हैं और उन साधारण पदार्थोंमें रहनेवाले सुखकी ओर ध्यान भी नहीं देते। इसका परिणाम यह होता है कि हमको कोई भी सुख नहीं मिलता। इसी कारण हम सदा दुखी रहते हैं। वास्तवमें छोटे छोटे कामोंको कर्तव्य और आनंदका कारण मानकर करनेमे ही सुख है।

जो मनुष्य जीवनको आनंदपूर्वक व्यतीत करना जानता है, उसको कभी दुःख नहीं होता। वह सदा हर्षित और प्रसन्नचित्त रहता है। प्रकृति उसके लिए सदा सुंदरतासे परिपूर्ण रहती है। वह वर्तमानको देखकर, भूतका स्मरण करके और भविष्यका अनुमान करके प्रसन्न होता रहता है। वह अच्छी तरह जानता है कि जीवन अमूल्य पदार्थ है। उसको सार्थक बनानेके लिए विवेकानुसार आनंदपूर्वक कर्तव्यपालनकी जरूरत है। वह निरन्तर अपनी उन्नति करता रहता है। पतित और असहाय मनुष्योंको उपदेश द्वारा उत्साहित करता और यथाशक्ति धनसे उनकी सहायता करता रहता है। वह प्रत्येक उन्नतिके कार्यमें योग देता है और परोपकारसे मुँह कभी नहीं मोड़ता। उसका सम्पूर्ण समय अपनी और दूसरोंकी उन्नतिके विचारमें ही व्यय होता है। वह कभी हतारा नहीं

होता। वह आपत्तियोंको प्रसन्नतासे सहन कर लेता है। आपत्तियाँ उसके कार्यमें बाधक नहीं होतीं, उलटा उसको सदा उत्तेजित करती रहती हैं। उसकी बुद्धिका दिनोंदिन विकाश होता जाता है और उसका अनुभव बढता जाता है। वह प्रत्येक पदार्थमें प्रतिदिन एक अपूर्व आनंदका अनुभव करता है। चौवीस घटोंमें उसको क्षणभरके लिए भी दुःख नहीं होता। उसका जीवन सच्चा सुखी जीवन है। न उसे इस वातकी इच्छा है कि लोग मेरी प्रशंसा करें, न इस वातकी चाह है कि मरने पर लोग मेरे लिए स्मारक स्थापित करें; मृत्युका भी उसे डर नहीं। वह वड़ी प्रसन्नतासे उसका स्वागत करता है और मृत्युके आने पर हर्षपूर्वक उसकी गोदमें सो जाता है। लोग उसके उपकारोंका स्मरण किया करते है और वह स्मरण ही मानो उसका स्मारक होता है। उसके आदर्शजीवनसे लोगों पर जो प्रभाव पड़ता है, वही मानों उसकी प्रशंसा है।

एक वह मनुष्य है जिसका जीवन दुःखसे परिपूर्ण है। रात दिनमें क्षण भरको भी उसे सुख नहीं। समस्त संसार उसकी दृष्टिमें शून्य है। किसी चीजसे भी उसको आनंद नहीं मिलता। उसकी आनन्दानुभवकी शक्ति ही मानों सर्वथा नष्ट हो गई है। यद्यपि रुपया बहुत है, तो भी उसका मन प्रसन्न नहीं होता। भ्रमण उसको अच्छा नहीं लगता और प्रकृतिके दृश्य उसको प्यारे नहीं लगते। यदि उसको कभी पहाड़ों या जंगलोंमें जानेका अवसर मिलता है, तो वह एक वेगारसी समझता है और यह खयाल करके कि यह सफर तो काटना ही है ज्यों त्यों करके समयको विता देता है। जब जवानीमें ही उसका यह हाल है, तब बुढ़ापेके विपयमें तो कहा ही क्या जाय। यद्यपि उस समय उसको जिंदगी भारी माल्हम होती है, परतु फिर भी

वह मरना नहीं चाहता—मौतसे वह सदा डरता रहता है। अचानक मौत आजाती है और उसकी अतुल्य लक्ष्मीकी कुछ भी परवा न करके उसको हवाकी तरह उड़ा ले जाती है। इस तरह यद्यपि उसके पास धन बहुत था, तो भी सुखी जीवनके सिद्धांतोंसे अपरिचित होनेके कारण उसको सफलता न हुई।

जीवनको आनन्दमय बनानेके लिए रुपया आवश्यक नही है। इसके लिए प्रत्येक पदार्थको देखकर उससे आनन्द प्राप्त करनेकी शक्ति होना चाहिए। हमारे सामने ऐसे सैकड़ों पदार्थ विद्यमान हैं, जिनसे हम आनन्दानुभव कर सकते हैं। परन्तु हमारे नेत्र और हमारा हृदय उक्त शक्तिसे शून्य है और इस कारण वे हमारी दृष्टिमे रूखे और फीके मालूम होते हैं। आनन्दानुभव शक्तिके होते हुए एक क्षण भी दुःख और चिंतामें नहीं बीत सकता। निर्धनसे निर्धन भी अपनेको महान् सुखी समझता है। वास्तवमें सुखी वे ही है जिनको कोई चिंता नहीं, जो प्रत्येक पदार्थमें एक अनुपम सौन्दर्यका अनुभव करते है और जो सदा पवित्र विचार और उच्च वासनाओंसे अपने मनको प्रसन्न रखते हैं। ऐसे मनुष्य बड़े परिश्रमी साहसी और उद्योगी होते हैं। वे अपने अथक उद्योगसे घरकी छोटी छोटी चीजोंको भी ऐसी अच्छी तरह रखते हैं कि सदा उन्हें देखकर प्रसन्न होते हैं। उनके घरमें जाकर देखिए, सब चीजें ठीक ठीक जगह पर सफाईसे रक्खी होंगी। कही कूड़ा-करकट नामको भी न होगा। कपड़े साफ और सुफेद होंगे। बर्तन चाँदी सोनेके समान चमकते होंगे। सम्भव है कि उनके कमरोंमें दस बीस तसवीरें न हों, बढिया बढ़िया मेज कुरसियाँ न हो, नीचे चादरें गलीचे न बिछे हों, परन्तु जो कुछ भी होगा, वह साफ सुथरा होगा। यदि एक भी तस-

बीर होगी, तो वही देखनेमें सुदर और प्रिय मालूम होगी। फर्श यदि बोरिये या चटाईका भी होगा, तो भी वह साफ होगा।

सुखी जीवन घरकी छोटी छोटी बातों पर निर्भर है। खाना सादा और जल्दी पचनेवाला हो, गरिष्ठ न हो। हवा साफ आती हो, मकानोंमें नमी न हो, धूप आती हो, कूडा-करकट न पड़ा हो, सफाई रहती हो।

जैसा हम पिछले अध्यायोंमे कह आये हैं, सुख और स्वास्थ्यके लिए सफाई बहुत ही जरूरी चीज है। सफाईमें जियादह रुपया खर्च नहीं होता, सिर्फ खयाल रखनेकी जरूरत है। देखा जाता है कि बहुतसे आदमी जिनकी आमदनी पचास रुपयेकी भी नहीं, उनसे कहीं अच्छे रहते हैं जिनकी आमदनी डेढ़सौ या दोसौ रुपयोंकी है। इसका कारण यही है कि पहले आदमीके घरमें सफाईका खयाल रक्खा जाता है, परन्तु पिछलेके घरमें इसकी कोई परवा नहीं की जाती। पहले घरके बच्चे सदा अच्छा खाते पीते हैं, साफ सुथरे रहते हैं और उत्तम शिक्षा पाते हैं; वह स्वयं आनदपूर्वक रहता है, कभी कोई चीज उधार नहीं लेता, कभी बिना जरूरतकी चीज नहीं खरीदता, उपयोगी सार्वजनिक कार्योंमें योग देता है, अनेक सस्थाओंका सभासद है और अनेक समाचार पत्रोंका ग्राहक है। परन्तु पिछला पुरुष अधिक आमदनी होते हुए भी सदा तंगहाल रहता है। महीनेकी बीस तारीख होने नहीं पाती कि उसकी जेब खाली हो जाती है और किसी तरह जल्दी जल्दी समय जैसा अमूल्य पदार्थ पूरा हो जाय, इसीका खयाल रखता है। उसके बच्चे बुरेहाल रहते है। यद्यपि उन्हें कपडे बढ़िया बढ़िया पहिनाये जाते है, परन्तु सफाईकी ओर ध्यान न होनेसे वे उन्हें जल्द खराब कर देते है। यद्यपि मकानोंमें दरियाँ बिछाई जाती हैं, परन्तु वे जल्द मैली कुचैली हो जाती है। लेम्प जलाये जाते हैं,

परन्तु असावधानीके कारण उनकी चिमनियाँ हर रोज टूटा करती है। इन्हीं बातोमे फिजूल खर्च होता है। इस फिजूलखर्चीका कारण एक मात्र बेपरवाही है। ऐसे आदमी संसारमे कभी बड़े नहीं हो सकते। चाहे उनकी आमदनी कितनी ही होजाय, परन्तु वे सदा दुखी रहेगे। सुख उन्हें स्वप्नमें भी नहीं मिल सकता। ससारमें सुख तो सभी चाहते हैं, परन्तु असल बात यह है कि सुखी रहनेके उपाय सब नही जानते। सुखपूर्वक रहना कोई आसान बात नहीं है। इसके लिए गहरे ज्ञान और अनुभवकी जरूरत है। परंतु यह कोई कठिन बातभी नहीं है। मनुष्य मात्रका कर्तव्य है कि वह सुखी रहनेके उपाय सीखे।

लोगोंका यह खयाल कि ससारमें दुःख है, ठीक नहीं है। सुख दुःख हमारे अधीन हैं। हम चाहें तो स्वर्गको नरक कर दें और नरकको स्वर्ग बना दें। सुख दुःखका अनुभव करना मनका काम है और मन हमारे अधिकारमें है। हम चाहे तो अपने विचारोंको शुद्ध रख सकते है, इंद्रियोंको वशमें कर सकते हैं, हृदयको पवित्र कर सकते हैं, कषायोंको शमन कर सकते हैं, शिक्षासे अव्यक्त गुणोंका विकाश कर सकते हैं, समीचीन ग्रन्थोका स्वाध्याय कर सकते है और सद्गुणोंकी प्राप्ति भी कर सकते हैं।

सुखी जीवनका सच्चा और सबसे अच्छा दृष्टांत घरमें मिल सकता है। वह घर कदापि फला फूला नही कहला सकता—उस घरकी कभी बढती नहीं हो सकती, जिसमें सुख और शांति न हो। जहाँ सदा झगडा-टंटा रहता हो, मैला कुचैला पड़ा रहता हो और आलस फैला रहता हो, वहाँ न तो पुरुष ही सुखी रह सकता है और न स्त्री ही। दोनोंका जीवन निष्फल और दुःखप्रद होता है। वह पुरुष—जो दिन भर दफ्तर या कारखानेमे कड़ा परिश्रम करता है— यही आशा

करता है कि शामको घर पर आराम मिलेगा और इसी आशा पर उस श्रमकी कोई परवा नहीं करता। बड़ेसे बड़ा आराम जो उसकी पत्नी उसको दे सकती है यही है कि उसके घर आनेसे पहले पहले उसके लिए मकानको साफ और सुथरा करके रक्खे और अच्छा खाना बना कर तैयार रक्खे। यही गृहिणीका कर्तव्य है—इसीका नाम गृहप्रबन्ध है—इसीको मितव्ययता कहते हैं। इसीसे वह घर ऐसा सुखी हो जाता है कि गृहस्वामी घर पर आते ही सब दुःख भूल जाता है और अपने मनमें समझता है कि मानो मैं स्वर्गमें आ गया; फिर उसे कोई भी लोभ वहाँसे नहीं हटा सकता।

ऐसे घरको ही सुखी घर कहते हैं। वे लोग बड़े दुखी हैं, जिनके घर नहीं। परन्तु उनसे भी जियादह दुखी वे हैं, जिनके घरमें सुख नहीं। घरके लिए सुख ऐसा ही जरूरी है जैसे शरीरके लिए आत्मा। जैसे बिना आत्माके शरीर नहीं रह सकता, वैसे ही बिना सुखके घर नहीं रह सकता।

केवल बढ़िया सामान और अच्छे अच्छे खाद्य पदार्थोंसे ही सुख नहीं होता। सुखके लिए स्वच्छता और मितव्ययता चाहिए। संक्षेपमें गृहशासन और गृहप्रबन्ध भी सुखके लिए बहुत आवश्यक हैं। मुख्य वह भूमि है जिसमें मनुष्य वृद्धिको प्राप्त होता है और शारीरिक तथा मानसिक दोनों प्रकारकी उन्नति करता है। सुख वास्तवमें अनेक गुणोंकी जड़ है।

ऐसे सुखके लिए धनकी जरूरत नहीं। भोगविलासके लिए रुपयेकी जरूरत हुआ करती है, किंतु सुख और भोगविलासमें आकाश पाताल-का अन्तर है। वह घर सुखी है, जिसमें जरूरतकी तमाम चीजें पाई जाती हों और जिसका प्रबन्ध किसी स्वच्छ स्वस्थ मितव्ययी गृहिणीके

द्वारा होता हो—चाहे वह किसी साधारण पुरुषका ही क्यों न हो। प्रायः रुपयेके अभावसे इतना दुःख नहीं होता, जितना गृहप्रबंधकी अनभिज्ञतासे होता है।

यह निश्चय करके नहीं कहा जा सकता कि सुख किन किन चीजोंसे होता है। जिस चीजसे एकको सुख होता हो सम्भव है कि उसीसे दूसरेको दुःख होता हो। सुख मनुष्यों पर भी उतना ही निर्भर है जितना कि पदार्थों पर।

सुखी मनुष्य सरलस्वभावी और दयालु होते है। दयालुता सुखका एक आवश्यक अग है। क्षमा, शान्ति, सहानुभूति और प्रत्येक पदार्थको उपयोगमे लानेकी शक्ति उसके साधारण उपांग है। कहावत है कि जहॉं प्रेम है, वहॉंकी सूखी रोटी भी उस जगहके माल मलीदोंसे अच्छी है जहॉं अरति और द्वेष है। सुखी मनुष्य विचारशील, दूरदर्शी और मितव्ययी होते हैं। उनको न्याय और सत्यसे स्वभावतः प्रेम होता है। वे कदापि ऋण नहीं लेते। सदा आमदसे कम खर्च करते हैं और आगेके लिए कुछ बचाकर रख छोड़ते है। वे जरूरी चीजोंके लिए कंजूसी नहीं करते और समय आने पर पीछे नहीं हटते। वे जो कुछ करते है, वह किसी दिखलावेके लिए नहीं करते। वे सदा नियमपूर्वक कार्य करते हैं। सुखपूर्वक खाते पहनते हैं। न जाड़ेमें ठिठुरते हैं और न गर्मियोंमें पसीनोंसे सरावोर होते हैं। स्वास्थ्यरक्षाके लिए जिस चीजकी जरूरत होती है चाहे वह कितने ही मूल्यकी हो, उसे खरीद लेते हैं। परन्तु फिजूल चीजको चाहे वह सस्ती ही क्यों न हो भूलकर भी नहीं लेते। स्वास्थ्योपयोगी खाने पहननेमें उन्हे खर्च करते बुरा नहीं माळूम होता, किन्तु फिजूलकी नुमायशी चीजों पर एक पैसा खर्च करते हुए भी उनका दिल दुखता है।

घरका प्रबन्ध प्रायः स्त्रीके हाथमें होता है। वह घरकी मालिकिन होती है। घरका सुख उस पर अर्थात् उसके स्वभाव, उसके प्रबन्ध और उसके कार्य पर निर्भर होता है। अतएव इस बातकी बड़ी जरूरत है कि स्त्री पुरुषका आपसमे मेल हो। वे एक दूसरेके सहायक हों। एकके विचारों और कार्योंका दूसरा अनुमोदक और समर्थक हो। अकेला पुरुष कुछ नहीं कर सकता। वह भले ही मितव्ययी हो, परन्तु उसकी मितव्ययता कुछ भी कार्यकारी नहीं हो सकती, यदि उसकी स्त्री भी उसके समान मितव्ययी न हो। कहावत है कि कोई पुरुष उन्नति नहीं कर सकता, जब तक उसकी स्त्री उसको उन्नति नहीं करने देती।

यह कहनेकी जरूरत नहीं कि गृहप्रबन्ध कितना उपयोगी और लाभदायक है। इससे अनेक पुरुषोंको सुख मिलता है, पृथक् पृथक् व्यक्तिको लाभ होता है और परम्परासे समस्त जातिको लाभ पहुँचता है। सुखसम्पादनके लिए इससे वढकर और कोई उपाय ससारमें नहीं है। इसके विना समस्त नियम, उपनियम, दान और उदारता व्यर्थ और निष्फल है।

वह मनुष्य कितनी प्रसन्नतासे अपने काम पर जाता है और कितना आनन्दित होता हुआ वहाँसे शामको घर लौटता है, जिसके घरमें एक चतुर विदुषी और प्रवन्धिका स्त्री है—जो घरकी आमद-खर्चका ठीक ठीक हिसाब रखती है और प्रत्येक कार्यको देख भालकर करती है। ऐसी स्त्रीसे केवल उसी घरको लाभ नहीं पहुँचता, किन्तु मोहल्लेकी सब औरते उसका अनुकरण करने लगती है और उसको आदर्शस्वरूप समझती हैं। उसके बच्चोंकी आदतें ठीक उसीके सदृश होती हैं और उनका जीवन उसीके जीवनके आधार पर बनता है। क्योंकि कहनेसे

कर दिखाना जियादह असर रखता है। यद्यपि वह किसीसे कुछ नहीं कहती, तथापि उसका जीवन ऐसा नियमपूर्वक और शांतिसे बीतता है कि लोग उसे देखकर स्वयमेव उसका अनुकरण करने लगते हैं।

अतएव स्त्रीके लिए सबसे प्रथम और आवश्यक बात यह है कि वह अपने हाथों और अँगुलियोंको ठीक ठीक तौरसे काममें लाना सीखे। क्योंकि बहुतसे काम उसे इन्हींसे करना होते हैं। यह सर्व-साधारणको विदित है कि गृहसुखके लिए चतुर प्रबन्धिका स्त्रीकी कितनी आवश्यकता है। एक विद्वान्का कथन है कि स्त्रीकी आधी शिक्षा उसके हाथों द्वारा होती है। अर्थात् सीना पिरोना, खाना बनाना वगैरह जितने कार्य स्त्रियोंको करने होते हैं, वे प्रायः हाथोंसे ही होते हैं। इसके कहनेकी कोई जरूरत नहीं कि बुद्धि और मितव्ययताके साथ रहना आवश्यक है। स्त्रीको केवल हाथोंके काममें ही चतुर न होना चाहिए, किन्तु उसमें गृहप्रबन्धकी योग्यताका होना भी जरूरी है।

दूसरा गुण जो स्त्रियोंके लिए जरूरी है वह यह है कि प्रत्येक कार्यके करनेके लिए कोई विधि या व्यवस्था होनी चाहिए। स्त्रियाँ प्रायः इस गुणसे शून्य होती हैं। वे काम तो बहुत करती हैं किन्तु किसी नियम या आधार पर नहीं; जो करती हैं, अंधाधुंध करती है। वे समयकी भी कोई कदर नहीं करतीं। अमुक काम कितनी देरमें होना चाहिए, अमुक काम कब होना चाहिए, पहले कौन काम करना चाहिए, किस समय क्या करना चाहिए, इत्यादि बातोंका उन्हें कोई विचार नहीं होता। यद्यपि ये बड़े भारी दोष हैं, परन्तु ये सब शिक्षा और अभ्याससे दूर हो सकते हैं। प्रत्येक पिता और पतिका मुख्य कर्तव्य है कि जितनी जल्दी हो सके वह अपनी कन्या और स्त्रीमेंसे इन दोषोंको दूर कर दे।

घरके प्रबन्धके लिए व्यवस्थाकी बड़ी भारी जरूरत है। घर ही क्या ससारके सभी कार्योंके लिए व्यवस्थाकी जरूरत है। बिना व्यवस्थाके कोई काम ही नहीं चल सकता। कामका विभाग करनेसे, हरएक कामको ठीक समय पर करनेसे बहुतसा काम हो सकता है और बहुतसा समय बच सकता है। बिना व्यवस्थाके काम करनेसे बहुतसा समय नष्ट हो जाता है और काम भी होता नहीं दीखता—आलस कुछ भी नहीं करने देता। परन्तु जब प्रत्येक कार्यके करनेका नियम बँधा हो और समय नियत हो, तो वह कार्य स्वयमेव हो जाता है। समय उसको बिना प्रेरणाके स्वयं करा लेता है। रुपयेके जमा खर्च करनेमें भी नियमकी जरूरत है। नियम न होनेसे किसी किसीके हाथमेंसे तो रुपया इस तरह उड़ता है जैसे कपूर। हम पहले बतला चुके है कि पुरुप कितने फिजूलखर्च होते हैं। स्त्रियॉं भी कुछ कम फिजूलखर्च नहीं होतीं। सौ पीछे दस को भी यह मालूम नहीं होता कि हम अपनी आमदनीको किस तरह खर्च करें। हमको क्या चीज खरीदना चाहिए और किस चीजकी आशा हमें छोड़नी चाहिए, कौन चीज हमको मिल सकती है और कौनसी चीज हमारे लिए जरूरी है। हमारे देशकी स्त्रियोंको प्रायः इस बातका खयाल भी नहीं होता। चाहे किसीके स्वामीकी पचास रुपयेकी आमदनी हो, किसीके स्वामीकी सौकी और किसीके पतिकी दसकी, परन्तु उनकी स्त्रियॉं प्रायः यही चाहती है कि हम समान रूपसे रहे। यदि अमुक स्त्रीके पास सोनेके कडे हैं, अमुक स्त्रीके गलेमें जडाऊ गुलूबन्द है, तो मेरे पास भी वे ही चीजें होनी चाहिए। यदि अमुक स्त्रीने अपनी लड़कीके विवाहमें इतना दहेज दिया, तो मैं भी इतना ही दूँ। इस फिजूलखर्चीके कारण यह देश दिनों दिन निर्धन होता जाता है।

स्त्रीके लिए परिश्रम जरूरी चीज है। परिश्रम कामकी जान है। परन्तु बिना व्यवस्थाके परिश्रम कुछ कार्यकारी नहीं है। वह स्त्री जो निरा परिश्रम ही करती है, कभी कभी घबरा जाती है, परन्तु जो परिश्रमके साथ साथ व्यवस्थाका भी ध्यान रखती है और नियमानुसार चलती है वह बिना किसी घबराहटके शान्तिके साथ हरएक कामको कर लेती है।

गृहप्रबन्धके लिए परिश्रमके अतिरिक्त और भी कोई बातोंकी जरूरत है। दूरदर्शिताका होना बडा जरूरी है। यह गुण बड़े विचार और अनुभवसे प्राप्त होता है। इसका अर्थ ही बुद्धिमत्ता है। इसके द्वारा ही हमको योग्य अयोग्य, हेय उपादेयका ज्ञान होता है। क्या करना चाहिए और कैसे और कब करना चाहिए, ये बातें इसीसे मालूम होती हैं। यह प्रत्येक कार्यके लिए समय और व्यवस्था नियत कर देता है। यह गुण ज्ञान और अनुभवसे बढता है। इसका अभ्यास करना प्रत्येक गृहिणीका कर्तव्य है।

दूसरा गुण जो स्त्रीके लिए आवश्यक है वह यह है कि हरएक काम नियत समय पर किया जाय और एक मिनिट भी व्यर्थ न खोया जाय। यदि इस नियमकी ओर तनिक भी लक्ष्य दिया जाय, तो अनेक आपत्तियाँ जो देरमें खाने, देरमें सोने, देरमें उठने वगैरह असमय काम करनेसे होती हैं, बहुत जल्द दूर हो सकती हैं। जो स्त्री समयका आदर नहीं करती, अपने वचनोंको पूरा नहीं करती, वह सबकी दृष्टिमें गिर जाती है। उसके कारण उसके घरवालोंका बहुतसा समय नष्ट होता है। वह उनके कार्यों, उनके संकल्पों और उनके विचारोंमें बाधक होती है, उनके लिए दुःखका कारण बन जाती है। समय

कोई साधारण वस्तु नहीं है। समय अमूल्य वस्तु है। इसका आदर करना—इसको उपयोगमें लाना स्त्री मात्रका कर्तव्य है। यह सुख शांति और वृद्धिका मूल कारण है।

स्त्रीमें साहस और दृढ़प्रतिज्ञाकी भी अत्यन्त अवश्यकता है। जिस बातका निश्चय करो, जो नियम स्थिर करो और जो व्यवस्था स्थापित करो, उसपर सदा दृढ़ रहो। बिना कारणके कदापि उससे विमुख न होओ। चाहे शुरूमे कठिनाई मालूम हो, परन्तु इसकी कोई परवा न करो। धीरताके साथ उसे किये जाओ और शुद्ध अंतःकरणसे उसका पालन किये जाओ। एक दिन तुमको उसका फल अवश्य मिलेगा।

जीवनको आनंदमय बनानेके लिए और भी कई उपाय हैं। अपने स्वभावको वशमें करना यह भी एक महान् उपाय है। ऐसा करनेसे जितनी बुरी वासनायें है, वे सब नष्ट हो जायँगी और वासनाओंका नष्ट होना ही वास्तविक सुख है। व्यर्थ वासनाओंने ही हमको दुखी कर रक्खा है।

क्षमा, प्रफुल्लता और दयालुतासे हम जब चाहे तभी आनन्दित हो सकते हैं। इच्छामात्रकी देरी है। केवल इनसे हम अपने ही लिए नहीं, किन्तु हम अपने चारों ओर औरोंके लिए भी आनन्दवृष्टि कर सकते हैं। हम अपनेमें और अपने निकटवर्तियोंमें आनन्ददायक विचारोंका प्रकाश कर सकते हैं, अपनी इच्छाओंको शुद्ध कर सकते हैं और सभ्य भाषा और सभ्यताके नियमोंका प्रचार कर सकते हैं।

सभ्यता भी एक अमूल्य गुण है। जिस व्यक्तिमें इसका अभाव है, मानो उसमें मनुष्यत्वका भी अभाव है। सभ्यतासे ही मनुष्यकी पह-

चान है । यद्यपि और गुण भी आवश्यक हैं; परन्तु सभ्यताके बिना सब व्यर्थ है । असभ्य पुरुष चाहे कितना ही शुद्धहृदय और सदाचारी हो; परन्तु सभ्यताके अभावसे उसके सर्वगुण ढक जाते हैं । सभ्यतासे मनुष्य सर्वप्रिय और प्रसन्नचित्त रहता है। अतएव गृहिणीके लिए इस बातकी बड़ी आवश्यकता है कि वह सभ्यतासे विभूषित हो । उसके भाव, उसके शब्द और उसके कार्य सम्पूर्ण सभ्यतानुकूल हो । यह स्मरण रखना चाहिए कि सच्ची सभ्यता वही है जिसमें शिष्टाचार और प्रीतिपूर्ण व्यवहार हो ।

सभ्यतासे ही जेंटलमेन या सभ्य पुरुषकी पहचान होती है । जो सभ्यताका व्यवहार करता है, वह इस बातका प्रमाण देता है कि मैं उच्चकुलमें उत्पन्न हुआ हूँ । परन्तु इसका धन-सम्पदासे कुछ सम्बन्ध नहीं है । एक धनवान् निर्धनसे निर्धनके साथ भी इसका व्यवहार कर सकता है । इसमें कुछ खर्च नहीं होता। बिना कौड़ी-पैसा खरचे इसका व्यवहार किया जा सकता है। परन्तु बात यह है कि इसको सीखना पड़ता है। कुछ आदमी तो जन्महीसे सभ्य पैदा होते हैं । परन्तु अधिक आदमी इससे शून्य होते हैं। अतएव बाल्यावस्थामें ही बालकोंको इसका अभ्यास करा देना आवश्यक है और इसके लिए सबसे उत्तम उपाय यह है कि बालकके माता-पिता, भाई-बन्धु तथा गुरु स्वय उदाहरणस्वरूप बनकर उसे सिखलावें । इस विषयकी कोई किताब पढ़ानेकी आवश्यकता नहीं है । केवल नमूना बनकर उसको दिखा देनेकी जरूरत है ।

केवल धनिकोंके लिए ही सभ्यताका अभ्यास करना आवश्यक नहीं है; इसकी आवश्यकता मनुष्य मात्रके लिए है । हमको सदैव दूसरोंके साथ—चाहे वे किसी स्थिति और किसी जातिके मनुष्य हों—शिष्टतापूर्वक व्यवहार करना उचित है । इस विषयमें हमको फ्रान्स-

निवासियोसे शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए। वहाँके लोक एक दूसरेसें केवल मित्रताका ही व्यवहार नहीं करते—उनके भावोंका ही आदर सत्कार नहीं करते, किन्तु एक दूसरेकी चीजकी रक्षा करना भी अपना कर्त्तव्य समझते हैं। वहाँके बालकोंको प्रारम्भसे ही शिष्टताका अभ्यास कराया जाता है। क्या स्वदेशी, क्या विदेशी वे सबके साथ मित्रके समान व्यवहार करते हैं। भूलकर भी कभी किसीसे कठोर शब्द नहीं कहते। वहाँकी भूमि मानो सभ्यताकी खानि है। ऊँचेसे नीचे तक, बूढ़ेसे बच्चे तक प्रत्येक व्यक्तिमें सभ्यता कूट कूट कर भरी रहती है। उनके भाव, उनके वचन, उनके काम सम्पूर्ण सभ्य और परिष्कृत होते हैं। शोक है कि भारतवर्षमें इस गुणकी बहुत कमी हो गई है। जो देश कभी सभ्यशिरोमणि समझा जाता था, वहीं अब सभ्यताकी ओर बहुत काम ध्यान दिया जाता है। स्वयं माता पिता ही अपने बालकोंको असभ्यताका पाठ पढाया करते हैं। किसका आदर करना, किसके प्रति मैत्रीभाव रखना, किस असहाय मनुष्यकी रक्षा करना, किसके साथ मीठे शब्द बोलना, किसीका जी न दुखाना इन गुणोंकी प्रायः शिक्षा ही नहीं दी जाती। बालक प्रारम्भसे अपने घरोंमे अपने माता पिता भाई बन्धुओंको इन गुणोको विपरीत करते देखते हैं, इसलिए वे भी बड़े होकर उन्हींके अनुयायी हो जाते हैं। इसी कारण हमारी दिन पर दिन अवनति होती है। यदि हमको अपनी उन्नति अभीष्ट है, तो हमें चाहिए कि हम सभ्यताको ग्रहण करें और प्रारम्भसे ही अपनी सन्तानको इसका अभ्यास करावे।

सभ्यताका हम अपने जीवनमे समय समय पर उपयोग कर सकते हैं। खाते पीते, उठते बैठते, चलते फिरते, घर पर, स्कूलमें, आफिसमें अदालतमें, सर्वत्र प्रत्येक कार्यमें इसका व्यवहार हो सकता है। यदि

हमारे अन्तरंगमे दूसरोंको अपने प्रिय शब्दों और भावोंसे प्रसन्न करनेकी तनिक भी इच्छा हो, तो प्रत्येक कार्यमें सभ्यताका प्रयोग करनेकी सहजहीमे आदत हो जायगी। दूसरोंके साथ प्रेमपूर्वक व्यवहार करनेसे केवल उनको ही प्रसन्नता नही होती, किन्तु उससे दसगुणी अधिक प्रसन्नता स्वयं प्रेमपूर्वक व्यवहार करनेवालोंको होती है। यदि हम कोई जरासा भी दयालुता व सभ्यताका कार्य करते है, तो हमारे हृदयमें उसी समय एक प्रकारका आनन्द होता है। यदि कोई वृद्ध पुरुष आ जाता है और हम नम्रतासे खड़े होकर उसको आदर सत्कारसे स्थान देते हैं, तो यद्यपि यह देखनेमें एक तुच्छ कार्य है, किन्तु इससे हमारे हृदयमे स्वयमेव एक अपूर्व आनन्द उत्पन्न होता है। दूसरोंको भी हमारी सभ्यतासे आनन्द होता है और वे हमारा आदर करने लगते हैं।

केवल छोटोंको बड़ोंके साथ अथवा सेवकको स्वामीके साथ किंवा शिष्यको गुरुके साथ ही इस शिष्टताका व्यवहार न करना चाहिए, किन्तु मनुष्यमात्रको मनुष्यमात्रके साथ इसका अभ्यास करना चाहिए। साधारण स्थितिके लोगोंको तो—जिन्हे सदैव एक दूसरेसे काम पड़ता रहता है—इस पर पूरा ध्यान देना चाहिए। सभ्य मनुष्यका सब कोई आदर करेंगे और शनैः शनैः उसका अनुकरण करने लगेंगे। बेंजिमन फ्रेंकलिनका नाम प्रायः सबने सुना होगा। वे शुरूमें एक कारखानेमें एक साधारण पद पर नियत थे। उन्होंने उस अवस्थामें ही अपनी सभ्यतासे सम्पूर्ण कर्मचारियों और कार्यकर्त्ताओंको मुग्ध कर लिया था।

सभ्यता और शिष्टाचारके अतिरिक्त भाँतिभाँतिके आमोद—प्रमोदोंसे भी पवित्र और निष्पाप आनन्दकी प्राप्ति होती है। एक ही कामको कोई व्यक्ति सदा नहीं किये जा सकता। मनोविनोद विश्राम और

व्यायामके लिए भी कुछ समय अवश्य होना चाहिए । लोग प्रायः विनोद अथवा दिल-बहलावके समझनेमें भूल किया करते हैं । इसी कारण इस पर कोई ध्यान नहीं देता । वास्तवमें यदि विचारपूर्वक देखा जाय, तो यह बड़ा पवित्र और निष्पाप कर्म है । यह शिक्षाका एक मुख्य अंग है । इसके बिना शिक्षा अधूरी है । यह विचार कि यदि लड़का क्रिकेट, कबड्डी, फुटबाल वगैरह खेल रहा है तो वह समयको नष्ट कर रहा है, सर्वथा भ्रमयुक्त है । किसी प्रकारके भी दिल बहलावके कामसे—चाहे वह शारीरिक हो, चाहे मानसिक—समय नष्ट नहीं होता, किन्तु उसका यथेष्ट उपयोग होता है ।

यदि तुमको उत्तम स्वास्थ्यकी इच्छा है, यदि तुमको शारीरिक सुखकी अभिलाषा है, तो विश्राम और व्यायामको कभी मत छोड़ो । मानसिकश्रमके पश्चात् व्यायाम करना और व्यायामके पश्चात् विश्राम करना ही स्वास्थ्यका मूल मंत्र है । यदि तुम ऐसा न करोगे--विश्राम न लोगे और व्यायाम न करोगे, तो शारीरिक व्याधियाँ तुम पर चिपट जायँगी और मरते दम तक तुम्हारा पीछा न छोड़ेंगी । प्रायः देखा जाता है कि विद्यार्थीगण जब परीक्षा निकट आती है, तब रातदिन पढने लिखनेमें लगे रहते है—न विश्राम लेते हैं, न व्यायाम करते हैं और न रातको सोते ही हैं । उनको इन कामोंके लिए समय ही नहीं मिलता । इस विषयमें एक बड़े भारी अनुभवी विद्वान्का कथन है कि "जिनको विश्राम और व्यायामके लिए समय नहीं मिलता, उनको रोग और व्याधिके लिए बहुत जल्दी समय मिल जाता है ।"

श्रमके पश्चात् मनुष्यको स्वभावतः विश्राम करने और दिल बहलानेकी इच्छा होती है । मनुष्यमें यह इच्छा बड़ी बुद्धिमानिसे उत्पन्न की गई है । यह दब नहीं सकती, किसी न किसी रूपमें अवश्य प्रकट

हो जाती है। यदि तुम सुखोंसे लाभ उठानेके लिए समय नहीं देते, तो हानिकर कार्योंमें तुम्हारी प्रवृत्ति हो जायगी—वह रुक नहीं सकती। इसीकी पुष्टिमें एक अनुभवी विद्वानका कथन है कि यदि तुम बुराईको दूर करना चाहते हो, तो उसके स्थानमें कोई भलाईको प्रचलित करो।

आजकल शराबकी क्यों बढ़ती हो रही है? क्यों इसका दिन पर दिन प्रचार बढ़ता जा रहा है? इसका मूल कारण यही है कि मनुष्योंको अन्तरङ्गकी इच्छाकी पूर्तिके लिए कोई पवित्र और उपयोगी अवसर दिल बहलावका नहीं है। इसके कारण साधारण स्थितिके मनुष्योंकी वह अन्तरंग इच्छा प्रायः सफल नहीं होती और शराब वगैरहकी तरफ झुक जाती है। किसी समय जर्मनीमें शरावका प्रचार बहुत बढ़ गया था, परन्तु अब विशेषकर शिक्षा और संगीतशास्त्रके फैलावसे बिल्कुल घट गया है और वहाँके निवासी बड़े ही संयमी समझे जाने लगे हैं। भारतवर्षसे भी यदि शराबको दूर करना है, तो समस्त देशहितैषियोंको शिक्षादि उत्तम उपयोगी बातोंका प्रचार करना उचित है। मद्यनिवारिणी सभाओंको भी इस ओर ध्यान देना चाहिए। यद्यपि उनके उपदेशोंसे लोग नशा छोड़ते जाते हैं; परन्तु यदि पाँच छोड़ते हैं, तो सात ग्रहण भी करते जाते हैं। कमी कुछ नहीं होती। पीनेवालोंकी संख्या दिनपर दिन बढ़ती जाती है, दूकानें नित्य नई नई खुलती जाती हैं और ठेके भी बढ़ते जाते हैं। अतएव उनका कर्त्तव्य है कि वे शिक्षा संगीतादिका प्रचार करें, जिससे जनसाधारण अवकाश मिलने पर अपने समयको गाने बजाने और समाचारादि पढ़नेमें लगा सकें।

संगीतविद्याका परिणाम बड़ा ही कोमल और हृदयग्राही होता है। जनसाधारणके आचरण सुधारनेके लिए इस विद्याका अभ्यास करना

आवश्यक है। यह प्रत्येक गृहमें आनन्दका कारण है। इससे घरमें एक प्रकारका नया जीवन आजाता है। गोदका बालक भी इसकी मधुर तान और सुरसे फूल उठता है और गद्गद होकर हँसने लगता है। युद्धमें ऐसा बाजा बजता है कि मुर्देसे मुर्देके दिलमें भी जोश आ जाता है और वह एकदम कमर कसकर खड़ा हो जाता है। बाबा मत्तीके विषयमें लिखा है कि वे गायनविद्याके द्वारा ही लोगोंसे नशा छुड़ाया करते थे। उन्होंने समस्त आयर्लैंड देशमें सङ्गीतसभायें स्थापित की थीं। उनका विचार था कि जब हम लोगोंसे शराब लेते अर्थात् छुड़ाते हैं, तब उसके स्थानमें कोई उपयोगी मनोरंजक उत्तेजन भी उन्हें देना चाहिए। अतएव उन्होंने लोगोंको संगीतविद्या सिखलाई और स्थान स्थान पर सगीतकक्षायें खुलवाई। हमारा भी कर्त्तव्य है कि हम उनका अनुकरण करें और उनके समान संगीतविद्याका प्रचार करें। प्रत्येक पाठशालामें इसको शिक्षाक्रममें रक्खें। बालकोंको प्रारम्भसे ही इसका अभ्यास करावें। प्रत्येक घरमें इसकी ध्वनि सुनाई दे। जिस प्रकार जर्मननिवासी अपने अवकाशके समयको गाने बजानेमें व्यय करते हैं, उसी प्रकार हमको भी करना चाहिए। इससे सारा समय आनन्दमें ही व्यतीत होगा—क्षण मात्रको भी उदासी न होगी। परन्तु शोक है कि इससे भारतवासियोंकी रुचि हट गई है। आजकलके शिक्षितोंका विचार है कि संगीतविद्या हानिकर है। परन्तु यह उनकी सर्वथा भूल है। संगीतविद्या एक बहुत ही उत्तम विद्या है। पहले यहाँ भी इसका बहुत आदर और प्रचार था। राज-दरबारोंमें बड़े बड़े सगीतरत्न गाधर्व रहा करते थे। अकबरके दरबारमें तानसेन कितने प्रसिद्ध थे। इस विद्यामें निपुणता प्राप्त करना महान् प्रतिष्ठाका कारण समझा जाता था। स्त्रियोंको तो इसकी शिक्षा खासतौरसे दी जाती थी। आजकल इसका

एक तरहसे अभावसा हो गया है। इसी कारण जनसाधारण इसके ला-भोंसे अनभिज्ञ हो गये हैं। इसके सिवा कुछ मूर्खोंने इसके वास्तविक गुण न समझकर इसका दुरुपयोग कर रक्खा है, जिसका परिणाम अवश्य हानिकर हो रहा है। वास्तवमें यह सर्वश्रेष्ठ विद्या है। देवो द्वारा भी यह पूज्य है। हर्षका विषय है कि कुछ समयसे अब फिर यहाँ भी इसकी चर्चा चली है। भारतगौरव गायनाचार्य पंडित विष्णु दिगम्बरजी इस विषयमें पूर्णरूपसे उद्योग कर रहे हैं, तथा महिलारत्न सत्यवाला देवीजी स्त्रियोंमें इसका कुछ प्रकाश कर रही हैं। आशा है कि भारतवासी उनकी शिक्षासे यथेष्ट लाभ उठायेंगे।

इस आनन्दके अतिरिक्त प्रकृतिने हमारे चारों ओर ऐसे अनुपम सुन्दर पदार्थोंको उत्पन्न कर रक्खा है कि उनके देखने मात्रसे हमारे हृदयमें आल्हाद हो आता है। शोभा किसको प्यारी नहीं? सुन्दरता किसको मोहित नहीं कर लेती? हम जिधर दृष्टि पसार कर देखेंगे, सुन्दर सुगन्धित पुष्पोंके ढेरके ढेर मिलेंगे। साधारणसे साधारण फूलमें एक निराली ही छटा होगी। गुलाब कितना साधारण फूल है; परन्तु इसको सब कोई फूलोंमें सर्वश्रेष्ट कहते है। कवियोंने गुलाबके फूलको हँसता हुआ फूल कहा है। वास्तवमें है भी यह ऐसा ही। इसको देखते ही हृदय खिल उठता है। यह सुन्दरताकी साक्षात् मूर्ति है। इसी प्रकार और भी एकसे एक बढ़कर पुष्प है। प्रकृतिने सारी सुन्दरता इन्हींमें रख दी है। संसारमें इनसे अधिक सुन्दर शायद ही और कोई पदार्थ हो। यदि ये न होते, तो ससार सुन्दरतासे विहीन रहता। किसी साधारण फूलको ले लीजिए; जरा उसकी पत्तियों और पँखुड़ि-योको देखिए। कितने रंग हैं, कैसी सुगन्धि है और कैसी कोमलता है। एकको बागमेंसे तोड़कर कमरेमे ले आइए। जान पड़ेगा कि मानों आप

सूर्यकी एक किरणको उठा लाये हैं। उसे जरा किसी बीमारको दिखलाइए। देखते ही उसका उदास और अशान्त चित्त प्रसन्न हो जायगा। फूल क्या है मानों आनन्द-वृष्टिके बूँद है। मानों वे उद्यानके पहरेदार हैं और यह कहते मालूम होते है कि वहाँ चलो जहाँ हम रहते हैं— जहाँ हम फले-फूले हैं, हमें देखकर तुम्हारा हृदय प्रफुल्लित हो जायगा।

फूलोंसे जियादह पवित्र कौन होगा? वे नन्हें नन्हें निष्पाप बालकोंके सदृश हैं, पवित्रता और सत्यताके चित्र हैं और पवित्र, निष्कपटहृदय मनुष्योंके लिए आनन्दके द्वार हैं। जिसको फूलोंसे आनंद नहीं होता और बच्चोंकी बोली मीठी नहीं लगती, उसका हृदय ही शून्य है, वह जीवित अवस्थामे ही मानों मृतक है। राजासे रंक तक, बूढेसे बच्चे तक, कोई भी हो--जिसमें तनिक भी जीवन है--वह प्रत्येक फूलको देखकर अपने मनमें फूला नहीं समाता। प्रसिद्ध कवि वर्डसवर्थने लिखा है कि, "तुच्छसे तुच्छ फूल भी हमारे लिए शिक्षा और नीतिका भाण्डार है।"

फूल कोई बहुमूल्य पदार्थ नहीं। उसमें खर्च अधिक नहीं होता; परन्तु उससे जो आनन्द होता है, वह बहुत अधिक, अकथनीय है। उससे वायु शुद्ध होती है, स्थान सुन्दर मालूम होता है, आँखें ठंडी होती है और सूर्यका प्रकाश दुगुना हो जाता है। फूलोंसे कभी घृणा नहीं होती। वे सदा ही प्रसन्नताके कारण होते हैं। अतएव फूलोंको तुच्छ दृष्टिसे न देखो, उनका सदुपयोग करो। प्रकृतिने उनको तुम्हारे आनन्दके लिए उत्पन्न किया है, अतएव उनसे यथेष्ट लाभ उठाओ। इस विचारसे कि वे सस्ते हैं--उनमें कुछ खर्च नहीं होता, उनका दुरुपयोग मत करो। ससारमें ऐसे अनेक पदार्थ हैं जिनमें कुछ

खर्च नहीं होता, परन्तु ये बड़े उपयोगी और आवश्यक हैं। यदि प्रकृति हम पर दया करके उनको अधिकतासे उत्पन्न न करती तो हम लाखों रुपयोंमें भी उनका मिल जाना सस्ता समझते। प्रकृतिमें अनेक पदार्थ ऐसे सुन्दर और शोभायुक्त है कि उन्हें देखकर हम बहुत कुछ आनन्द प्राप्त कर सकते हैं। परन्तु दुःखके साथ लिखना पड़ता है कि हम उनसे आधा भी आनन्द प्राप्त नहीं करते। यद्यपि हमारे नेत्र खुले रहते हैं, परन्तु सच पूछो तो वे बन्दसे भी गिरे हुए हैं। हम जहाँ जाते है आँख मीच कर जाते हैं। सुन्दर पदार्थोंको भी नहीं देखते। हममें देखने और देखकर आनन्दित होनेकी मानों शक्ति ही नहीं है। यदि हम जरा भी आँख खोलकर देखें तो चारों तरफ आनन्ददायक पदार्थ दिखाई देंगे। संसारमें ही स्वर्गका आनन्द मिल जायगा। हममें प्रेम और ज्ञानकी बड़ी आवश्यकता है। इन्हींके अभावसे हमें आनन्दानुभव नहीं होता। नहीं तो प्रत्येक पदार्थ आनन्दसे परिपूर्ण है। साफ सुथरा मकान चाहे छोटा ही क्यों न हो, उसमे दो चार ऐसी खिड़कियाँ हो कि जिनमेंसे सूर्यकी किरणें पहुँच सकें—दस बीस नीति या उपदेशकी पुस्तकें, महापुरुषोंके जीवनचरित और देश-देशान्तरोंके इतिहास, इन सब आनन्ददायक पदार्थोंको प्रत्येक गृहस्थ आसानीसे इकट्ठा कर सकता है। ये ही उसके लिए हर्ष और आनन्दके कारण हो सकते है।

प्रकृतिकी सुन्दरतामें तो किसीको संशय नहीं, प्रत्येक विचारशील मनुष्य प्रकृति देवीका हृदयसे उपासक होता है। चित्रोंमें भी कुछ कम सुन्दरता नहीं होती। आजकल ज्ञान-विज्ञानके बलसे अनेक साधन ऐसे निकल आये हैं कि जिनके द्वारा भाँति भाँतिके चित्र सुलभतासे तैयार हो जाते है। ये चित्र कुछ कम सुन्दर नहीं होते। इनसे कुछ

कम शिक्षा नहीं मिलती। विचारशीलके लिए ये बडे उपयोगी और शिक्षाप्रद होते हैं। इन चित्रोंसे मकानोंको अवश्य सजाना चाहिए। इनको देखकर मन प्रफुल्लित हो जाता है और हृदय आनन्दसे भीग जाता है। किसी सज्जन महापुरुषका चित्र देखते ही हमे उसका तत्काल स्मरण हो आता है। मानों उसके गुणोकी मूर्ति बनकर हमारे ऑखोंके आगे फिरने लगती है। किसी वीर पुरुषका चित्र देखकर हममें वीरताका भाव पैदा हो जाता है। किसी त्यागी वैरागी महात्माका फोटू देखते ही हमारे परिणाम भी वैराग्यरूप हो जाते हैं। बच्चों पर चित्रोंका बड़ा प्रभाव पड़ता है। यदि उनको प्रारम्भसे वीर पुरुषोंके चित्र दिखलाये जायँ और उनके चरित सुनाये जायँ, तो वे वडे होकर अवश्य उनका अनुकरण करेंगे। यदि इसके विपरीत उनको कायर और निर्बल पुरुषोंके चित्र दिखलाये जायँ, तो वे वडे होकर वैसे ही कायर और निर्वल हुए विना न रहेंगे।

अतएव प्रत्येक घरमें विद्वान् वलवान् और सज्जनपुरुषोंके चित्र तथा प्रकृतिके सुन्दर दृश्योंके फोटू अवश्य होने चाहिए। ये हमारा चरित्र सुधारनेमें वहुत बड़ी सहायता देगे। उन्हें देखकर किसी बुरे कामके करनेका कभी साहस ही न होगा। यह जरूरी नहीं है कि चित्र बहुमूल्य हों; नहीं, केवल सुन्दर और उत्तम हों। ये दोनों गुण एक पैसेकी तसवीरमे भी पाये जाते हैं।

जीवन इसीप्रकार और भी अनेक उपायोंसे आनन्दपूर्ण बन सकता है। साराश यह है कि प्रत्येक पदार्थको उपयोगमे लाओ, किसीको भी तुच्छ न समझो। साधारणसे साधारण पदार्थ भी अत्यन्त उपयोगी और आवश्यक है। प्रकृतिकी हृदयसे उपासना करो। उसके सुन्दर, अनुपम दृश्योंको आँख खोलकर देखो। कृतिका भी यथेष्ट

आदर करो। प्रेम और प्रीतिका व्यवहार करो। ऐसा करनेसे तुमको भी आनन्द मिलेगा और दूसरोंको भी प्रसन्नता होगी। तुम अधम मनुष्योंकी श्रेणीसे निकलकर उच्चश्रेणी पर चढ़ जाओगे, उच्चतम परब्रह्म परमात्माके सदृश होनेकी भावना करने लगोगे, और अन्तमें संसारसे निकलकर मोक्षमें जा विराजोगे—जहाँ किसी भी प्रकारकी आकुलता नहीं, केवल उत्कृष्ट सुख और आनन्दकी परिपूर्णता है।
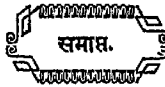
बहुमूल्य वचन।

(१)

If thou art rich, thou art poor,
For, like an ass whose back with ingots bows,
Thou bear'st thy heavy riches but a journey—
And death unloads thee—"

(Shakespeare.)

यदि तुम्हारे पास धन है, परन्तु तुम उसको अच्छी तरह खर्च करना नहीं जानते तो वह धन तुम्हारे सिर पर एक तरहका बोझा है जो मरते समय ही उतरेगा।

—शेक्सपियर।

(२)

I care not much for gold or land,
Give a mortgage here and there,
Some good bank stock-some note of hand,
Or trifling railway share;
I only ask that Fortune send,
A little more than I can spend.

(Oliver Wendell Holmes.)

चाहे जो मिले और चाहे जितना मिले, मुझे इसकी परवा नहीं। मैं केवल यह चाहता हूँ कि मुझे खर्चसे कुछ जियादह मिल जाया करे।

—ओलीवर वेंडल होलमेज।

(३)

Be thrifty, but not covetous; therefore give
Thy need, thine honor, and thy friend his due,
Never was seraper brave man, Get to live,
Then live, and use it, else it is not true

That thou hast gotton Surely use alone
Make money not a cotemptible

(George Herbet.)

मितव्ययी बनो, पर कजूस कभी मत बनो। अपनी आवश्यकताको पूरी करो, प्रतिष्ठाको सुरिक्षित रक्खो, मित्रोंके साथ भलाई करो, रुपया पैदा करो और उसका सदुपयोग करो। सदुपयोग ही रुपयेको कार्यकारी और उपयोगी बना देता है, नहीं तो रुपया बहुत घृणित और तुच्छ पदार्थ है।

—जार्ज हर्बर्ट।

(५)

To catch Dame Fortunes golden smile
Assiduous wait upon her,
And gather gear by every wile
That's justified by Honour,
Not for to hide it in hedge
Not for a train attendant.
But for the glorious privilege
Of being Independent.

(Robert Burns.)

रुपयेको ईमानदारीके साथ जिस तरह हो सके उत्तम उपायोंसे ही पैदा करो; परन्तु यह सदैव याद रक्खो कि वह रुपया जमीनमें गाड़नेके लिए अथवा बाहरी टीमटाममें फिजूल खर्च करनेके लिए नहीं है, वह है स्वतन्त्रतासे सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करनेके लिए।

—राबर्ट बर्न्स।

(६)

अर्थदूषणः कुवेरोऽपि भवति भिक्षाभाजनम्।
अतिव्ययोऽपात्रव्ययश्च भवत्यर्थदूषणम्॥

—नीतिवाक्यामृत।

अपार धनशाली कुवेर भी यदि आमदनीसे अधिक खर्च करे और अपात्रोंमें खर्च करे, तो एक दिन भिखारी हो जाय।

(७)

यस्य हस्ते धनं स जयति ।
धनहीन कलत्रेणापि परित्यज्यते किं पुनर्नान्यै. ॥

—नी० वा० ।

जिसके हाथमे धन है दुनियामें उसीकी जीत है। धनहीनको औरोंकी तो बात ही क्या उसकी स्त्री भी छोड़ देती है।

(८)

स सदैव दु खदु.स्थितो यो मूलधनमसंवर्द्धयन्ननुभवति ।

—नी० वा० ।

जो मूलधन या पूँजीको विना बढ़ाये हुए खाता है वह सदा ही दुखी रहता है—उसकी स्थिति कभी नहीं सुधरती।

*

कभी निराश मत होओ ।

श्रमके विना संसारमें कोई चीज पैदा नहीं हो सकती ।

जो अपनी सारी सामदनी खर्च कर डालता है, वह बहुत जल्दी भूखों मरने लगता है ।

'गया वक्त फिर हाथ आता नही ।'

श्रम, संयम और मितव्ययताका अभ्यास करो।

अगर तुम एक रुपया कमाते हो, तो उसमेंसे बारह आनेसे जियादह कभी खर्च मत करो।

ईश्वर उन्हींकी सहायता करता है, जो स्वयं अपनी सहायता करते हैं।

आजका काम कल पर मत छोड़ो ।

सत्यको कभी न छोड़ो। असत्यको मनवचनकायपूर्वक बिलकुल छोड़ दो।